# हड़ताल कल होगी



सोमदत्त बकोरी
को सप्रेम



झिल्लीदार परदे से छनकर भीतर पहुंचता हुआ बारीक प्रकाश। उसकी गिरफ्त में वह।

उसका उसी तरह अपने ही में सिमटे बैठे रह जाना और इस ख्याल में डूबा रहना कि उसका अपना कमरा कोई गुफा हो और उसके दरवाजे को चुन दिया गया हो, उसके सिर को बोझिल किए रहना। उसे लगता, खिड़की के शीशों से भीतर आता हुआ सूरज का वह उजाला, जिसका कोई रंग नहीं था, कमरे में डबाडब भरकर जैसे उफनने वाला हो··· अगर ऐसा भी हो जाता तो शायद रोशनी की उस धारा के साथ वह इस चारदीवारी के बाहर हो जाता; पर ऐसा होता तब तो···उसकी आंखों के सामने वह रोशनी एक काली रोशनी थी···वह उसके अपने भीतर की स्याही रही होगी जिसमें बिन रंग वाली वह रोशनी काली हो चली थी। उसने कहीं पढ़ा होगा कि अकुलाहट का रंग भी काला होता है···तो फिर यह भी तो हो सकता है कि उसकी अकुलाहट में ही रोशनी उफनकर काली हो गई हो···। उस रोशनी के काले झाग छनकते हों। वह बैठा रहा···उसकी अपनी सांसें भी फेनिल होती रहीं और···और बाहर से आनेवाली आवाजों के सहारे वह उन बाहरी दृश्यों का काल्पनिक निर्माण करता रहा :

वाहर—गली में वच्चों का कोलाहल।

आजाद मुल्क के वच्चों को छुट्टी थी।

इंग्लैंड की महारानी के जन्मदिन के कारण।

अभी कुछ ही दिन पहले की तो वात है। नये साल के अवसर पर आजाद मुल्क की महारानी ने अपने फरमावरदार सेवकों को उपाधियों से सम्मानित किया था। आजाद देश न अपनी स्वामिनी को भूलना चाह रहा था और न ही स्वामिनी अपनी आजाद प्रजा को। घनिष्ठता का वंधन वना हुआ था।

वच्चों का आपस में खेलते हुए झगड़ जाना, फिर खेल शुरू कर देना, फिर झगड़ जाना, फिर घुलमिल जाना···इस खयाल से उसकी अकुलाहट और भी वढ़ जाती···आखिर वड़े लोग भी इसी तरह क्यों नहीं जी लेते? फिर वड़े लोगों को वच्चा और वच्चों को वड़ा समझ लेने के अलावा उसके पास कोई दूसरा चारा न वचता।

सिगरेट के दो-तीन कशों के वाद उसे राखदान के हवाले करके वह कमरे के चारों ओर देखने लग जाता। एक सूराख···कहीं एक दरार मिल जाए और वह उससे वाहर हो जाए।···पर वाहर? सूराखों और दरारों से संघर्ष करके निकलने के वाद भी अगर सामने वही गली मिले जो दरवाजे से निकलने पर मिलती हो तो फिर उसे अपना कमरा ही पसंद था। इस तरह का खयाल उसे गोलियां लेने के वाद ही आता था।

वह वैठा रहा। आंखें वंद कर लीं। सामने के काले उजाले के भय से अपने को वचाने के लिए उसने एक मध्यम रोशनी की कल्पना की··· उसे अपने से लपेटकर वह सोना चाहता था, पर तभी खयाल आया··· मंड्रेक्स की दो गोलियां···दो? दो नहीं, तीन गोलियां···नींद की तीन गोलियां तो वह ले चुका था···तीन घंटे···इससे भी ज्यादा घंटे हो चुके थे।

उसकी नींद अव भी दूर थी।

वहुत सारी चीजें उससे दूर थीं।···वह चीजों से दूर था···मित्रों से तो दूर नहीं था। उन लोगों का आना-जाना तो होता ही रहता था।

अखबार और टेलीविजन भी कई चीजों को उसके पास ला ही देते थे। फिर भी एक लंबे दुराव की ऊब उसके इर्द-गिर्द मंडराती रहती।

दो दिन पहले अखबार में पढ़ चुका था : 'गावों में तीन नई सभाएं बनी थीं—मजदूरों की विराट सभा तीन हिस्सों में बंट गई थी। कोई मुक्ति का दावा करने वाली सभा थी जिसने गांव के मंदिर को जंजीर में बांध लिया था। दीवाली के लिए मंदिर में वर्ग और जाति विशेष के लोगों को ही आमंत्रण था। हैरत की बात तो यह थी कि वह काली दीवाली, दीवाली के तीन दिन बाद मनाई गई थी।'

और अभी कल ही वह टेलीविजन पर एक मंत्री महोदय को वकील की सी आवाज में चिल्लाते सुनता रह गया था।

उसकी चोट भर आई थी पर डाक्टर का कहना था कि उसे अभी पंद्रह दिन चारपाई पर रहना है। उसे डाक्टर की परवाह नहीं थी पर अपनी मां की थी जिसने यह कह दिया था कि पंद्रह दिन से पहले अगर वह घर से बाहर निकला तो वह घर छोड़कर चली जाएगी। वह जानता था कि उसकी मां कहीं नहीं जा सकती। लेकिन अपनी मां को यह विश्वास दिला देना चाहता था कि वह चाहे तो अपने बेटे से मुड़िया पर्वत भी तुड़वा सकती है। और इसी बात का खयाल उसे और सभी बातों से ज्यादा था।

दूसरे कमरे से मां की आवाज रह-रहकर आ जाती थी—और जब भी आती थी, अमित की तंद्रा टूट जाती। घंटा पहले उसकी मां भीतर आई थी यह बताने कि किशोर और सुरेन के फोन आए थे। वह उसके पास बैठ गई थी। राधिका को आवाज देकर अपना नाश्ता अमित के कमरे में मंगवा लिया था। जब तक उसकी मां कमरे में थी, सूरज की रोशनी के चकाचौंध कर देने वाले उजाले की गिरफ्त से उसने अपने को मुक्त रखा था।

फिर मां का चला जाना, उसका उजाले की गिरफ्त में आ जाना और उससे मुक्त होने की कसमकश का जारी रहना उसके तनाव को और भी बढ़ा गया था। सभी ताकत के साथ आंखों को किचकिचाकर मूंद लेता और तब एक अलग रोशनी में कुछ दृश्य झिलमिला उठते फिर

किसी एक कड़ी के टूट जाने से सभी कुछ तितर-वितर होकर रह जाते। वह अपनी आंखों को खोल लेता और असमंजस में पड़ जाता कि अपनी आंखों को कहां टिकाए। कमरे के वे ही घिसे-पिटे इने-गिने पुराने दृश्य… वे ही दीवारें…वे ही सामान…वे ही चीजें…।

और उन्हीं चीजों के बीच दीवार के वे चित्र। उन चित्रों का हिलना …अमित के अपने हृदय के स्पंदनों के साथ चित्रों की उन धड़कनों का मिलकर घड़ी के टिक-टिक की तरह हो जाना…और…। चार दिन की हड़ताल के बाद वहां का मालिक मजदूरों के सामने आया था। गोरे मालिक का वह तमतमाया हुआ चेहरा एक बार फिर पूरे माहौल को लाल रंग का कर गया—कोई पच्चीस मजदूर थे जो उस रंग के कारण और भी झांवर पड़ गए थे। सभीके पार्श्व में ईख का कारखाना। कारखाने की चिमनी थी…चिमनी का धुआं था…अमित की आंखें उस चित्र पर टिकी रहतीं और चिमनी का धुआं हिलने लगता, ऊपर को उठने लगता …और कमरे में फैलते हुए धुएं के धुंधलके में अमित अपने को बेतहाशा दौड़ता हुआ पाने लगता।…अधिक रोशनी वाली तस्वीर की तरह वह दृश्य धुंधला होता…। और, चकाचौंध रोशनी के सामने का अंधेरा, उसी तरह का एक छलने वाला उजाला था देश के मजदूरों के सामने। उसी तरह की चकाचौंध रोशनी में वे अपने हिस्से के प्रकाश को मुट्ठी में कसते जाने के प्रयास में अंधेरे को मुट्ठी में संजोए हुए थे। अमित सोच उठा—मजदूर की इस हालत का कारण तो ये जमींदार भी हैं, यह सरकार भी है और काफी हद तक मजदूर खुद भी हैं, लेकिन मजदूरों को इतना भोले-भाले बनाए रखने की यह साजिश किसकी थी?

अपनी कार-दुर्घटना से तीन महीने पहले अमित दक्षिण प्रांत के उस गांव से लौट रहा था जहां मजदूरों को विभाजित करने के लिए एक दूसरे यूनियन की बात चल रही थी। ओलिव्या की उस बस्ती का वह धुआंधार वातावरण…कोलाहल…आग की लपटें…चीत्कार और…।

टुकड़े-टुकड़े जोड़कर भी अमित उस दिन के उस दृश्य को सही और संपूर्ण रूप में अपने सामने नहीं ला पाता। बीच-बीच में कड़ियों की कमी रह जाती…उस घटना को बार-बार सजीव करने का प्रयास करके भी

वह कभी भी उसे पूरा नहीं कर पाया। झिलमिल रूप से उसे जो कुछ याद था, वह बस इतना ही था···आग की लपटों में कई झोपड़िया ध्वस्त हो रही थीं···उन लपटों के बीच से उसने तीन गायों की रस्सिया काटी थीं···दो मेमनों को बाहर किया था···एक सात वर्षीय लड़की की जान बचाई थी···खुद आग की लपटों में आते-आते बचा था और···और फिर वह अंधेरा।

दूसरे ही दिन उसने उन पीड़ित लोगों के लिए पैसे उगाहने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर आसपास के गावों और कोठियों में लोगों को तहसील के लिए इकट्ठा किया था। तीन दिन बाद सात हजार की राशि के बीच पाच सौ रुपये के एक अलग बडल के साथ उसे फ्रेंच में लिखा एक छोटा-सा अनाम पर्चा मिला था। और···फिर वही अधिक तेज रोशनी के सामने खड़े व्यक्ति के सामने का अंधेरा···।

उसके सामने अभी और पद्रह दिन थे। अपनी मां के सामने उसका यह बहाना भी नहीं चला कि दफ्तर में काम पिछड़ा चला जा रहा था। उसकी मां उसकी दोस्त भी थीं और उसी दोस्त के स्वर में वह कह जातीं, 'तुम पागल हो अमित।'

अमित अपनी मा की ओर एकटक देखने लगता।

'तुम सचमुच ही पागल हो। इतना पढ़-लिखकर भी तुमने अच्छी-खासी नौकरी छोड़ दी। यूनियन के चक्कर में पड़ गए हो, इसके बाद *अब तुम्हारा यह दूसरा पागलपन ! यह कहा ले जाकर छोड़ेगा तुम्हें ?* तुम तो पढ़े-लिखे हो—इतना भी नहीं समझते कि यह असभव है ?'

बस, यही एक अवसर होता था जब अपनी मा की उपस्थिति में भी अमित के सामने का उजाला स्याही में डूबा हुआ होता। मा बोली थी, 'इसपर अच्छी तरह सोच लेना।'

और वह सोचता रह गया था। उसकी मा की आवाजें उसके कानों में बजती रह गई थीं। उसके अपने भीतर नींद की गोलिया पिघलकर पानी हो गई थीं। वह एकटक छत के फानूस के नकली हीरों को गिनता रह गया था। अब वे त्रिकोण टुकड़े काच की गोलियों की तरह प्रतीत होकर उसकी आखों में धंसी चली आतीं फिर भी उसकी पलकें···

झपकतीं।

सामने के तख़्ते पर की पुस्तकों के बीच उसकी आंखें टिकतीं···च्हे गेवारा···कोहेन बेंडित···फ्रांज फेनन···एलरिज क्लीवर···और उन सभी के बीच से एकदम थके-मांदे से मन बहलाने के लिए वह जॉर्ज सिमेनो या स्टेनले गार्डनर की पुस्तक हाथ में लेकर बैठ जाता। तीन-चार पृष्ठ के बाद उसे भी बंद करके चारपाई पर फेंक देता। एकाग्रता नहीं बन पाती। ऊपर की पंक्तियों को नीचे की पंक्तियों से जोड़ नहीं पाता। कुछ समझ में नहीं आता। उसकी ऐसी ही दशा कई बार परीक्षा की तैयारी के दौरान भी हुई थी। मस्तिष्क का वही खालीपन—वही शून्यता! वही सिरदर्द।

अमित के इस्तीफे की बात सुनकर उसका बाप सिर धुनकर रह गया था। अपनी पत्नी पर यह कहता हुआ बरस पड़ा था कि उसीका बिगाड़ा हुआ वह इस तरह उफनता फिर रहा था :

'तुम जानती हो, आज बाजार में नौकरी का क्या भाव है? लाले पड़े हैं उसके। और ऐसे समय में तुम्हारा बेटा अच्छी-खासी नौकरी को लात मारकर अकड़ता फिर रहा है। उस प्रतिष्ठित काम को छोड़कर अब क्या करने का इरादा है? दो काम अच्छे पड़ेंगे उसके लिए—या तो प्रधानमंत्री की जगह ले ले या सिर पर भाजी की टोकरी लेकर गलियों में निकल पड़े। उसे क्या मालूम, यह नौकरी मैंने उसे कैसे दिलवाई थी।'

अमित जब इंटरव्यू के लिए जाने लगा था, उस समय उसके बाप ने सीढ़ियां उतरते हुए उसे रोक लिया था, 'इस तरह जाओगे इंटरव्यू में? बिना कोट, बिना टाई?'

'बोर्ड के सदस्यों को तो पता है ही कि मैं आपका बेटा हूं।'

'ढंग से कपड़े पहनकर जाओ। बोर्ड के अध्यक्ष को मैंने यह बताया है कि तुम बड़े स्मार्ट हो।'

अमित हंसता हुआ उसी तरह चला गया था।

नौकरी मिल जाने के बाद अमित ने अपने बाप को सुनाते हुए मां से कहा था, 'मैंने तो पहले ही कहा था मां कि पापा के एक फोन के बाद

तो इंटरव्यू करने वालों की नजर मेरी गरदन तक पहुंचेगी ही नहीं।
शाहक तीस-चालीस रुपये की टाई खरीदती पड़ी थी।'

उसके इस्तीफे के दूसरे दिन उसकी मां बोली थी, 'इसी सरकारी नौकरी के कारण आज तुम्हारे बाप की इतनी इज्जत है...।'

और अमित अपने मस्तिष्क के भीतर पूछ बैठा था—कैसी इज्जत? प्रमोशन की चाह रखनेवाले दो-चार कामगारों की ओर से दिखाई जाने वाली वह इज्जत? इसके साथ ही अमित को वे दिन याद आ गए थे जब उसके बाप को भी प्रमोशन की चाह थी और उससे सम्बद्ध लोगों को उसने भी इज्जत की थी। उन समय उसकी मा बरस पड़ी थी, 'मैं तुम्हारे मित्रों के आने-जाने पर आपत्ति नहीं करती, लेकिन...' इससे आगे की बातें अमित की समझ में नहीं आई थीं।

उसके बाप ने लोगों के चक्कर काटे थे। पार्टियां दी थीं। खुशामदें की थीं। इतनी सक्रियता फिर उसने अपने बाप में कभी नहीं पाई। उससे पहले भी नहीं पाई थी। उसके बाप के जीवन की वे ऐसी घड़ियां थीं जब उसके सामने दो-चार व्यक्तियों को खुश रखने के सिवाय कोई दूसरा काम ही नहीं था। खरगोश खरीदकर यह कहते हुए भेंट करना कि उसने शिकार किया था। अमित ने बहुत कुछ देखा था और देखकर दुखी था।

अमित अपने त्यागपत्र के बाद खुश था।

उसकी उस खुशी को उसकी मा उसकी उम्र की खुमारी समझ दुखी थी।

उसका बाप क्रोधित था, बेहद क्रोधित। उसका यह क्रोध उस समय सीमा पार कर गया था जब अमित यूनियन से जा मिला था। वह अपनी पत्नी पर झुंझला उठा था, 'नेतागीरी के और भी तो तरीके होते हैं।'

अमित अपनी मां से बोला था, 'मेरे सामने काम करने के लिए तीस-चालीस साल हैं मां—चालीस साल एक लंबा समय होता है। इतने लंबे समय के लिए मैं वह काम नहीं कर सकता जो मुझे पसंद नहीं। उसको करते रहने का मतलब होगा, अपनी आत्मा को गिरवी रखकर सांसों को चलाना। यह मुझसे नहीं हो सकता इसीलिए मुझे अपनी पसंद के काम की

ओर झुकना पड़ा। सरलता के साथ अच्छा पैसा पा लेने से काम की प्रतिष्ठा कैसे बन जाती है, इसको समझने की कोशिश मैंने उस घड़ी से की थी जब से वह काम शुरू किया था। आज भी नहीं समझ पाया।'

'अपने बाप के अनुभवों और सुझावों का भी तो खयाल रखा होता?'

'मां, पापा के अनुभव और उनके सुझाव उनके अपने सत्य हैं। एक आदमी का सत्य दूसरे आदमी का भी सत्य हो, यह जरूरी नहीं। मेरा सत्य तो वह होगा जो मुझे बोझ न लगे।'

उसे अपने बाप पर उस दिन तरस आया था जब उसने उसे मंत्री के लिए भाषण लिखते पाया था। एक ही विषय पर उसे दो भाषण लिखने पड़े थे—एक मजदूरों की ओर से आयोजित स्वागत समारोह में पढ़ने के लिए और दूसरा, रात को जमींदारों की पार्टी में पढ़ने के लिए···

अमित ने तखत से पुस्तक उठा ली। उसे उलट-पलटकर रख दिया। दूसरी उठा ली···मजदूर और उसकी हस्ती···पूंजीपति और उसकी साजिशें···नव साम्राज्यवाद और तीसरी दुनिया···अविकसित देशों को आर्थिक सहयोग और उसकी सच्चाई···क्रांति का गर्भपात। उसका बिस्तर पुस्तकों से भर गया। जिस पुस्तक को उसने पढ़ना शुरू किया, वह थी वाल्ट डिस्ने कृत 'मिकी माउस' की कहानी।

फिर धीरे-धीरे रोशनी लुप्त हो गई और वही अंधेरा···पहली दुनिया···दूसरी दुनिया···तीसरी दुनिया···पूंजीपतियों की दुनिया···साम्यवादियों की दुनिया···अविकसित देशों की दुनिया···और अब चौथी दुनिया···

चकाचौंध रोशनी से छला जाना, वह अंधेरा, और नींद की गोलियां···

## २

शाम को गली के बच्चे कहीं और खेलने चले जाते थे। उनके कोलाहल की जगह फेरीवालों की ऊंची आवाज होती। गिरजाघर के घंटे

होते—मस्जिद से आती अजान और अगल-बगल के घरों से रेडियो संगीत के नाम वही जेहन के भीतर झनझनाहट पैदा कर देने वाली आवाजें···आवाजें···आ···आ···आ···वा···वा···वा···वा···जें ···जें···जें···जे···जें !!

किशोर अखबारों के साथ पहुंचता। उन्हें पढ़ते हुए अमित उन विषयों पर किशोर से बातें भी करता जाता। अमित की टिप्पणियां सुनने का धैर्य किशोर के पास अधिक समय का नहीं होता। उसे ऊब गया जान अमित अखबारों को एक ओर रख विषय बदल देता फिर दोनों घंटों बातें करते रह जाते। दोनों के बीच का चल पड़ा यह विषय किसी दूसरे के आने पर ही बदलता।

अमित से बातें करते हुए किशोर मन ही मन यही सोचता रहता कि इस जीव की कभी तस्वीर बनानी पड़ गई तो उसके लिए रेखाओं और रंगों के निर्धारित मूल्य जाते रहेंगे। अमित का अध्ययन करते-करते किशोर को अपनी आखें और अपना मस्तिष्क कैमरे की उस लेन्स की तरह प्रतीत होने लगते जिसपर धूल की मोटी परत आ गई हो। अमित के चेहरे पर कोई विशेष प्रतिक्रिया कभी नहीं उभरती थी···न खुशी की, न उदासी की। और जब इस प्रश्न के साथ कि क्या यह आदमी भीतर से भी इतना ही सपाट हो सकता है, किशोर उसके भीतर झांकने की कोशिश करता तो उसे अपनी कला के अधूरेपन का एहसास होने लगता।

अखबारों में कोई विशेष बात नहीं थी। थकी हुई आखें एक शीर्षक से दूसरे शीर्षक पर फिसलती गईं :

विदेश यात्रा से लौटे मंत्री की झोली में विकास-कार्यों के लिए पंद्रह करोड़ रुपये।

विधानसभा के एक सदस्य ने सरकार को धमकी दी है कि अगर उसे मंत्री का पद नहीं मिला तो वह इस्तीफा दे देगा। उस पद का वह अकेला हकदार था क्योंकि इससे पहले उस पद पर जो मंत्री था, वह उसी की जाति का था।

हवाई जहाज की हाईजैकिंग···आंटेब्बे में इजराइली सफलता··· प्रेटोरिया में अश्वेतों का विद्रोह···हानोई···विश्व मंडी में चीनी के भाव की आंखमिचौली।

वेकार युवक की नगरपालिका की ऊंची इमारत से कूदकर आत्म-हत्या की कोशिश धमकी···(कोष्टक)अमित का अपना था। बाजार से तेल और चावल गायव (गोदाम में भाव के वढ़ने तक सुरक्षित)।···वन्दरगाह के मजदूरों की हड़ताल का गर्भपात।···विधानसभा के दो सदस्यों की दल-वदली (मंत्री-पद के लिए)···पुलिस धावा के वाद एक प्रतिष्ठित घर से सात नाविकों के साथ दस वेश्याओं की गिरफ्तारी।···वाकी विज्ञापनों पर विज्ञापन थे।···व्रिटिश चाकलेट, व्रिटिश कपड़े, फ्रांसीसी जूते, फ्रांसीसी परफ्यूम, रूसी वोडका, चीनी वरतनें, अमरीकी जीन्स, दक्षिण अफ्रीकी फुडस्टफ, जापानी कारें, जापानी टेलीविजन, जापानी फ्रिज, जापानी वाशिंग मशीन, जापानी ट्रांसिस्टर, जापानी कैमरे, जापानी घड़ियां। हर सौ रुपये से ऊपर के माल खरीदने वाले को हजारों रुपये इनाम पाने के अवसर।

मारीशस स्टेट कमशियल वेंक की ओर से महत्वपूर्ण व्याज़ की व्यवस्था और···

'इस देश में व्यापार राज है।'

'इसीलिए कहता हूं कि यूनियन के चक्कर से वाज आकर कोई दुकान खोल वैठो। तुम्हारे लिए साइनवोर्ड मैं वहुत प्यारा तैयार कर दूंगा।'

'यार, यह देश कहां जा रहा है?'

'क्यों? तुम्हें दिशा गलत लग रही है क्या?'

'किसी तरह दो पैसे अधिक पाकर आदमी सीधे दुकान ही को दौड़ जाता है। इन दुकानदारों की तो जैसे सातों दिन फसल ही होती है।'

इसके वाद किसीने वात नहीं की। दोनों जैसे देश की किसी वहुत वड़ी समस्या पर सोचते रहे।

फिर कोई पंद्रह मिनट वाद···अमित ने तीनों अखवारों को सामने की छोटी मेज पर रखकर किशोर की ओर देखा, 'कल टेलीविजन के पानोरामा में किसी फ्रांसीसी कलाकार का इण्टरव्यू चल रहा था। मुझे

उसकी पेंटिंग्स कोई खास नहीं लगीं।'

किशोर ने बोझिल नजर से अमित की ओर देखा और कड़वाहट-भरे स्वर में बोला, 'पेंटिंग्स खास नहीं होतीं तो हमारी सरकार अपने दफ्तरों के लिए उसके पंद्रह चित्र थोड़े ही खरीदती ?'

'उसके पंद्रह चित्र खरीदे गए ?'

'पच्चीस हजार रुपये में।'

'तुमने भी तो उन लोगों से पत्र-व्यवहार किया था।'

'किया तो था।'

'उत्तर क्या रहा ?'

'उत्तर थोड़े ही मिला।'

'घर की मुर्गी साग बराबर।'

दोनों चुप रहे।

अमित अपने को स्थिति का गुनहगार महसूस करने लगा था। किशोर जब अपनी प्रदर्शनी की तैयारी में लगा हुआ था, उस समय अमित ने एक बार नहीं, कई बार कहा था कि ये चित्र तो हाथों-हाथ बिक जाएंगे।

किशोर हर बार पूछता रह गया था, 'अपने लोगों के बीच ?'

'तुम्हारा सिनिसिजम अभी तक खत्म नहीं हुआ ?' किशोर ने कोई उत्तर नहीं दिया। अमित उसे देखता रहा। घर का आटा गीला करके किशोर ने पेंटिंग्स के सामान खरीदे थे। अमित ने उसे ऐसा करने दिया था क्योंकि उसको विश्वास था कि इस प्रदर्शनी के बाद किशोर अपने को संतुलित कर पाएगा। पचहत्तर तैलचित्र थे उसके। आधे के बिक जाने पर भी उसकी स्थिति में परिवर्तन आ जाने की पूरी संभावना थी। अमित ने हमेशा यही चाहा था कि किशोर को अपने उस लंबे परिश्रम का अच्छा फल मिले। उसने कई लोगों से अनुरोध किया था कि वे किशोर के भीतर की प्रतिभा को विकसित होने का अवसर दें। वह उसके लिए रियायत नहीं चाहता था। कला पारखी न होते हुए भी उसे यकीन था कि किशोर की कला में दम है।

पांच दिन की उस प्रदर्शनी में केवल चार चित्र खरीदे गए थे। वे सात सौ रुपये पेंटिंग्स के सामान की लागत से भी कम थे।

प्रदर्शनी के उद्घाटन के दूसरे दिन बाद एक्सप्रेस के कला संपादक से बातें करते हुए अमित ने पूछा था, 'किशोर के चित्रों के बारे में तुम्हारा क्या खयाल है ?'

'से मेरवेये ! इल आ जी जेनी से गारसों ला ।'

अमित भी यह मानता था कि किशोर के चित्र बहुत सुन्दर थे और वह प्रतिभाशाली था। फिर तो अमित बहुत सारे प्रश्न अपने-आपसे करता रह गया था, 'कला की परख हमारे अपने लोगों को नहीं आती क्या ? किशोर अगर गोरा होता तो क्या उसकी कला इसी तरह अर्थहीन रह जाती ? इसमें दोष किसका था ? जन्म के संयोग का या सामाजिक मनोवृत्ति का ?'

किशोर का यह कहना कहां तक अर्थ रखता था कि जिस तरह सूर्य सभी फूलों को रंग देता है, उसी तरह कला जीवन को रंगती है ? रंगने वाले के अपने निजी जीवन में कहां था वह रंग ? उसकी कला उसके अपने जीवन को रंगने में क्यों चुक गई थी ?

किशोर कई बार हंसकर कह चुका था, 'कला का तो यही तकाजा होता है कि कलाकार अपना सबसे महत्वपूर्ण क्षण अपने समय के हवाले कर दे।' और फिर एकांत में वह खुद अपने से प्रश्न कर उठता, 'तो क्या बदले में समय कलाकार को कुछ न दे ?'

एक किशोर दूसरे किशोर से कहता, 'आदान-प्रदान तो व्यवसाय में होता है।'

'तो फिर कला में क्या होता है ?'

किशोर किशोर को जवाब नहीं दे पाता ।

उसी शाम फ्रेंच पत्रों में किशोर की प्रदर्शनी का बहुत अच्छा विवरण आया था। अमित उन सुन्दर वाक्यों से जितना खुश हुआ था, उतना ही झुंझला उठा था।

'क्या करेगा किशोर इन लंबेचौड़े वाक्यों का ? और कुछ न करके इन शब्दों से पेट ही भर लेता। सराहना करने वालों ने अगर चित्र नहीं खरीदे तो उसका अलग ही कारण था...'

डाक्टर आया। अमित को आखिरी सुई देकर दस मिनट साथ रहा फिर चला गया। मल्टीविटामिंस की कुछ गोलियों के साथ-साथ फजिविक्स की छोटी शीशी भी छोड़ गया था। जाते-जाते उसने कहा था, 'मैंने सट्रोनेक्जील का इंजेक्शन दे दिया है। कल वाली ब्लीडिंग अब नहीं होगी। यह फजिविक्स की गोलियां नसों की पुष्टि के लिए हैं। जब तक नसों की कमजोरी मिटती नहीं, तुम्हें तनाव से बचना होगा।'

डाक्टर के चले जाने के बाद अमित फिर से चित्रों और प्रदर्शनी की चर्चा न कर बैठे इसलिए किशोर ने अमित से पूछा, 'चीनी उद्योग के तुम्हारे मजदूरों को महंगाई भत्ता अभी तक नहीं मिला है। कल के अखबार में इसके लिए काफी स्याही बहाई गई थी।'

'इसी बात के लिए सुरेन सभी कागजातों के साथ पहुंचनेवाला है... खैर, इसे छोड़ो, तुम यह बताओ कि इस निराशा के बाद तुम्हारी पेंटिंग्स...'

'उसमें शिथिलता क्यों आने लगी? अभी अपनी सांसों की रफ्तार को बनाए रखने की इच्छा बाकी है।'

इससे अमित को खुशी हुई। अमित की यह खुशी भावुकता से बोझिल थी।

दीवार की घड़ी ने छः बजने की सूचना अपने जापानी संगीत से दी। अमित ने राधिका को आवाज दी। उसके आने पर बोला, 'सुबह तुम यहां से सभी गिलास उठा ले गईं और लौटाना भूल गईं।'

फिर किशोर से, 'शायद बीयर की एकाध बोतल बची हो।'

किशोर पर इस वाक्य की कोई विशेष प्रतिक्रिया नहीं हुई।

वह अपनी अंगुलियों से नाखूनों को कुतरता हुआ सामने की ओर देखता रहा।

राधिका बीयर की दो ठंडी बोतलों के साथ भीतर आ गई। उसके हाथ में दो बोतलें देखकर अमित ने जानना चाहा कि घर पर और कितनी बोतलें थीं।

राधिका गाव की लड़की थी। क्रिओली बोलने में उसे कठिनाई होती थी, इसलिए अमित हमेशा उससे भोजपुरी में ही बातें करता। अमित की

भोजपुरी पर किशोर ने उस दिन कहा था, 'एक बात मेरी समझ में नहीं आती। तुम्हारी मां की तरह मेरी मां भी घर पर भोजपुरी बोलती है फिर भी मुझे यह जबान नहीं आती।'

'शहरी होकर कुछ लोगों को अपनी पहचान जाती रहती है।' अमित ने कहा था।

'तुम्हारा मतलब है कि सारे लोग जो भोजपुरी नहीं बोलते, अपने को नहीं पहचानते?'

'मैं नहीं जानता, भाषा को तुम क्या समझते हो; लेकिन जो मैं समझता हूं, वह तुम्हें बताए देता हूं। भाषा कुछ लोगों के लिए मात्र अभिव्यक्ति होती है, कुछ लोगों के लिए यह इससे आगे की चीज होती है, किशोर! भाषा आदमी को भीतर से जोड़कर एक शक्ति को बनाए रखने का साधन होती है।'

'तुम तो हर बात में फिलासफी ठूंसते रहते हो।'

'और तुम अपनी ही बातों को भूल जाया करते हो।'

'क्या भूल जाता हूं मैं?'

'मुझे अपनी मां से भोजपुरी में बात करते पाकर तुम कहते हो कि इस तरह की आत्मीयता क्रिओली तथा अन्य बोली बोलकर शायद न आती हो। क्या तुम भी बात-बात में फिलासफी ठूंसते हो? खैर, तुम तो भोजपुरी समझ भी लेते हो, इसलिए उस आत्मीयता को परख पाए। तुम मेरी बात को पता नहीं कहां तक समझोगे, पर मैं उसे कहे देता हूं···जानते हो, इस देश में कुछ लोगों का अभियान आज भी अभियान बना हुआ है। वे यहां पर पचास प्रतिशत से ऊपर हैं पर कभी-कभी ऐसा लगता है कि वे ही यहां सबसे कम संख्या में हैं। इस आभास की एक ही वजह है···वे कभी जुड़ नहीं पाए। भाषा संगठन का साधन होती है। यहां पर ये लोग जो अपनी अभिव्यक्ति भोजपुरी में करते हैं, उनकी संख्या पैंतीस प्रतिशत होगी। यही पैंतीस हर वक्त एक सूत्र में सामने आते हैं। बाकी पंदह-बीस प्रतिशत अपने को इस लड़ाई से काटकर अलग राग अलापते रह जाते हैं। मेरी मां से बात करके देख लो कभी कि इस देश में भोजपुरी के बल हिन्दू-मुसलमान किस तरह जुड़े हुए थे। आज क्या हालत है? सच पूछो तो

उस समय मेरे भीतर कुछ खौलने लगता है जब भोजपुरी अच्छी त जानने वाले नौजवान भी उसे न जानने का बहाना कर जाते हैं। अप बोली के प्रति इस तरह की हीन भावना ? आज बात-बात पर आइडेंटि की दुहाई देते हुए भी हम अपनी बोली को गंवारों की बोली समझने न जाएं, यह बात मेरी समझ में नहीं आती'''खैर, तुम इसका बुरा न मानना'''तुम तो भोजपुरी न बोलते हुए भी उसे समझ तो लेते हो।'

उसी क्षण किशोर ने विषय बदल दिया था।

आज फिर अमित को राधिका से बातें करते पाकर उसने आत्मीयत का अनुभव करना चाहा। उसे लगा कि शायद क्रिओली या अन्य बोल मे अमित अपने घर की नौकरानी के संग इतनी आदमीयत के साथ पेश न आ पाता। उसने उस बोली मे एक कोमलता, एक स्नेह, एक सादगी का अनुभव किया था और पहली बार इस बात का उसे हलका-सा दुख हुआ था कि उसने उसे बोलने की कभी चेष्टा नही की थी। उसे लग कि कितना स्वाभाविक होता है कभी अपनी चीजो को बाहर रख जान और बाहरी चीजो को अपना समझ अपने से चिपकाए रहना।

बीयर की एक चुसकी ले चुकने के बाद किशोर ने अमित से पूछा, 'तुम कुछ नहीं पियोगे ?'

'तुम्हारे पहुचने से कुछ ही मिनट पहले मैंने चाय पी थी।'

राधिका ने सुरेन के आने की सूचना दी।

दूसरे ही क्षण वह फिर भीतर आई। यह बताने कि जानीन का फोन आया था।

•

अमित को अपने बाप का पत्र मिला। [illegible]
थे। पूरे पत्र में घूम-फिरकर वही बातें थी [illegible]
को विवश हो जाता कि कभी [illegible]

व्यक्तित्व को खो देता है और दफ्तरशाही की शैल्यक्रिया किस तरह उसे नये हाड़-मांस का बनाकर छोड़ देती है।

किशोर की पेंटिंग्स से अर्थ निकालने के प्रयास में अमित के सामने गैलरी मेक्स बूले के चित्र उभर आते···किशोर के चित्रों की प्रदर्शनी का उद्घाटन···उस अस्त-व्यस्त वातावरण में कोलाहल के बीच की वह एक अलग आवाज, 'पेंटिंग्स अच्छी है।'

अमित ने मुड़कर देखा था। जानीन थी वह। गोरा चेहरा··· ललछंव बाल··· नीली आंखें···एक स्थायी-सी गंभीर मुस्कान। वह बिना झिझक और बिना किसी औपचारिकता का स्वाभाविक क्षण था। दोनों मिल गए थे, रोज मिलते रहने वाले कालेज के सहपाठियों की तरह। चित्रों की एक कतार से दूसरी कतार तक एकसाथ चले थे। एक साथ ठिठके थे। जानीन ने चित्रों पर प्रतिक्रियाएं व्यक्त की थीं, अमित ने सुना था। नुमाइश की उस आखिरी तस्वीर तक पहुंचते-पहुंचते जानीन ने कहा था, 'ओलिव्या के उस अग्निकाण्ड में···'

अमित की आंखें हैरत से विस्तार पा गई थीं। उसके मुंह से बस इतना निकल सका था, 'तो आप ही हैं वह···'

वह हंस पड़ी थी।

उस हंसी में एक कशिश थी। अमित को ऐसा लगा था कि उतनी प्यारी चीज उसने आज तक देखी ही नहीं थी। मंत्रमुग्ध-सा वह खड़ा रह गया था। तभी दूसरी ओर से जानीन की दोनों साथिनें आ गई थीं। उनके साथ अपनी सफेद पेजो तक जाती हुई जानीन बोली थी, 'मुझे भी ˘टिंग्स का शौक है।'

चारपाई से सोफे पर और सोफे से चारपाई पर। कभी बैठा रहता, कभी उठंग जाता। कभी लेटे-लेटे सुस्ती आ जाती और पलकों का बोझ असह्य प्रतीत होने लगता। दिन में सो लेने के बाद फिर रात को नींद के लिए करवटें बदलते रहना पड़ता था, इसलिए झपकी आने पर वह उठकर कमरे में चहलकदमी करने लग जाता···। गोलियों का भी कोई असर नहीं

होता। चहलकदमी करते हुए वह आफिस के पिछले फाइलों के बारे में सोचने लगता। मिल मालिकों और मजदूरों के बीच का तनाव'''शर्तें''' समझौता। स्थिति का बनना, फिर बिगड़ना।

रस्साकशी के बाद ही तनाव कम होता पर शिथिलता नींद की नहीं होती थी।

पिछली शाम सुरेन उन फाइलों के साथ पहुंचा था जिनमें उद्योग-पतियों के पत्रों के उत्तर पर विचार करने थे। यूनियन के सदस्यों के प्रतिनिधियों की मीटिंग का विवरण भी वह देख चुका था। उसकी अनुपस्थिति में काम कहीं भी शिथिल नहीं हुआ था फिर भी अमित को ऐसा ही लगता कि सभी काम अधूरे पड़े हुए थे। चीनी उद्योग के मजदूरों को महंगाई भत्ता ? उसे अब भी मालिकों के उत्तर की प्रतीक्षा थी। मजदूरों की एक मीटिंग से लौटते हुए अमित की मोटर की दुर्घटना हुई थी। ब्रेक में गड़बड़ी आ जाने वाली वह बात अमित के कुछ मित्रों को स्वाभाविक नहीं लगी थी। सुरेन ने तो पूरे विश्वास के साथ कहा था कि उसके ब्रेक का सावोताज हुआ था। अमित को यूनियन के क्षेत्र से आंदोलनों से हटाने की बात बहुत पहले ही से चल रही थी। पुलिस को बयान देते हुए अमित ने कहा था कि मोटर के ब्रेक का चुक जाना स्वाभाविक होता है। जो बात उसने बयान में कही थी, वह उसके अपने विश्वास की बात नहीं थी लेकिन उसे उस बात को वहीं समाप्त करना था। वह सावोताज वाली बात से असहमत नहीं था पर उसके मित्रों की जो धारणा थी, वह उसकी अपनी धारणा से अलग थी। सावोताज अगर हुआ भी होगा तो यूनियन के आंदोलन के कारण नहीं, बल्कि'''।

पर यह उसका वहम भी हो सकता है।

दुर्घटना के तीन दिन पहले उसे अनाम फोन और चिट्ठी मिली थी। फोन में उससे कहा गया था कि वह जालीन से मिलना बंद कर दे वरना उसे पछताना पड़ेगा। चिट्ठी में यह धमकी और भी सख्त थी। उसमें यहां तक कहा गया था कि सफेद दूध से काली मक्खी को जिस तरह से निकालकर फेंका जाता है, उसी तरह उसे भी समुद्र में फेंक दिया जाएगा।

फोन और चिट्ठी की चर्चा अमित ने केवल आशा से की थी। आशा

ने चाहा था कि वह चिट्ठी पुलिस के हवाले करे। अमित ने बात नहीं मानी थी। जानीन तक को उसने यह बात नहीं बताई थी।

उसके मस्तिष्क में वे धमकियां और वह दुर्घटना कहीं न कहीं जुड़ जाती थीं। वे अपने-आप जुड़तीं और फिर अलग हो जातीं। अमित अपने-आपसे तर्क करके दोनों को दो अलग चीजें समझता।

कभी चहलकदमी करते समय अपने को फाइलों की परतों से रिहा करने का प्रयास करता। खिड़की के नीले परदे को हटाकर बाहर की ओर देखता। सामने की इमारतों की ऊंची दीवारों से वह क्षितिज छिपा हुआ था जिसे मापने की आवारा चाह उसके भीतर पैदा हो जाया करती थी। गाढ़ा मैलापन। उसका हमेशा अपने-आपसे यही कहना होता कि आदमी को उस क्षितिज तक दौड़ना है। दौड़ने वाले आदमी को कोई कितना रोक सकता है ? कब-कब रोक सकता है ? कहां-कहां रोक सकता है ? कितनी लम्बी हो सकती है वह लपक ?

उसके क्वीन एलीजबेथ कालेज में इकोनोमिक्स पढ़ाना छोड़ दिया था। ेफे का खत लिखते समय उसके मन में आया था कि सभी शिष्टाचार क साथ वह खत में यह प्रश्न कर ही ले कि आदमी को कब तक पीछे से खींचता रहा जाएगा। लेकिन फिर यह खयाल आ जाने पर कि यह प्रश्न गूंगों से होगा, उसने प्रश्न नहीं किया था।

आशा ने आत्मीयता के साथ कह ही दिया था, 'तुम डरपोक हो अमित ! स्थिति का सामना नहीं कर सकते।'

'नहीं, आशा !'

नौकरी से हटकर उसने चाहा कि वह भी सत्येन्द्र की तरह राजनीति में कूद जाए। राजनीति हमेशा उसका विषय रही थी। उसका अध्ययन ही था वह जो उसे उस चीज से अलग रह करके ही सक्रिय रहने का सुझाव दे गया था। जिस बदतर की स्थिति को मिटाने की वह कोशिश करना चाहता था, उसे वह राजनीतिक झमेले से अलग रहकर भी कर सकता था। इसीलिए वह अलग रहा। वह एक ऐसे ठौर पर था जहां से खड़े होकर वह उधर की धांधलेबाजी को सही ढंग से परख पाता था। भीतर से वह उस गिजगिजाई और बलबलाई रूप को नहीं देख सकता

था। इन चित्रविचित्रण को देखने के लिए उसका दूर रहना जरूरी था।

उसका बाप कहता, 'मैं तुमसे पूरी दुनिया की बात कर रहा हूं अमित! यहां वही आदमी आगे जा सका है जिसका संबंध तिजारत के साथ अच्छा रहा है।'

अमित के समूचे शरीर में ठिठुरन भर जाती। हंसकर कहता, 'कुएं की मुंडेर पर खड़े हुए आदमी के लिए आगे जाने से तो पीछे को मुड़ जाना ही बेहतर रहेगा।'

दूसरे दिन थोड़ी देर के लिए दफ्तर जाने की बात पर अमित ने अपनी मां को मना लिया था। उसके निचले होंठ के नीचे के घाव से स्टिचेज अभी निकाले नहीं गए थे। मां ने पूछा था, 'इन धागों के निकलने तक का इंतजार तो तुमसे हुआ होता।'

'अब तो मैं बिना लंगड़ाए चल पा रहा हूं।'

अपनी मां के सामने अमित के वे बचपन के पुराने हठ लाड़ भी चल जाते थे।

'एक शर्त पर मैं तुम्हें जाने दूंगी...तुम नन्दन की टैक्सी से जाओगे, उसी से लौटोगे और वह भी दो घंटे के भीतर।'

अमित ने शर्त मान ली थी।

शर्त मानकर वह अपने कमरे को लौटा ही था कि जालीन का फोन आ गया। अमित के मुंह से यह सुनकर कि उसे दो घंटे की छुट्टी मिल पाई है, जार्लीन ने तपाक से कहा था कि वह उसे लेने पहुंच रही है।

'तुम्हारे आने से छुट्टी रद्द हो जाएगी। मां को विश्वास ही नहीं होगा कि मैं दफ्तर जा रहा हूं। बड़ी कठिनाई से मिले हैं ये दो घंटे।'

'आफिस पहुंचना सचमुच बहुत जरूरी है क्या?'

'बहुत जरूरी है जार्लीन, पर इसका यह मतलब तो नहीं कि तुम्हारे साथ आध घंटा भी न बिता सकूं।'

'तो फिर कहां इंतजार करूं?'

'मोनिकाना?'

'ठीक है।'

'पहले तुमसे मिलकर फिर दफ्तर जाऊंगा। इसका मतलब है, ठीक दस बजे मैं वहां पहुंच जाऊं।'

'तुम्हें मेरी चिट्ठी मिली थी?'

'तुम्हारी रूमानियत मुझे पार कर गई है उसमें।'

त्रोपिकाना की भव्यता से उसे चिढ़ थी पर फिर जानीन की हैसियत का भी खयाल रखना होता था।

जानीन से प्रदर्शनी की उस पहली भेंट के बाद अमित से उसकी एक दूसरी भेंट क्यूर्पिप की पुस्तकों की एक दुकान में हो गई थी। जानीन पूछ बैठी थी, 'तुम्हें मालूम है, हमारी पहली भेंट कहां हुई थी?'

'मेक्स बूले गैलरी में किशोर की प्रदर्शनी···'

'नहीं।'

'इससे पहले भी हम मिल चुके हैं क्या? ओह, शायद ओलिव्या के उस अग्निकांड में···'

'नहीं। हमारी पहली भेंट महात्मा गांधी इंस्टिट्यूट में हुई थी।'

'गांधी संस्थान में?'

'हां। भारत से आए कुछ कलाकारों के संगीत का कार्यक्रम था।'

'तुमने मुझे अपनी जगह दे दी थी। एकदम मंच के पास।'

'ओह···'

अतीत के उस क्षण की एक गुदगुदी को अमित ने अपने भीतर महसूस किया था।

पुस्तकों की दुकान से दोनों साथ बाहर आए। जानीन के हाथ में देली के उपन्यास थे। अमित ने हंसकर कहा था कि देली को तो वे लड़कियां पढ़ती हैं जो सुपर रोमांटिक होती हैं। उसी तरह हंसकर जानीन ने पूछ लिया था कि रोमांटिक होना बुरी बात होती है क्या?

'सुपर होना कमजोरी होती है।'

'सुपर रोमांटिक तो केवल विर्जीनी थी और शायद पाल भी रहा हो।'

वाक्य के अंतिम भाग का वह व्यंग्य अमित को बहुत अच्छा लगा था। जानीन ने अपने घर का पता बताते हुए शनिवार को उसे अपनी

पेंटिंग्स देखने के लिए बुला लिया था।

उस वक्त अमित ने उस दावत को आसानी से स्वीकार कर लिया था, पर जाने के समय वह सहम-सा गया था। यद्यपि के उस इलाके को तो, जहां जानीन का घर था, अमित बहुत अच्छी तरह जानता था, लेकिन एक गोरे के घर जाने की बात और वह भी उसकी लड़की से मिलने अमित को किसी क्रूजेड में जाने से कम नहीं लगा। फिर अमित को ख्याल आया था कि साहस का अभाव तो उसे इससे पहले कभी नहीं हुआ… फिर उसका निर्णय…अगर कभी नहीं हुआ तो कभी नहीं होगा।

और वह वहां पहुंच ही गया था।

जानीन की केंचुली याद को मस्तिष्क से मिटाकर वह यूनियन की गतिविधियों के बारे में सोचना चाह रहा था। उसे सभी कुछ संत्रस्त और अस्त-व्यस्त-सा लग रहा था। कुछ स्थिर नहीं हो पा रहा था। उसे लगता कि कुछ मुद्दों पर सरकार की हमदर्दी मजदूरों से अधिक जमींदारों और मिल मालिकों की ओर हो गई थी। व्यवस्था की नीति स्पष्ट नहीं हो पाती और धुंधलके में यूनियन का काम कठिन होकर रह जाता। आठ महीनों से चीनी उद्योग के मालिकों का एक ही उत्तर अब तक रेंगता हुआ चला आ रहा था…मामले पर विचार किया जा रहा है।

मामले पर विचार किया जा रहा है…एक बार
मामले पर विचार किया जा रहा है…दो बार
मामले पर विचार किया जा रहा है…तीन बार
वायदे की परतों पर परतें जमी चली गई थीं।

आठ महीने से विचार होते चले आ रहे हैं। चीनी उद्योग संघ के प्रधान ने अमित के लगातार फोन के जवाब में फोन पर बताया था कि विचार जारी है। उसे भी तीन महीने होने को थे। होड़ लेने वाले यूनियन की ओर से गांवों में अफवाहें फैला दी गई थीं कि मजदूरों को कुछ भी नहीं मिलने का। लोगों को इसका यकीन हो जाए, इसके लिए यहां—कर दिया गया था कि अमित उधर से बहुत भारी रकम मार कर बैठा है। इस बात को लेकर गांव के खेतों और कारखानों में
थी।

उस दिन अपने बंद कमरे के अंधेरे में अमित ने अपने पांव के घाव पर हाथ रखकर देखा था। वह ताजा था। पर वहां के दर्द से कहीं अधिक दर्द किसी और जगह पर था। कमरे के उस अंधेरे को फांदकर वह उसी में अकुलाता रह गया था। अलाव की धधकती लपटों से अब वह झुलसने लग जाता। वह जिस हैसियत पर था, वहां लांछन का कभी अभाव नहीं रहा है। कभी नहीं। अमित को लांछन का उतना दुख नहीं था जितना कि अपने मुंहचोर होने का। वह मुंहचोरी ही तो थी। बीस दिन से अधिक होने को थे, वह मजदूरों से दूर था। उसकी अनुपस्थिति उसके ऊपर से लांछन को बल दे सकती थीं। सुरेन और बाकी लोगों को गांवों के दौरे पर भेजकर भी वह निश्चित नहीं था। नुकीले दुराव के खरोंचों से बच पाना दुश्वार था।

उसकी उस अस्थिरता को कई दिन होने को थे।

कल दफ्तर जाने की अनुमति पाकर उसने उस छड़ी को अपनी चारपाई के नीचे फेंक दिया जिसके सहारे वह अपने कमरे के भीतर-बाहर चला करता। टेलिफोन की जगह से लेकर रसोईघर तक वह बिना लकड़ी सहारे चला गया। उसे लगा, एक ही दिन में उसकी टांग अच्छी हो गई थी। उस घाव की कल्पना भी उससे नहीं हुई जिसने उसे चारपाई का कैदी बना दिया था।

राधिका के भोजन लेकर आने पर अमित ने उसे रोक लिया, 'कल मैं अपने दफ्तर जा रहा हूं राधिका!'

'जानती हूं।'

'और परसों तुम्हारे गांव।'

'गांव जाना तो पंद्रह दिन बाद ही होगा।'

'यह किसने कहा तुमसे?'

'मौसी तुम्हें थोड़े ही जाने देंगी।'

'अब तो पांव अच्छा हो गया।'

'कल दफ्तर जाने के लिए तुम दाढ़ी कैसे बनाओगे? तुम्हारे चेहरे के घाव अभी अच्छी तरह भर नहीं पाए हैं।'

'दाढ़ी के साथ जाऊंगा।'

'और उससे मिलने भी इसी तरह जाओगे क्या ?'

'तुमसे किसने कहा ?'

'क्यों, अब नहीं बोलोगे…गांव की लड़की बुद्धू होती है ?'

'यह तो तुम हो ही ।'

'तो फिर मैं मौसी को…'

वह जाने को हुई । ललित ने उसे रोक लिया । ललित जानता था कि उसकी मां उसे जानीन से मिलने से नहीं रोकेगी, पर अपनी इन बातों को फिर दोहरा जाएगी, 'तुम सचमुच ही पागल हो…अब तुम्हारा दूसरा पागलपन यह रहा कि तुम एक ऐसे प्यार को प्यार समझने लगे हो जो प्यार हो ही नहीं सकता । यह दो दिन का क्षणिक संबंध अवश्य हो सकता है, पर प्यार नहीं । तुम आज इसे मानने को तैयार नहीं पर कल अपने-आप मानोगे । तुमने तो इस देश का इतिहास भी पढ़ा है । मुझसे कहते हो कि तुम इस देश का सही इतिहास लिख भी रहे हो । इतना कुछ होने पर भी तुम इस देश की सबसे असंभव बात के पीछे पड़ गए ? इस देश में हर एक दूसरी जाति के बीच तुम्हें प्यार और विवाह की बातें मिल सकती हैं; लेकिन एक ही बात है जो इस देश में न कभी हुई है… और न कभी होगी । गोरे की लड़की के साथ तुम्हारी दोस्ती शायद हो सके पर वह तुमसे प्यार भी करे, यह न कभी हुआ है और न कभी होगा । रही शादी की बात, तुम्हें तुम्हारा पूरा जीवन दे रही हूं…कभी तो आकर बता देना कि किसी गोरे की बेटी किसी दूसरी जाति की बन सकी हो ।'

राधिका हाथ छुड़ाकर कमरे से बाहर हो गई ।

ललित के कानों में मां का स्वर गूंजता रहा, 'तुम्हें तुम्हारा पूरा जीवन दे रही हूं…कभी तो आकर बता देना कि किसी गोरे की बेटी किसी दूसरी जाति की बन सकी है…तुम्हें तुम्हारा पूरा जीवन…तुम्हें तुम्हारा पूरा जीवन…पूरा जीवन…कभी तो आकर बता देना…बता देना…बता देना…गोरा…काला…गोरा…काला…कभी तो…कभी तो…'

यह उसकी मां के शब्दों को लिए हुए अपनी ही आवाज हुआ करती थी । वे एक बहुत भारी सन्नाटे के चीत्कार होते जो उसके समूचे अस्तित्व को झनझना जाते ।

पर इसके बावजूद भी वह तटस्थ था।

अमित गोलियों की खुमारी को अब भी लिए हुए था जब उसकी मां आशा के साथ ऊपर आ गई थी। कुछ देर आशा से बातें करके वह नीचे को उतर गई। आशा के हाथों की दोनों पुस्तकों को अपने हाथों में लेते हुए अमित ने कहा, 'सिमोन द बुआ आज भी तुम्हारे लिए पुरानी नहीं हुई ?'

'मैं तो धीरे-धीरे चलने वालों में हूं। मैं उतना अधिक आगे अभी आ ही कहां सकी हूं जहां से सिमोन द बुआ की दुनिया मेरे लिए पीछे छूट जाए ? अभी तो मैं वहां पहुंच भी नहीं पाई।'

'तुम वहां नहीं पहुंची हो ? यह क्या बोलने लगीं ?'

'ठीक ही तो बोल रही हूं।'

मुस्कराकर अमित ने दूसरी सिगरेट सुलगाई। राधा चाय लेकर आई और चली भी गई। सिगरेट के एक अनचाहे कश के बाद अमित बोला, 'राधा और तुम्हारी दुनिया के बीच का फासला दो युगों से कम थोड़े ही हो सकता है।'

'राधा भी औरत है, मैं भी औरत हूं।'

अमित ने तुरंत कुछ नहीं कहा। फिर सिमोन द बुआ की पुस्तक के पृष्ठों को पलटते हुए, 'राधा तो आज भी वहीं है जहां सौ-दो सौ साल पहले की राधा थी।'

'फासले को इतना लंबा मत करो।'

'फासला तो बहुत लंबा है। तुमने तो हमेशा अपने को स्वतंत्र माना है।'

'जहां तक अपने को स्वतंत्र मानने की बात है, वह तो हर औरत अपने को मान सकती है। राधा भी।'

'मानना और जीना...'

'बस, यहां थोड़ा-सा अंतर अवश्य आ जाता है। मैं स्वतंत्रता को जी लेने की कोशिश जरूर कर लेती हूं। खैर, छोड़ो इस रोज-रोज की बहस को। तुम्हारी जानीन का क्या हाल है ?'

'अच्छी है।'

'शी इज मैड आफ्टर यू।'

'पुराने खयालों की लड़की है।'
आशा को यह व्यंग्य-सा लगा, फिर भी वह मुस्करा गई।

## ४

जानीन बहुत छोटी थी। उस समय प्राइमरी स्कूल से थकी हुई लौटी थी, 'मां हमारे पड़ोस ही में तो स्कूल है फिर पापा मुझे उतनी दूर के स्कूल में छोड़ने क्यों जाते हैं?'

'यह स्कूल हम जैसे लोगो के लिए थोड़े ही है?'

'क्यों नहीं है मां?'

'यह काले लोगों का स्कूल है।'

'काले लोग क्या होते हैं मां?'

'वे हमारे लोग नहीं होते।'

'क्यों?'

'चलो दूध पी लो। मैंने उसमें चाकलेट डाल दिया है।'

जानीन जिस माध्यमिक स्कूल में पढ़ी थी, वह भी उसके अपने लोगों का विशेष स्कूल था। और जानीन आज भी बिना चाकलेट का दूध नहीं पीती।

दफ्तर पहुंचकर प्रमित अपने बंद कमरे की उस अकुलाहट को एक लंबी सांस के साथ बाहर कर पाया। अपने निजी आफिस की सीली हुई गंध के बावजूद वह कमरा उसे अपने घर के कमरे से अधिक आत्मीय लगा। आफिस के हर सामान, हर चीज पर एक सरसरी नजर दौड़ाकर वह खिड़की के पास पहुंचा। पोर्टलुई का पश्चिमी भाग हमेशा की तरह सामने था। बंदरगाह में जहाजों की संख्या अधिक थी। बंदरगाह के कामगारों की हड़ताल समाप्त होकर भी 'गो-स्लो' चल रहा था।

वेनेशियन ब्लाइंड को ऊपर करके वह खड़ा रहा। फाइलों से थककर वह इसी तरह खड़ा होता था। नीचे गलियों के आते-जाते लोगों को देखता रहता। वही लोग होते थे, जिन्हें वह देश के इस छोर से उस छोर तक देखता आया था—दुकानदार, ग्राहक, मजदूर, विद्यार्थी, भिखारी, क्लर्क, अफसर, पादरी, वेश्या, राजनेता, चोर, रोगी, डाक्टर, शराबी, चीनी, मुसलमान, क्रिओल, गोरा, हिंदू—बस, वे ही चेहरे। वही आपाधापी। दुनिया के दूसरे शहरों में भी ये ही चेहरे देखे थे। नौकरी की तलाश में निकला वही झुकी कमर वाला युवा। पर्यटकों की आंखों में झांकती हुई वही लड़की। पुलिस का वही सिपाही, वही ठग, वही चोर। और उनके बीच से निकल जाती कई साइकिलें, कई मोटर साइकिलें, कई कारें रंग-बिरंगी। कभी-कभार कोई छोटा-सा बच्चा भी इन सरगर्मियों के बीच से निकल जाता एकदम अनजान सामने की चीजों को घूरता हुआ, जैसे सभी चीजें पहली बार देख रहा हो। वह कोई बूढ़ा होता एकदम भिन्न मुद्रा में। कभी हॉर्न की जोरदार आवाज होती, कभी ब्रेक का चीत्कार। कभी कोई दुर्घटना होती, कभी कोई जुलूस। गलियों में कुछ न कुछ होता ही रहता। अमित के लिए दुनिया की सभी गलियां एक जैसी थीं···एक जैसे लोग···एक जैसे दृश्य। इस गली का आदमी उस दूसरी गली में सैलानी था तो उस गली का आदमी इस गली में कैमरा लिए घूमता मिल जाता।

अमित अपनी मेज के पास लौट आया। अभी कुर्सी पर बैठा ही था कि फोन बज उठा। सुरेन ने बताया कि डॉकर्ज यूनियन का मंत्री उससे मिलने आया था। उसे भीतर भेजने को कहकर अमित अपनी कुर्सी से उठकर आगे आ गया।

मिशेल ने भीतर आते ही कहा, 'देजोले मों शेर···मैं शर्मिंदा हूं। कल रोड्रिग से लौटने पर पता चला कि तुम्हारा एक्सिडेंट हुआ था।'

अमित ने हंसकर कहा, 'दूर से बचना पड़ा।'

'तुम्हारी गाड़ी?'

'मैकेनिक के पास है। कल फोन किया था। अभी और कुछ दिन लगेंगे।'

'वह तो इन्श्योरेंस चुकाएंगा।'

'मुझे चुकाना पड़ेगा। अपना इन्श्योरेंस फुल कम्प्रिहेंसिव तो था नहीं।'

'कम्प्रिहेंसिव इन्श्योरेंस क्यों नहीं लिया था?'

'हर साल २,००० रुपये कहां से लाता?'

'अब तीन-चार हज़ार तुम्हें अपनी जेब से खर्च करने पड़ेंगे।'

'क्या करें?'

'सुना, तुम्हारा ब्रेक फेल हो गया था?'

'पेड़ में नहीं टकराता तो गाड़ी खाड़ी में चली जाती। खैर, डाक्स की क्या स्थिति है?'

'मेरीन आथोरिटी की मीटिंग हो रही है कल। मांगें नहीं मानी गईं तो हड़ताल जारी रहेगी। तुम लोगों का क्या हाल है?'

'इधर तो अभी तक महंगाई-भत्ते के लिए जूझना पड़ रहा है।'

'पर यह तो गैर-सरकारी संस्थाओं ने भी दे दिया है।'

'म्युनिसिपैलिटी वाले भी दे चुके।'

'तो फिर क्या कारण है कि तुम्हारे लोगों को अभी तक नहीं मिला?'

'मैं आज पहले दिन आफिस आया हूं। आज एक आखिरी मेमोरेंडम इशू करने जा रहा हूं।'

'इन सालों को सुप्रीम कोर्ट में घसीट लाना चाहिए।'

'सात दिन की मुहलत देकर मैं आम हड़ताल करवाने को सोच रहा हूं।'

दोनों एक ही युवासंघ के सदस्य थे, मिशेल और अमित। संयोग से एक बार जब अमित संघ का प्रधान था तो मिशेल मंत्री और जब मिशेल प्रधान निर्वाचित हुआ था तो अमित मंत्री। अमित अपने संघ में टेबल टेनिस का चैंपियन था और मिशेल रंगमंच का। युवा मंत्रालय की ओर से आयोजित नाट्य-प्रतियोगिता में तीन बार लगातार प्रथम अभिनेता के रूप में आया था। उसका फ्रेंच का उच्चारण अद्वितीय था।

फ्रांस सरकार की ओर से जब छात्रवृत्ति प्राप्त होने की बात हुई थी, उस समय हर आदमी उसे ही सबसे योग्य समझ बैठे थे। लेकिन

जिस मापदंड से योग्यता नापी जाती है, उसकी उचित कसौटी पर मिशेल इसलिए नहीं उतरा क्योंकि जो उतर सका था, उसका रंग गोरा था जबकि मिशेल अपनी सभी प्रतिभाओं के बावजूद क्रिओल था।

उस घटना के बाद अमित ने बहुत चाहा कि मिशेल अपने को रंग-मंच की दुनिया से अलग न करे, पर मिशेल उस दुनिया से सिर्फ अलग ही नहीं हुआ बल्कि उससे हमेशा के लिए घृणा कर बैठा। कई अवसरों पर अमित ने उसे नाटक की ओर फिर से ले आने की कोशिश की लेकिन नाटक की ओर झुकने की बात तो दूर रही, उसने फिर कभी कोई नाटक देखा ही नहीं।

काफी देर तक दोनों के बीच बातें होती रहीं।

सिंडीकेट लीडरों की आगामी मीटिंग का एजेंडा तैयार करके मिशेल चला गया। पंद्रह मिनट तक अपनी मेज के फाइलों के अध्ययन के बाद अमित ने नंबर मिलाए। एक के बाद एक उसने कई फोन किए। राबिया को बुलाकर तीन पत्र डिक्टेट किए। यूनियन के नये सदस्यों की लंबी सूची देखी। सुरेन और बाकी लोगों के साथ आधे घंटे की मीटिंग से निवृत्त होकर घड़ी की ओर देखा तो हैरान रह गया। मां ने उससे बारह बजे से पहले लौट आने को कहा था। ढाई बजने को था। सुरेन से टैक्सी मंगवाने को कहकर उसने राबिया को कुछ बातें समझाईं। जब तक टैक्सी नहीं पहुंची, वह सिंडीकेट की पिछली मीटिंग के विवरण देखता रहा। आफिस छोड़ते हुए उसने सुरेन से कहा कि अगले सोमवार से वह काम पर आ रहा है।

इमारत से बाहर आकर अमित पटरी पर क्षण-भर के लिए ठिठक गया। सामने से अमरीका के राजदूत की गाड़ी गुजरी। उसके बाद दाल-पूरी वाला अपनी साइकिल की घंटी बजाता और 'दाल-पूरी दाल-पूरी-शो' चिल्लाता हुआ निकल गया। उसके बाद था गोरा मर्सेदेज। शहर का रईस दुकानदार। वह चेहरा अमित का जाना-पहचाना था। उस आदमी पर पुलिस ने तेरह बार मुनाफाखोरी के मुकदमे चलाए थे। हर बार अदालत ने उसे निर्दोष प्रमाणित किया था। एक तीसरी गाड़ी गुजरी नगरपालिका का मुहर लिए। अखबार वाला लड़का उस गाड़ी के नीचे

आते-आते बचा। सड़क पार करने से पहले अमित ने तीन और कारों को निकल जाने दिया।

दफ्तर से उसका घर आठ मील के फासले पर था। टैक्सी पोर्टलुई की गलियों से होती हुई रोज-हील को चल पड़ी। अमित को अपने पांव में हल्का-सा दर्द महसूस हुआ, पर उसे भूलकर वह जानीन के बारे में सोचने लगा।

रास्ते में वर्षा हो रही थी। वह समाप्त होती सर्दी की लजीली वर्षा थी जो बिन जताए होने लगी थी। आकाश साफ था और पानी की बूंदें टैक्सी के शीशे से टकराकर बही जा रही थीं। उस दिन की वर्षा मूसलाधार थी जब जानीन अपनी पेजो चला रही थी। वाइपर आगे के शीशों को सूखा ही नहीं पाता था। जानीन ने गाड़ी रोक दी थी।

'ड्राइव नहीं कर पा रही क्या ?'

'नहीं तो।'

'रुक क्यों गई ?'

'वर्षा का आनंद चलती गाड़ी से कहीं अधिक रुके होने पर आता है।'

दोनों घंटे तक रुके रह गए थे। जानीन से अपने खयाल को हटाकर वह फिर से सिंडीकेट की अगली मीटिंग के कार्यक्रम के बारे में सोचने लगा। सिंडीकेट के प्रधान के नाते वह स्थिति की गिरफ्त में था। आफिस से निकल आने पर उसकी उधेड़बुन और भी बढ़ गई थी। यूनियन की रक्षा के लिए वह हमेशा व्यवस्था को 'हनीं' कहता आया था। इस बार उसे हां कहना था। हां कहने ही में उसके अपने उद्देश्य को साकार करना था; पर क्या उसका यह उद्देश्य यूनियन का भी उद्देश्य था ? वह तो हां कह गया था, लेकिन सिंडीकेट के बाकी सदस्य उसकी राय के नहीं थे, इसे वह अच्छी तरह जानता था।

झटके के साथ दफ्तरी बात को अलग करके उसने फिर से जानीन के बारे में सोचने की कोशिश की, पर कर न सका। उसे लगा, वह बात सिर्फ दफ्तरी नहीं थी। वह उसके अपने अस्तित्व और समूचे वातावरण से संबद्ध थी। यूनियन की दुनिया में प्रवेश करने से पहले ही उसने यह प्रण किया था कि यह संसार उसके लिए मात्र जीविका का नहीं होगा। आज

उसे ऐसा प्रतीत होने लगा था कि अगर अपने बाकी साथियों की तरह वह भी सरकार के निर्णय को 'नहीं' कह दे तो इसका यह मतलब होकर रह जाएगा कि उसने भी यूनियन को जीविका मात्र समझा है।

श्रम और उद्योग मंत्रालय की ओर से यह निर्णय विधानसभा में पहुंचने वाला था कि यूनियन की ओर से मजदूरों के वेतन में जो चेक-आफ की व्यवस्था चली आ रही थी, उसे मिटा देना चाहिए। सरकारी निर्णय से बहुत पहले अमित उस सिद्धांत का विरोधी था। उसके अपने दृष्टिकोण में यूनियन इस चेक-आफ के कारण एक व्यवसाय बनकर रह गया था। मजदूरों से उनकी इच्छा के विरुद्ध जबरदस्ती उनसे पैसे वसूल किए जाते थे, इससे अमित सहमत नहीं था। यह सही था कि इस चेक-आफ से यूनियन की शक्ति बढ़ती थी; पर इस सच्चाई के साथ एक दूसरी सच्चाई भी जुड़ी थी। यह दूसरी सच्चाई पहली सच्चाई से बड़ी सच्चाई थी—मजदूरों की उनकी अपनी स्वतन्त्रता।

उनसे जबरदस्ती वसूली करके उन्हें एक बेचारगी की स्थिति में ढकेल दिया गया था। उनकी पसंद-नापसंद का खयाल उस संस्था को भी नहीं था जो उनके रक्षक और हितैषी होने का दावा करती है। अमित ने हमेशा यही चाहा था कि मजदूर अपनी पसंद से यूनियन के सदस्य बनें और ताकत की उस तहसील में भाग लें—मजबूर होकर नहीं। उनकी उस बेबसी से उनके अधिकारों में से एक का हनन हो जाता था।

अमित अपने मित्रों के इस तर्क को भी महत्व देता कि इस तरह वसूली की अनिवार्यता को मिटा देने से यूनियन की शक्ति क्षीण हो जाएगी। यूनियन की शक्ति तो सदस्यों की संख्या से होती है। अब तक संख्या अगर अच्छी थी तो सिर्फ इसलिए कि उनकी तनख्वाह से पैसे काटकर उन्हें सदस्य बनाने को विवश किया जाता था। यह विवशता उनके अपने ही भले के लिए थी। अगर उनकी पसंद पर तहसील की उम्मीद रखी गई तो यह यूनियन का दिवालियापन हो जाएगा।

मजदूर अगर अपनी पसंद से एक सूत्र में बंध पाए होते तो आज उनकी स्थिति कुछ और ही होती। इन्हें तो इनकी अपनी निजी भलाई के लिए विवश करके ही एक सूत्र में बांधना होगा।

इन दलीलों को अमित नकारता नहीं था, लेकिन इस सत्य से बड़े सत्य के सामने वह नतमस्तक था। उसके लिए तो मजदूरों की अस्मिता ही इस बात में थी कि उन्हें स्वतंत्र छोड़ा जाए। इससे यूनियन भी अपने को बाजारू होने से बचा पाती।

कुरुमण्डल की चढ़ाई चढ़ते हुए पुरानी टैक्सी कराहने लगी थी। आगे की बस से छूटते-धुएं के कारण टैक्सी को अपनी रफ्तार और भी कम कर लेनी पड़ी। बारिश थम गई थी। दूर का आकाश सूरज की हल्की चमक से तर होने लगा था। उसने अपने भीतर एक भारी कमजोरी अनुभव की। वह कमजोरी जितनी शारीरिक थी उतनी ही मानसिक भी थी।

जानीन उससे अलग होती हुई बोली थी, 'तुम्हें अभी कुछ और दिनों तक अपने को मानसिक और शारीरिक थकान से बचना है।'

चढ़ाई पार कर चुकने के बाद पुरानी टैक्सी का कराहना बंद हो गया। ड्राइवर सांवला मद्रासी था। उसके व्यूमिरर के सामने ईसा और मरियम की तस्वीरें थीं। वर्षा रुक जाने के बावजूद सामने के शीशे पर वाइपर इधर से उधर चल रहा था। सूखे शीशे पर उसकी क्वीक-क्वांक की आवाज भी ड्राइवर को स्वीच आफ करने की याद नहीं दिला पा रही थी।

अमित को अपने सभी मित्रों के विरुद्ध जाना था···वह अवश्य जाएगा। पर अपने इस निर्णय पर वह लड़खड़ा भी जाता था। चेक-आफ को समाप्त करने के लिए श्रम सलाहकारी संघ की राय नहीं ली गई थी। यह खटकने वाली बात थी। इन सभी बातों के बावजूद सरकार का निर्णय गलत नहीं था···यह अमित के भीतर के तर्क का निष्कर्ष था। यह निष्कर्ष उसे उसके उसूल से हटाता-सा प्रतीत होने लगा था। मजदूरों के नेता की हैसियत से वह मजदूरों का पक्षधर था; पर यह निर्णय उसे सरकार का पक्षधर बनाता जा रहा था। फिर सोचता, क्या किसी एक अच्छी बात के लिए सरकार का पक्ष ले बैठने से वह मजदूरों का शत्रु बन जाता है···और ऐसी बात नहीं थी तो फिर उसके भीतर यह झिझक क्यों थी? वह तो यूनियन को पैरासाइट और कमर्शियल होने से बचाना चाहता था। साथ-साथ मजदूरों की अपनी इज्जत और आजादी की बात थी उसमें। यूनियन

मजदूरों का मित्र होता है'''जोंक और सौदागर नहीं होता।

रोज-हील पहुंचकर उसने ड्राइवर को दाहिनी ओर की पहली गली लेने को कहा। एक मिनट से कम की ड्राइव के बाद मोटर उसके घर के सामने रुकी। गाड़ी से उतरकर उसने किराया चुकाया। घर का फाटक खोलते हुए उसकी नजर बाल्कनी पर खड़ी मां पर पड़ी। अपनी घड़ी की ओर देखता हुआ वह सीधे अपने कमरे में पहुंच गया। मां जब भीतर आई, अमित जूते का फीता खोल रहा था। वह आंखें झुकाए ही रहा।

अमित दफ्तर से लौटा था। गलियों को देखता हुआ लौटा था। हेनरी मिलर के किसी पात्र की तरह उसने गलियों को अपने में समेट लिया था। उन सारे दृश्यों को पीठ पर लादे लौटा था। वह सारा कुछ उसके साथ चिपक गया था। वह उसका अपना बोझ था। वे उसके अपने चेहरे थे। गलियों की वह सम्मिश्रित गंध भी उसकी नाक में चिपकी हुई थी। वह गंध भी उसके अपने ही शरीर की गंध जैसी थी। उसने कमजोरी महसूस की। चक्कर-सा आया उसे, पर अपनी मां के सामने वह बैठा रहा।

उसके पास ही चारपाई पर बैठकर उसकी मां ने पूछा, 'खाना मंगवा दूं ?'

अमित को हैरानी हुई। उसने तो सोचा था, मां बरस पड़ेगी। साहस पाकर बोला, 'मां, खा चुका हूं।'

'क्या पिओगे ?'

'कुछ भी ठंडा मंगवा दो।'

उसकी मां खुद नीचे गई और गिलास में अंगूर का रस लिए भीतर आई। कुछ देर बाद जूठे गिलास लेकर कमरे के बाहर होती हुई उसकी मां ने कहा, 'अब देखती हूं, तुम घर से बाहर कैसे होते हो।'

उसके चले जाने के बाद अमित मुस्करा उठा। जब वह घर से निकलना चाहेगा, उस समय उसकी मां सामने आ जाएगी और उस समय भी वह इसी तरह मुस्करा उठेगा।

कपड़े बदलकर वह सोफे पर जा बैठा। अपने कमरे में एक सीली गंध का आभास पाकर वह खिड़की के पास पहुंचा। सफेद झिलमिल परदे

को हटाकर उसने खिड़की खोल दी। पश्चिम के सूरज की धूप बाहर के पत्तों से छनकर भीतर आ गई। वह कमरे की चारपाई अन्य सामान और दीवार पर टुकड़ों में छिटक गई। धूप के एक छोटे-से टुकड़े को अपने माथे पर लिए वह सोफे पर बैठ गया। उस पैमे बराबर की धूप का स्पर्श उसे अच्छा लगा। अपने हृदय की धड़कनों की अनुभूति हुई। लगा, वे धड़कनें कुछ तेज थीं। लग रहा था, जैसे वे धड़कनें तेजी से उसके खून को धमनियों में पहुंचा रही थीं। धमनियों में खून की धाराओं के विद्रोह से उसका असर मस्तिष्क में होता-सा प्रतीत हुआ। दुर्घटना से पहले इस तरह का असर उसके दिमाग में कभी नहीं हुआ था। वह पैरों की झुनझुनी-सी थी जो जेहन के भीतर होने लगती थी। उसके सामने का माहौल झालरों में लिपटकर धूमिल हो जाता था। अस्त-व्यस्त खयालों में डुबकी लेता हुआ वह आखें बंद कर लेता। ऐसी स्थिति में डाक्टर उसे ग्लूटाप्लेक्स की गोलियां लेने को कह गया था। वह ग्लूटाप्लेक्स न लेकर वैलियम या मेंड्रेक्स की गोलियां लेकर सोने की कोशिश करता।

पिछली बार उसने कोई गोली नहीं ली थी। इस बार भी उसने कोई गोली नहीं ली। धमनियों का खून दौड़ता रहा। वह हर जगह दौड़ता रहा—बस, उसके मस्तिष्क को छोड़कर। उसके मस्तिष्क को खून वितरण करने वाली वह नस चिपक गई थी। अमित ने अपने को शिथिल कर लिया···वह आखें मूदे बैठा रहा। एक मिनट···दो मिनट···तीन मिनट और फिर उस चिपकी हुई नस में स्पंदन हुआ···खून ऊपर पहुंचा। अमित ने अपने सामने के झालर को हटते पाया···चीजें स्पष्ट हुईं। अपने माथे से हाथों को हटाकर वह सीधा बैठ गया। मस्तिष्क की उस क्षणिक शून्यता के मिटते ही जो पहला चित्र उसके मस्तिष्क में उभरा, वह था पांच घंटे पहले का ट्रोपिकीना में मेज के सामने बैठा हुआ जानीन का।

गुलाबी फ्राक में जानीन, होटल के गुलाबी माहौल में मिल गई जानीन, उसका स्वर, फिर उसकी प्रतिध्वनियां। माइडर में बुहासे-भरे गिलास पर दौड़ती उसकी पतली अंगुलियां। और फिर वही मुस्कान··· वही किशोर के चित्रों की प्रदर्शनी वाली।

५

आशा बोली थी, 'औरत की भी तो कोई संपत्ति होनी चाहिए। कम से कम उसकी देह तो उसकी अपनी रहे। विवाह के बाद आशा का यह तर्क गूंगा हो गया था। उसकी चुप्पी से अमित को आश्चर्य नहीं हुआ था। अमित के अपने एक खयाल की पुष्टि हो गई थी··· सेक्स को अस्थायी ही रहना चाहिए ताकि प्यार स्थायी रह सके।'

जानीन को याद नहीं कि पिछले किन अवसरों पर उसे कालेज के दिनों की वह पुरानी घटना याद आई थी, पर इतना याद जरूर था कि वह घटना उसे एक से ज्यादा बार याद आई थी। इस समय भी उसी झटके के साथ वह याद आ गई थी। वह केवल उसके कालेज की दीवारें थीं, बाग के फूल थे जो एक से अधिक रंग के थे। रंग की यह विविधता वहां के अध्यापक और विद्यार्थी के बीच नहीं थी। वे सभी एक रंग के थे, एक रंग विशेष के। आदमियों में दूसरे रंग के अगर कोई थे तो या तो वे तीनों चपरासी थे या वे दोनों माली। उन्हीं दिनों मालियों में से एक की अचानक मृत्यु के बाद जो दूसरा माली आया था, वह अधेड़ था और धोती पहनता था।

जिस दिन वह घटना घटी थी, जानीन कुसुम के पेड़ के नीचे बैठी हुई शेक्सपीयर के टेम्पेस्ट से अवतरण कंठस्थ कर रही थी। वह उसीकी कक्षा का जां-दे-मार्गो था जिसने नये माली की धोती को पीछे से खींच दिया था। अपनी धोती को थामकर माली उसे संभालने लगा था जब लेई लगे गत्ते के एक टुकड़े को किसी दूसरे लड़के ने माली की पीठ पर चिपका दिया था, जिसपर लिखा हुआ था :

मालबार लांगूची
न्वार कुमां लांची

देखते ही देखते लड़के-लड़कियों ने माली को घेर लिया था और सभी समवेत स्वर में गत्ते के दोनों वाक्यों को राग में गाने लगे थे :

लंगोटी पहने हिंदू गंवार

रंग होवे मसूर की दाल

माली की धोती दोबारा खींची गई थी और उसके चेहरे को खड़ी के आटे से पोत दिया गया था। जानीन से वह दृश्य देखा नहीं गया तो न जाने किस साहस और सक्रियता के साथ वह बीच में आकर चिल्ला पड़ी थी। उसकी उस चीख को सुनकर रैक्टर को अपने दफ्तर छोड़कर बाहर आ जाना पड़ा था।

उस घटना के बाद वह माली फिर कभी नहीं दिखाई पड़ा। उसके बारे में जानीन ने कई लोगों से पूछताछ की थी। कुछ पता नहीं चला।

आज अचानक उसे माली की याद फिर आ गई थी। और आज उस याद के साथ ही उसके भीतर पहली बार प्रश्न पैदा हुआ :

—वह माली अगर गोरा होता तो क्या उसके साथ उस तरह का व्यवहार किया जाता? इस प्रश्न के उत्तर में वह दूसरा प्रश्न था जो अपने-आप पैदा हो गया।

—पर यह प्रश्न आज क्यों पैदा होने लगा?

अमित के बारे में सोचते हुए वह पुरानी घटना याद आई थी। इन प्रश्नों की परिक्रमा के बाद फिर अमित की याद आकर ठिठक गई। और वह जां-दे-मार्गो की याद थी तो अमित की याद को पीछे ढकेलकर जानीन से कहना चाह रही थी—अंतर का तो खयाल किया होता।

जानीन अपनी खामोशी को सुनती रही, 'कौन-सा अंतर? कैसा अंतर?'

'रंग का, हैसियत का, और…'

उसकी दादी कहती, जां जैसा लड़का लाखों में एक होता है। जितना सुंदर है उतना ही धनी, उतना ही पढ़ा-लिखा, उतना ही अच्छा। जां आता-जाता रहता था और उसके जाने पर हर बार दादी उन्हीं बातों को दोहराती रह जाती।

जानीन की छुट्टियों में उस दिन उसकी दादी भी थी जब

जां-दे-मार्गो के प्रश्न के उत्तर में जानीन ने कह दिया था, 'जां, मैं तुम्हें प्यार नहीं करती।'

उस सपाट उत्तर से उसकी दादी जरूर चौंकी थीं, पर जां नहीं। महीनों से जानीन की मौन मुद्रा इस बात को कहती चली आ रही थी। जां ने उसपर विश्वास नहीं किया था। इसपर भी उसे विश्वास नहीं हुआ था और उसने कहा था :

'मैं तुम्हें प्यार करता हूं।'

'तुम भी मुझे प्यार नहीं करते।'

'यह तुम कैसे कह सकती हो ?'

'मैंने कभी महसूसा नहीं।'

'कोशिश नहीं की तुमने।'

'जरूरत नहीं समझी।'

उसकी दादी बीच में बोल पड़ी थीं, 'क्या कह रही हो जानीन ?'

'मैं ठीक कह रही हूं। ग्रां मेर, मैं इससे प्यार नहीं करती।'

'ठीक है, आज नहीं करती हो, कल करने लग जाओगी···वह तो धीरे-धीरे होता है।'

'नहीं दादी, वह एकाएक हो जाता है। और मुझे किसी दूसरे से प्यार हो गया है।'

'वह प्यार नहीं हो सकता जानी···'

'क्यों ग्रां मेर, वह प्यार क्यों नहीं हो सकता ?'

'प्यार अपनी बराबरी के लोगों के साथ होता है।'

'बराबरी केवल रंग-जाति और पैसों की होती है क्या ?'

जानीन की दादी के चुप रह जाने पर जां-दे-मार्गो ने कहा था, 'मैं तो उस बात को अफवाह मानता था।'

'आज पहली बार तुम उस बात को होंठों पर लाए इसीलिए आज पहली बार मैंने सच्चाई तुम्हारे सामने रख दी। और जब कि सभी गलतफहमियां दूर हो गईं, क्या मैं तुमसे यह उम्मीद कर सकती हूं कि तुम आइन्दा फिर कभी मुझसे वह बात नहीं करोगे ?'

'तुम बिना सोचे-समझे गलत कदम उठा रही हो।'

जानीन अपनी स्टूडियो से बाहर हो गई थी।

दूसरे दिन ज़ांदे-मार्गो की बहन उससे मिलने आई थी, 'तुम अपने परिवार के साथ-साथ हम सभी लोगों को नीचा दिखलाकर रहोगी। इस बात का मुझे दुख है जानीन !'

'मेरे परिवार के साथ यह 'हम लोगों' का क्या मतलब है ?'

'हमारी पूरी जाति का।'

'तुम कपटी हो सिमोन !'

'क्यों ?'

'याद है, किसी लेखक के लेक्चर के एक वाक्य को तुमने अपनी नोट-बुक में लिख लिया था और महीनों तक यह कहती रह गई थी कि वह कितनी बड़ी बात थी। कितना छोटा-सा निश्छल वाक्य था वह''''जाति से अधिक महत्व आदमी को मिलना चाहिए।'

सिमोन ने इसके उत्तर में कुछ नहीं कहा था।

बगीचे के एकदम पश्चिमी भाग में गुलाबों की क्यारियाँ थीं। उसके पास ही अंगूर की बेलों का छाजन था जिसके नीचे के पत्थर की कुर्सी पर बैठकर जानीन पढ़ा करती थी। आज वह बिना पुस्तक वहां बैठी थी। कुछ ही दूरी पर आपाया गुलाब के पौधों के बीच निराई कर रहा था। आस्तेरिक पीछे की ओर से आकर जानीन के सामने पूंछ हिलाने लगा। अपने को खयालों में हटाकर जानीन उसकी चिकनी पीठ पर हाथ फेरने लगी। कौमिक्स की किताबों में आस्तेरिक कभी उसका प्रिय हीरो था। जानीन के यहां इससे पहले जो कुत्ता था, उसका नाम भी उसने यही रखा था। आस्तेरिक को वह माँ पेची गोल्वा कहकर भी पुकारती थी। यह गोल्वा शब्द उसके परिवार में बहुत गंभीर शब्द था। उसका बाप कहता कि उसका परिवार शुद्ध रक्तों का गोल है। अपनी जड़ों को गोल के साथ जोड़ते हुए कहता कि वह फ्रांस की पवित्र और श्रेष्ठ जाति के लोग थे। वह चाहता कि जानीन अपने उस वंशज का गर्व अनुभव करे। पर गोल्वा शब्द जानीन के लिए कौमिक्स की पुस्तकों से बाहर हो ही नहीं पाता। वह जब अपने कुत्ते को पेची गोलिया कहकर पुकारती तो उसका बाप भौंहें तान लेता। जानीन हंसकर कुत्ते को आस्तेरिक नाम से पुचकारने

जां-दे-मार्गो के प्रश्न के उत्तर में जानीन ने कह दिया था, 'जां, मैं प्यार नहीं करती।'

उस सपाट उत्तर से उसकी दादी जरूर चौंकी थीं, पर जां महीनों से जानीन की मौन मुद्रा इस बात को कहती चली आ रही जां ने उसपर विश्वास नहीं किया था। इसपर भी उसे विश्वास हुआ था और उसने कहा था :

'मैं तुम्हें प्यार करता हूं।'

'तुम भी मुझे प्यार नहीं करते।'

'यह तुम कैसे कह सकती हो ?'

'मैंने कभी महसूसा नहीं।'

'कोशिश नहीं की तुमने।'

'जरूरत नहीं समझी।'

उसकी दादी बीच में बोल पड़ी थीं, 'क्या कह रही हो जानीन

'मैं ठीक कह रही हूं। ग्रां मेर, मैं इससे प्यार नहीं करती।'

'ठीक है, आज नहीं करती हो, कल करने लग जाओगी...व धीरे-धीरे होता है।'

'नहीं दादी, वह एकाएक हो जाता है। और मुझे किसी दू प्यार हो गया है।'

'वह प्यार नहीं हो सकता जानी...'

'क्यों ग्रां मेर, वह प्यार क्यों नहीं हो सकता ?'

'प्यार अपनी बराबरी के लोगों के साथ होता है।'

'बराबरी केवल रंग-जाति और पैसों की होती है क्या ?'

जानीन की दादी के चुप रह जाने पर जां-दे-मार्गो ने कहा 'तो उस बात को अफवाह मानता था।'

'आज पहली बार तुम उस बात को होंठों पर लाए इसीलिए पहली बार मैंने सच्चाई तुम्हारे सामने रख दी। और जब कि गलतफहमियां दूर हो गईं, क्या मैं तुमसे यह उम्मीद कर सकती तुम आइन्दा फिर कभी मुझसे वह बात नहीं करोगे ?'

'तुम बिना सोचे-समझे गलत कदम उठा रही हो।'

जानीन अपनी स्टूडियो से बाहर हो गई थी।

दूसरे दिन जां-दे-मार्गो की बहन उससे मिलने आई थी, 'तुम अपने परिवार के साथ-साथ हम सभी लोगों को नीचा दिखलाकर रहोगी। इस बात का मुझे दुख है जानीन !'

'मेरे परिवार के साथ यह 'हम लोगों' का क्या मतलब है ?'

'हमारी पूरी जाति का।'

'तुम कपटी हो सिमोन !'

'क्यों ?'

'याद है, किसी लेखक के लेक्चर के एक वाक्य को तुमने अपनी नोट-बुक में लिख लिया था और महीनों तक यह कहती रह गई थी कि वह कितनी बड़ी बात थी। कितना छोटा-सा निश्छल वाक्य था वह···जाति से अधिक महत्त्व आदमी को मिलना चाहिए।'

सिमोन ने इसके उत्तर में कुछ नहीं कहा था।

बगीचे के एकदम पश्चिमी भाग में गुलाबों की क्यारियाँ थीं। उसके पास ही अंगूर की बेलों का छाजन था जिसके नीचे के पत्थर की कुर्सी पर बैठकर जानीन पढ़ा करती थी। आज वह बिना पुस्तक वहां बैठी थी। कुछ ही दूरी पर आपाया गुलाब के पौधों के बीच निराई कर रहा था। आस्तेरिक पीछे की ओर से आकर जानीन के सामने पूंछ हिलाने लगा। अपने को खयालों से हटाकर जानीन उसकी चिकनी पीठ पर हाथ फेरने लगी। कौमिक्स की किताबों में आस्तेरिक कभी उसका प्रिय हीरो था। जानीन के यहां इससे पहले जो कुत्ता था, उसका नाम भी उसने यही रखा था। आस्तेरिक को वह मो पेची गोल्वा कहकर भी पुकारती थी। यह गोल्वा शब्द उसके परिवार में बहुत गंभीर शब्द था। उसका बाप कहता कि उनका परिवार शुद्ध रक्तों का गोल है। अपनी जड़ों को गोल के साथ जोड़ते हुए कहता कि वह फ्रांस की पवित्र और श्रेष्ठ जाति के लोग थे। वह चाहता कि जानीन अपने इस वंशज का गर्व अनुभव करे। पर गोल्वा शब्द जानीन के लिए कौमिक्स की पुस्तकों से बाहर हो ही नहीं पाता। वह जब अपने कुत्ते को पेची गोलिया कहकर पुकारती तो उसका बाप भौंहें तान लेता। जानीन हंसकर कुत्ते को आस्तेरिक नाम से पुचकारने

लग जाती। जिस दिन अमित यहां आया था, आस्तेरिक कूद-कूदकर अपनी दोनों अगली टांगों को इस तरह अमित की छाती पर पहुंचा रहा था, गोया वह उसका पुराना परिचित था। जानीन दंग रह गई थी क्योंकि इससे पहले आस्तेरिक किसीसे इस तरह पेश नहीं आया था। अमित ने कहा था, 'कुत्ता जनम-जनम का दोस्त होता है।'

'और आदमी ?' जानीन ने तपाक से पूछा था।

'विरले ही। पर...'

'पर क्या ?'

'जनम-जनम के संबंध को तुम नहीं समझोगी।'

'क्यों ?'

'तुम्हारे धर्म में...'

'जनम-जनम का संबंध क्या सिर्फ धार्मिक विश्वास से हो सकता है ?'

'तुम मानती हो ?'

'उसे समझना चाहती हूं। बहुत बड़ा संयोग रहा यह।'

'कैसा संयोग ?'

'कल ही मैंने डा० जीना कर्मिनारा की पुस्तक पढ़ी। यह पुस्तक जनम पर सोचने को विवश कर देती है।'

'कौन है यह डा० जीना कर्मिनारा ?'

'मेनी मेनशन और जी वर्ल्ड विजड्न की लेखिका।'

'पुनर्जन्म के पक्ष में लिखा है या...?'

'उसका इतना दमदार वैज्ञानिक पक्ष शायद ही कोई ले सका हो। उन प्रमाणों पर तो विश्वास करना ही पड़ता है।'

'लगता है, तुम्हें प्रभावित करके रही यह पुस्तक।'

'पुस्तक पढ़ चुकने के बाद मैं इस बात पर हैरान हूं कि पुनर्जन्म की बात करते हुए लोग इस तरह कतराते क्यों हैं। मुझे नहीं लगता कि इसे सत्य करार देने से किसी सिद्धांत, किसी संस्कृति या किसी धर्म पर आघात पहुंचता हो।'

'एक बात कहूं जानीन, मुझे अधिक रोमांटिक न समझो तो एक

सच्चाई तुम्हें बता दूं, मैंने इस बात को उस समय महसूसना शुरू किया जब तुम मिलीं। आज मैं हर क्षण ऐसा ही अनुभव करता हूं कि हम दोनों...' वह चुप हो गया था। फिर जैसे कुछ ख्याल आ जाने के बाद बोला, 'शायद तुम्हारा यह बार-बार कहना ही ठीक रहा है जानीन कि हम दोनों के बीच के ये सारे क्षण नये नहीं हो सकते...जिस तरह ये तुम्हारे जाने-पहचाने हैं, उसी तरह मेरे भी।'

जानीन आन्तेरिक को सहलाती रही। कुछ देर बाद अपनी जगह से उठी और आपाया के पास पहुंची। उधर बाजार से सामान लिए चंपा भी आती दिखाई पड़ी। जानीन ने उसे भी पास बुला लिया। उसने दोनों से पूछा, 'तुम दोनों मानते हो कि आदमी के इस जनम से पहले कोई दूसरा जनम भी होता है ?'

आपाया चुप रहा, पर चंपा ने उसी क्षण कहा, 'मैं मानती हूं मामजेल।'

'और तुम आपाया ?'

झिझकते हुए आपाया ने कहा, 'मैं पहले मानता था।'

'इसका क्या मतलब ?'

उसने अपने गले के सलीब को छूते हुए कहा, 'अब नहीं मानता।'

जानीन मुस्कराती हुई अपने कमरे में लौट आई।

अपने कमरे को बंद करके वह चारपाई पर लेट गई। उसने आंखें मूंद लीं। अपनी मांसपेशियों को शिथिल हो जाने दिया। कुछ क्षण उसी तरह पड़े रहने के बाद उसकी चेतना दो हिस्सों में सक्रिय हो गई। एक ओर वह अपने बाप से तर्क करती रही; दूसरी ओर उसके अपने-आपसे जूझती रही। स्वयं को उसने निर्णायक रखा। इसमें उसे दिक्कत तो हुई लेकिन बीच के निर्णायक ने अपने सारे फैसले को उसीके पक्ष में दिया। जानीन ने नहीं चाहा कि उसके अपने भीतर का वह न्यायाधीश उसका ...या पक्षधर बनकर रह जाए। उसने दोनों पक्षों की युक्तियों को फिर... फिर अपने बीच के उस तीसरे अंश का आह्वान किया ...उसने विवेचनों पर गौर करने के बाद अपना फैसला सुन...

उसीके पक्ष में रहा। उसने आंखें खोल लीं। इस वार छत पर आंखें टिकाए वह फिर से दो कोणों से सोचती रही; फिर तीसरे की आवश्यकता हुई और इस वार भी निर्णय वही रहा। इसके वाद उसने तय कर लिया, अपनी मां के लाख रोकने पर भी वह इस आंतरिक तर्क को ऊपर लाकर रहेगी। उसे अपने को कुछ वताने से पहले उससे कुछ पूछना था—देखना था कि उसके क्या उत्तर होंगे। उसने अपनी सांसों के ऊपर यह निर्णय किया। वह पलंग से उठ खड़ी हुई। अपने सिर को ऊपर करके लंबी सांस ली। अपने सिर को उसी तरह ऊपर वनाए रखा। आगे वढ़ी। खिड़की के परदे को हटाकर वाहर की ओर झांका। उसकी आंखें किसी विशेष चीज पर नहीं थीं। वाहर के समूचे दृश्य को अपनी आंखों में समेटकर भी वह कुछ नहीं देख पा रही थी। इसी प्रकरण में एक खयाल आ गया उसे—यह रोशनी। वह विस्तृत फैली हुई रोशनी, जिसमें सभी देख पाते हैं, खुद कहां तक देख पाती है अपने को ? उसे अपनी पेंटिंग्स याद आ गईं। वहुत सोचते रहने के वाद उसने उसका शीर्षक 'अंधा उजाला' रखा था।

यही वह चित्र था जो उसके वाप को सवसे अधिक पसंद था। जानीन सोचती रही···कैसी उलझी हुई वात थी वह !

सुलझाते-सुलझाते उसकी सभी शक्तियों के क्षीण हो जाने का भय था उसके भीतर।

खिड़की से हटकर वह वीच कमरे में आ खड़ी हुई। उसने आंखें वंद कर लीं—और अपने कमरे को विस्तृत होने दिया। वह कमरा विस्तृत होता गया···विस्तृत होता गया और जानीन उसमें एक विंदु मात्र रह गई।

दूर गिरजाघर के दो घंटे टन-टन वजते रहे।

उसकी मां ने नीचे से आवाज दी, 'जानी ! तुम्हारा फोन।'

गिरजाघर के घंटों की झनझनाहट के वोझ को अपने मस्तिष्क में लिए वह नीचे को दौड़ गई।

मेडिकल कान्फरेन्स में आए हुए विदेशी प्रतिनिधि मंडल के कुछ सदस्यों से नू-ओ-बीराय होटल में मिलकर लौटते हुए सत्येंद्र अमित से मिलने आ गया था। बातों के दौरान उसने कहा था, 'यह तो एक ओर ही प्रवृत्ति होती है कि देश साफ साफ-सुथरा हो पर कुछ लोगों के दिल और दिमाग में कूड़े-करकट की बातें चिपकी ही रहती हैं।'

अमित ने अपने बाप की ओर देखा था फिर सत्येंद्र की ओर और हंसकर बोला था, 'देश को साफ-सुथरा कहने के दो तरीके होते हैं। एक तो सभी कूड़े-करकटों को गलीचे के नीचे डालकर और दूसरा कूड़े-करकटों को बुहारकर। तुम जिस क्षेत्र के हो सत्येंद्र, वहां प्रायः पहले तरीके का ही सहयोग लिया जाता है। गलीचे हटाकर देखने की वहां तो जरूरत ही नहीं समझी जाती।'

जाते हुए सत्येंद्र अमित के बाप के लिए ड्यूटी फ्री की तीन बोतल व्हिस्की छोड़ गया था।

शेल्फ की अपनी पुस्तकों के बीच से अपनी पुरानी डायरी ढूंढते हुए अमित के हाथ वह पुराना चित्र आ गया था। सारनाथ के खंडहरों के बीच वह आशा के साथ खड़ा था। दोनों की मुद्राओं से वहां की उस वक्त की ठंडक स्पष्ट थी। फोटो सत्येंद्र ने ली थी। चित्र में दोनों बेपांव के थे। अमित हंस रहा था। आशा गंभीर थी। तीनों अलग विश्वविद्यालयों से वहां पहुंचे थे। छुट्टियों के दौरान तीनों दिल्ली में मिले थे। वहां से अपने-अपने विद्यालय लौटने तक तीनों खजुराहो, महाबलीपुरम और अजंता की गुफाओं तक साथ ही साथ रहे थे।

कई दृश्य कौंधकर ओझल हो गए।

वह खजुराहो का दृश्य था जो अमित के जेहन पर चिपका रहा। उसने

उसीके पक्ष में रहा। उसने आंखें खोल लीं। इस बार छत पर आंखें टिकाए वह फिर से दो कोणों से सोचती रही; फिर तीसरे की आवश्यकता हुई और इस बार भी निर्णय वही रहा। इसके बाद उसने तय कर लिया, अपनी मां के लाख रोकने पर भी वह इस आंतरिक तर्क को ऊपर लाकर रहेगी। उसे अपने को कुछ बताने से पहले उससे कुछ पूछना था—देखना था कि उसके क्या उत्तर होंगे। उसने अपनी सांसों के ऊपर यह निर्णय किया। वह पलंग से उठ खड़ी हुई। अपने सिर को ऊपर करके लंबी सांस ली। अपने सिर को उसी तरह ऊपर बनाए रखा। आगे बढ़ी। खिड़की के परदे को हटाकर बाहर की ओर झांका। उसकी आंखें किसी विशेष चीज पर नहीं थीं। बाहर के समूचे दृश्य को अपनी आंखों में समेटकर भी वह कुछ नहीं देख पा रही थी। इसी प्रकरण में एक खयाल आ गया उसे—यह रोशनी। वह विस्तृत फैली हुई रोशनी, जिसमें सभी देख पाते हैं, खुद कहां तक देख पाती है अपने को ? उसे अपनी पेंटिंग्स याद आ गईं। बहुत सोचते रहने के बाद उसने उसका शीर्षक 'अंधा उजाला' रखा था।

यही वह चित्र था जो उसके बाप को सबसे अधिक पसंद था। जानीन सोचती रही···कैसी उलझी हुई बात थी वह !

सुलझाते-सुलझाते उसकी सभी शक्तियों के क्षीण हो जाने का भय था उसके भीतर।

खिड़की से हटकर वह बीच कमरे में आ खड़ी हुई। उसने आंखें बंद कर लीं—और अपने कमरे को विस्तृत होने दिया। वह कमरा विस्तृत होता गया···विस्तृत होता गया और जानीन उसमें एक बिंदु मात्र रह गई।

दूर गिरजाघर के दो घंटे टन-टन बजते रहे।

उसकी मां ने नीचे से आवाज दी, 'जानी ! तुम्हारा फोन।'

गिरजाघर के घंटों की झनझनाहट के बोझ को अपने मस्तिष्क में लिए वह नीचे को दौड़ गई।

६

मेडिकल कान्फरेन्स में आए हुए विदेशी प्रतिनिधि मंडल के कुछ सदस्यों से शृ-ओ-बीस होटल में मिलकर लौटते हुए सत्येंद्र अमित से मिलने आ गया था। बातों के दौरान उसने कहा था, 'यह तो एक और ही प्रवृत्ति होती है कि देश लाख साफ-सुथरा हो पर कुछ लोगों के दिल और दिमाग में कूड़े-करकट की बातें चिपकी ही रहती हैं।'

अमित ने अपने बाप की ओर देखा था फिर सत्येंद्र की ओर और हुंमकर बोला था, 'देश को साफ-सुथरा कहने के दो तरीके होते हैं। एक तो सभी कूड़े-करकटों को गलीचे के नीचे डालकर और दूसरा कूड़े-करकटों को बुहारकर। तुम जिस क्षेत्र के हो सत्येंद्र, वहां प्रायः पहले तरीके का ही सहयोग लिया जाता है। गलीचे हटाकर देखने की वहां तो जरूरत ही नहीं समझी जाती।'

जाते हुए सत्येंद्र अमित के बाप के लिए ड्यूटी फ्री की तीन बोतल व्हिस्की छोड़ गया था।

दोस्त की अपनी पुस्तकों के बीच से अपनी पुरानी डायरी ढूढते हुए अमित के हाथ वह पुराना चित्र आ गया था। सारनाथ के खडहरों के बीच वह आशा के साथ खड़ा था। दोनों की मुद्राओं से वहां की उस वक्त की ठंडक स्पष्ट थी। फोटो सत्येंद्र ने ली थी। चित्र में दोनों बेपांव के थे। अमित हंस रहा था। आशा गंभीर थी। तीनों अलग विश्वविद्यालयों से वहां पहुंचे थे। छुट्टियों के दौरान तीनों दिल्ली में मिले थे। वहां से अपने-अपने विद्यालय लौटने तक तीनों खजुराहो, महबलीपुरम और अजंता की गुफाओं तक साथ ही साथ रहे थे।

कई दृश्य कौंधकर ओझल हो गए।

वह खजुराहो का दृश्य था जो अमित के जेहन पर चिपका रहा। उसने

उसे धीरे-धीरे आंखों में उतारा।

हड्डियों तक को छू जाने वाली ठंड थी।

खजुराहो के मंदिर से कुछ ही कदमों पर था वह होस्टल जिसमें छात्र टिके हुए थे। उस ठंड में रात का भोजन सभीने आंगन के घ के नीचे किया था। आकाश पर चांद अपनी पूरी गोलाई लिए हुए अमित आशा का हाथ थामे दोबारा मंदिर की ओर दौड़ गया था।

उस समय दोनों मुख्य मंदिर के आगे बैठे हुए थे, जब आशा ने से कहा था, 'मैं उस समय के बारे में सोच रही हूं जब इस मंदि निर्माण हुआ होगा।'

'या जब ये मूर्तियां बनाई गई होंगी ?'

'एक ही बात है।'

'एक ही बात नहीं हो सकती।'

'खैर, मूर्तियां ही सही···वह हमारे स्वतंत्र युग से अधिक स्वतं रहा होगा।'

'लगता तो ऐसा ही है।'

'तुम इसके यथार्थ को मानते हो ?'

'किसके यथार्थ को ?'

'इन मूर्तियों के ?'

'कला के यथार्थ को कैसे नकारा जा सकता है ?'

अमित की आंखों में यह दृश्य इस ठौर पर पहुंचकर स्विच कर गया। झपकी के बाद एलोरा का दृश्य उसके मस्तिष्क से होत आंखों में उतर आया।

'बड़ा अजीब सवाल है तुम्हारा।'

'मैं नहीं मानती।'

'क्या मानती हो तुम ?'

'मैं हृदय और बदन को दो अलग चीज मानती हूं।'

'मैं संदर्भ नहीं समझ रहा हूं।'

और यह दृश्य भी झटके के साथ अंधेरे में लुप्त हो गया था। उसकी जगह ले ली थी दिल्ली की वापसी के दृश्य ने।

देह बनने की इच्छा । एक सिलसिले को शक्ल नहीं मिल [illegible] [illegible] के बीच [illegible] और [illegible] की [illegible] से [illegible] थी नहीं [illegible]

अमित ने [illegible] उस [illegible] को [illegible] जाने दिया । [illegible] के [illegible] महीने बाद एक दिन आभा बोली थी, 'मैं [illegible] की [illegible] के लिये डाक्टर को [illegible] चाहती थी । [illegible] हूं अमित !' आभा के [illegible] होने पर अमित को भी खुशी हुई थी ।

[illegible] के [illegible] महीने बाद अमित को पीछे की ओर ढकेलती हुई आभा ने [illegible] के साथ कहा था, 'हृदय देह से और देह हृदय से जुड़ी होती है अमित !'

'पर दोनों की अपनी अपनी चीजें होती है ।'

'हां, यही तो [illegible] कह रही हूं ।'

और फिर उस रात···

उस शाम जीवन में पहली बार अमित ने औरत की देह खरीदने की कोशिश की थी ।

उस सांवली लड़की की देह तो थी पर दिल नहीं था । बंगले पर सत्येंद्र भी साथ था । उसने हंसकर कहा था, 'सेक्स के साथ दर्शन की मिलावट कड़वाहट पैदा कर जाती है ।' ड्यूटी फ्री व्हिस्की की बोतल भी खाली हो चली थी । अमित ने नहीं पी थी । इसलिए नहीं कि वह व्हिस्की नहीं पीता था बल्कि इसलिए कि वह ड्यूटी फ्री बोतल थी ।

अमित अपनी पुस्तकों के बीच से हटकर मेज के सामने बैठा था । अपने सिर के दर्द को वह कार-दुर्घटना का आफ्टर एफेक्ट मान बैठा था । उसने इस तरह के दर्द को पहले कभी नहीं जाना था । वह खुद नहीं समझ पाता था कि डाक्टर से क्या कहकर उस दर्द को जाहिर करे । सिर का भारी लगना या खाली-खाली लगना । कभी तो उसका सिर टन भर के बोझ की तरह होता और कभी एकदम खाली, कभी कमजोरी अनुभव करता, कभी उसका अपना समूचा शरीर पराया-सा लगता । उसने नींद की गोलियां लेनी छोड़ दी थीं फिर भी उसकी हालत में फ़

था।

डाक्टर उसे ग्लूटापलेक्स की गोलियां दे गया था। कह गया था, इन गोलियों से मानसिक थकान दूर हो जाएगी। वह नहीं हुई।

उन पुरानी यादों को मस्तिष्क में लिए अमित काफी देर तक गलियों में घूमता रह गया था। लोग सिकुड़े-सिकुड़े चल रहे थे। अमित को भी ठंड लग रही थी, पर उसके जेहन की ठंड और भी अधिक थी। वहां खजुराहो की वह ठंड जमी हुई थी।

आज भी एकदम उसी तरह वह गलियों को निकल पड़ा था।

ठंड नहीं थी। बिजली की चमक एक-दूसरी तरह की गरमी का आभास दे रही थी। वह गरमी उसके सिर के भीतर भी थी और उसे कुछ भी याद नहीं था कि दिन के दौरान उसने क्या-क्या किया था। उसने जानीन के साथ फोन पर हुई बातों को याद करने का प्रयत्न किया। कठिनाई से बातें याद आईं, उन्हीं सुखद खयालों के साथ वह एक गली से दूसरी गली को होता रोज-हील की आम गली में आ पहुंचा जहां भीड़ थी, आपाधापी थी।

उसने पीछे की ओर देखा। लंबी सड़क थी। आगे की ओर देखा। आगे भी सड़क लंबी थी। मन में आया कि सड़क के दोनों छोरों को पकड़कर रास्ते को खींच कर और भी विस्तृत कर दे ताकि सफर समाप्त न हो। वह चलते रहना चाह रहा था। उसने अपने शरीर की थकान और कमजोरी को भुला दिया था। चलते रहने की प्रबल इच्छा जाग उठी थी उसके भीतर। शारीरिक थकान से वह अपने मस्तिष्क की थकान को मार डालना चाहता था।

लोगों की सांसों के बीच से होता हुआ उनकी अलग-अलग गंधों से अकुलाता हुआ भी वह चलता रहा। यातायात के लाल निशान को देखकर वह ठिठक गया, फिर खयाल आया कि वह तो गाड़ी नहीं लाया था। ऐसा भ्रम आदमी को कई बार हो जाता होगा। सभी गाड़ियां रुकी रहीं। लाल रोशनी की अवहेलना करके वह आगे बढ़ गया। सोचता रहा। मशीन के कानून को आदमी अपना कानून क्यों बनाए? आदमी अगर हरी रोशनी का ही इंतजार करे तो फिर हो गई यात्रा।

आदमियों की गहनता बढ़ती गई। रोशनी तेज होती गई। आवाजें कोलाहल में बदलती गईं। आदमी की गंध के साथ-साथ मांस-मछलियों की गंध भी आती रही पर अमित को भूख नहीं थी। उसमें बस चलते रहने की चाह थी।

वह चलता रहा।

आशा को अपनी गाड़ी में अपने पति के साथ निकल जाते देखा उसने। वह भीड़ में था, इसलिए आशा ने उसे नहीं देखा। सभी होटलों, दुकानों, डिस्कोथिकों और मलबों के सामने भीड़ थी, पॉप संगीत का कोलाहल था। कुछ ही दूरी पर गिरजाघर थे। दो गिरजाघर···दोनों के इर्द-गिर्द सन्नाटा था। सुनसान था। उस सन्नाटे से डरकर अमित पीछे लौट पड़ा।

दाहिनी ओर की एक गली के मोड़ से एक व्यक्ति अमित के पास आ गया, 'लड़की चाहिए साहब ?'

अमित ने उसे देखा और आगे बढ़ गया, 'जोली-जोली चीपी मिस्पे। हिन्दू, मुसलमान, क्रिश्चियन, मिलाजेम, हर तरह की लड़की है, साहब··· सोलह साल, सत्रह साल, अठारह साल।'

अमित बिना कुछ कहे चलता रहा।

आदमी रुक गया। उसने कोई गाली दी। अमित ने नहीं सुना, पर अनुमान लगाकर जान लिया कि उस आदमी ने उसे नपुंसक कहा होगा।

अमित ने पुलिस के सिपाही को जिन दो औरतों से बातें करते पाया, उनकी आंखें चंचल थीं। अमित को समझते देर नहीं लगी कि वे ग्राहकों की तलाश में थीं।

सामने की तावाजी से अमित ने सिगरेट खरीदी। उसीके सामने खड़े होकर सिगरेट सुलगाई। पहला कश लिया। दो क्षण के लिए जानी हालीडे को सुनता रहा। मूंगफली वाले से आठ आने की मूंगफली ली और चल पड़ा।

चलता रहा। एक गली से दूसरी गली को···आकाश से पांच दिन का चांद ओझल हो गया था जब अमित अपनी गली में पहुंचा।

वह अपनी खिड़की के थोड़े-से हटे हुए पर्दे से बाहर के दृश्यों को ताकता रहता। जहां पटरी समाप्त होती थी, वहां बैठी नमकीन बेचने

वाली मद्रासी औरत का सिर्फ सिर दिखाई पड़ता था। दूसरे मोड़ के आगे चौराहा यातायात का केंद्र बना रहता। उसके घर से वहां का दृश्य ओझल रहता था, पर गाड़ियों के रुकने और स्टार्ट होने की आवाजें इतनी स्पष्ट होतीं कि लगता, सारा कोलाहल घर के पास ही था। दूधवाले के बाद रोटीवाले और रोटीवाले के बाद सब्जीवाले की आवाजें होतीं। बाद में अखबारवाले की बारी होती और अमित बिना घड़ी देखे जान जाता कि आठ बज चुका है। इसके बाद घंटों तक गली सुनसान रह जाती। यह सन्नाटा अमित को कभी बहुत भाता और कभी खलने लगता। फिर दिन का आधा सफर पूरा होते-होते वह गिरजाघर के घंटे की घनघनाहट होती या मस्जिद के लाउडस्पीकर से आती अजान होती जो उसे किसी अकारण भूकंप की तरह दहला जाती।

डाक्टर उससे कह गया था कि वह नींद की गोलियां न ले। वह उसकी बात मान जाता और गोलियां नहीं लेता पर दांत का हल्का दर्द शुरू हो गया था और अपने को उससे बचाने के लिए उसने तीस मिलिग्राम की एक गोली ले ही ली थी। पहली बार नींद की अकेली गोली उसपर इतनी जल्दी असर कर गई थी। एक ही नींद में पूरी रात बीत गई, लेकिन सुबह उसका एक अलग-सा असर उसके ऊपर होता रहा। पहले तो सोचता रहा कि संभवतः बहुत देर तक सोते रह जाने के कारण ही ऐसा हुआ होगा। सिर-दर्द के साथ-साथ एक कमजोरी भी महसूस की उसने। चारपाई से उठने को जी नहीं किया। किसी तरह उठकर वह मेज के पास पहुंचा था। सिगरेट का पैकेट खाली पाकर उसने लंबी सांस ली थी। शीशे के सामने पहुंचकर अपना चेहरा देखा था। लगा उसके अपने कंधे पर किसी दूसरे का सिर रख दिया गया था। अंगुलियों से कंधे के सिर के बालों को पीछे करके उसने अपने को और भी गौर से देखा था। उसके शरीर की सभी कमजोरी थकान के रूप में उसकी आंखों में छाई थी। अपना सिर उसे टन भर का लगा था। उसे दोनों हाथों में थामे वह चारपाई पर बैठ गया था।

गिरजाघर का घंटा बज ही रहा था कि उस घनघनाहट के बीच नीचे से टेलीफोन की घंटी की झिझकती हुई आवाज, फिर उसके तुरंत बाद

राधिका की आवाज आई। अमित नीचे पहुंचा। दीवार से झूलते हुए फोन को अपने हाथ में लेने से पहले राधिका की उस मुस्कान ने उसे बता दिया था कि वह जानीन का फोन था।

'हेलो जानीन ! कैसी हो ?'

'जाता आकोर नों कू दे फिन।'

'जे स्वी देजोले मा दोर'''पर मैंने तुम्हें फोन करने की कोशिश जरूर की, लाइन ही नहीं मिल रही थी और जब मिली तो तुम्हारे बाप की आवाज थी यह, जिससे फोन तुरंत रख देना पड़ा।'

'तुम्हारी हालत कैसी है ?'

'जैसी छोड़ गई थी।'

'उस समय तो एकदम अच्छे नहीं थे तुम।'

'तुम्हारी और मेरी मां की आंखें एक ही जैसी हैं।'

'आफिस में कैसा रहा ?'

'थोड़ा-बहुत काम हो ही गया।'

'कितने समय तक वहां रहे ?

'जितना समय तुम्हारे साथ रहा उससे आधा।'

जानीन को हंसते सुना उसने।

'तुम हंस रही हो।'

'मेरी एक साथी ने मुझे तुम्हारे साथ देख लिया था।'

'क्या बोली ?'

'कह रही थी, तुम ओमर शरीफ के छोटे भाई हो।'

'यह ओमर शरीफ कौन है ?'

'हमारे शहर में जूते बनाता है।'

'तुमने अच्छी याद दिलाई।'

'क्या ?'

'मेरे जूते फट चले हैं। पर पता नहीं तुम्हारे शहर का मोची हम लोगों के जूते सीना चाहेगा भी या नहीं।'

'तुमने फिर वही बात शुरू की न ? सुनो अमित, शनिवार को तुम्हें मेरे घर आना होगा।'

'तुम्हारे घर ?'

'क्यों, क्या हो गया तुम्हें ?'

'पहली बार तो तुमने अपनी मां के सामने मुझे पत्रकार बनाया था। उसपर भी तुम्हारी मां और दादी ने मुझे शक की नजर से देखा। उस बार तो तुम्हारे चित्रों पर लेख लिखने की बात थी, इस बार क्या कहेंगे ?'

'मेरी गाड़ी तुम्हें लेने पहुंच जाएगी।'

'लेकिन जानीन...'

'मेरा घर तुम्हें अच्छा नहीं लगता क्या ?'

'तुम समझती क्यों नहीं ?'

'सभी लोग समुद्र किनारे बंगले पर होंगे।'

'मैं इसलिए नहीं कह रहा।'

'तो फिर ?'

'यह तो मिलने पर ही बताऊंगा। शनिवार को मैं तुम्हें पिक-अप कर लूंगा। बेल-मार की ओर किसी शांत समुद्री जगह पर बैठ सकेंगे।'

'तुम्हारी गाड़ी बन गई क्या ?'

'नहीं...मैं अपने चचेरे भाई की टैक्सी उससे ले लूंगा।'

'इससे बेहतर तो यही रहेगा कि मैं तुम्हें अपनी गाड़ी में पिक-अप करूं।'

'जो तुम रोज करती हो, वह मुझे भी तो एकाध बार करने दो।'

'ठीक है अमित! मैं दस बजे तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगी।'

'लेकिन...'

'लेकिन क्या ?'

'शनिवार को मेरा बाप लौट रहा है।'

'कान्फरेन्स समाप्त हो गई ?'

'तभी तो।'

'पर एअर फ्रांस तो शाम को पहुंच रहा है ?'

'ठीक है जानीन...जे व्येंद्रे ते प्रांद आ जीज एअर।'

'साढ़े नौ अधिक अच्छा रहेगा।'

'पर तुम्हीं ने तो दस कहा।'

'वह तो तब जब तुम्हारे हवाईअड्डे जाने की बात नहीं हुई थी ।'

'मैं ठीक साढ़े नौ तुम्हारे यहां पहुंच जाऊंगा ।'

'ड्राइव तो कर सकोगे न ?'

'तुम जो साथ रहोगी ।'

उस दिन ब्रोपिकाना के गुलाबी माहौल में अमित ने फल के रस की चुसकी लेकर जानीन को देखा था । उसके गोरे हाथों को अपने हाथों में लेकर अपने और उसके रंग के अंतर पर गौर किया था; फिर उस अंतर से आंखें हटाकर जानीन की आंखों में करीब से देखा था । वे नीली आंखें किशोर की पेंटिंग्स की आंखों की तरह थीं ।...उतनी ही बड़ी-बड़ी, उतनी ही गहराई लिए हुई । किशोर ने अमित के एक प्रश्न के उत्तर में एक बार कहा था :

'मेरी पेंटिंग्स के चेहरों पर आंखें इसलिए अनुपात तोड़ती हुई बड़ी-बड़ी होती हैं क्योंकि आंखों में बहुत कुछ होता है। इतनी सारी चीजें कि छोटी आंखों में भरना कठिन हो जाता है । तुम जानते हो अगर वान गॉग होता तो कहता कि वह गिरजाघरों की तस्वीरें न बनाकर आंखों की तस्वीरें इसलिए बनाना पसंद करता है क्योंकि उनमें कोई चीज होती है। वही वह चीज है जिसे व्यक्त करने के लिए मैं अपनी आंखों को इतना विस्तृत होने देता हूं ।'

अमित को लगा था कि जानीन की आंखों में भी वही चीज थी जो गिरजाघर या पहाड़ से भी बड़ी थी । वह चीज इतनी बड़ी थी कि उससे जानीन की आंखें लबालब आई थीं। उनमें आकाश का रंग था...समुद्र का रंग था...पूरे आलम का रंग था। उसकी उन आंखों में देखने और निहारने वाला शायद वह पहला न हो । वह जानता था कि उन आंखों को हजारों लोगों ने देखा होगा...निहारा होगा...सराहा होगा । लेकिन शायद ही कोई रहा हो जो उनमें डुबकियां लेता हुआ उनमें डूबने लगा हो, या उस डूबने के आनंद को शायद ही कोई महसूस सका हो ।

उसने सोचा था, दिन बीत जाता होगा...वर्ष बीत जाता होगा...युग बीत जाता होगा पर संभवतः वह समय जानीन के पलक झपकने के

समय से भी छोटा हो और झपकी में न जाने अब तक कितने युग समा गए होंगे। और कभी ऐसा भी होता कि कई झपकियां हो जातीं और अमित को लगता कि सारा कुछ ठिठक गया है···अभी कुछ भी नहीं हिला, कुछ भी नहीं डोला।

एक बार अपनी एक चिट्ठी में अमित ने लिख दिया, जानीन, तुम अपनी पलकों को झपकने न देना···न जाने उस झपकी में कब किसी का अतीत, वर्तमान और भविष्य सारा कुछ समाकर शून्य में परिवर्तित हो जाए। उत्तर में जानीन ने कहा था, मैं अपनी झपकी हुई पलक को उठाऊंगी ही नहीं···न जाने उसमें बस गया कोई कब उससे निकलकर ओझल हो जाए और उसकी जगह आंखों को आंसुओं से भर जाए।

इसपर ग्री-ग्री के दहाड़ते ज्वारभाटे के झंझावत को अपने-अपने चेहरों पर टकरा जाने से दोनों ने एक ही साथ आंखें बंद कर ली थीं।

जानीन से फोन पर बातें करके अमित अपने कमरे में लौटा तो लखन पहले ही से बैठे मिला। अमित उसके पास ही बैठते हुए बोला, 'तुम्हें तो याद करने की देर होती है कि तुम अलादीन के जिन की तरह सामने आ जाते हो।'

'परसों मैं तुम्हें लेने पहुंचा तो पता चला कि तुम टैक्सी में घर लौट आए।'

'शनिवार को मुझे तुम्हारी गाड़ी चाहिए।'

'एअरपोर्ट जाने के लिए न ?'

'उससे पहले भी।'

'कितने बजे ?'

'सुबह आठ बजे।'

'ठीक है, मैं छोड़ जाऊंगा।'

'मां को मत बताना।'

'प्लेजांस के लिए यहां से कितने बजे निकलोगे ?'

'वह तो तुम जानो।'

'क्यों, तुम नहीं जाओगे क्या ?'

'मैं तो चलूंगा पर गाड़ी तो तुम्हें चलानी होगी। मां मुझे गाड़ी थोड़े

ही चलाने देगी ?'

'तुम्हें मालूम है, चाची ने मुझे क्यों बुलाया है ?'

'सोचता हूं, इसीलिए ।'

अमित ने छोटी मेज से अखबार उठा लिया । उसे इस तरह पढ़ता रहा, जैसे कोई बच्चा मैगजिन से तस्वीरें देखता हो । लखन यह कहकर नीचे उतर गया कि वह चाची से मिलने जा रहा है । अमित ने मेज से वह दूसरा अखबार उठा लिया जो स्कूप के लिए प्रसिद्ध था । संपादकीय की बगल ही में जो खबर थी, उसपर अमित की आखें टिक गईं । शीर्षक के बाद उसने अनुशीर्षक पढ़ा फिर आगे की पंक्तियां "विधानसभा की आखिरी मीटिंग में 'चेक-आफ' पर बहस नहीं हो सकेगी क्योंकि इस समय सात मंत्री मिशन पर बाहर गए हुए हैं । सात सप्ताह बाद विधानसभा के अगले सत्र की पहली बैठक में इसपर बहस को शुरू किया जाएगा"'।

अमित ने आगे नहीं पढ़ा । यह उसके लिए एक खुशखबरी थी । इधर बहुत अधिक सोचते रहने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि इस विषय पर मजदूरों की राय जरूरी थी ।

इसके लिए समय चाहिए था और वह मिल गया था । एक सर्वेक्षण द्वारा वह 'चेक-आफ' के प्रति मजदूरों के निर्णय को फेडरेशन के सामने रखकर अपने को सरकार का पक्षधर होने से बचा सकता है । इस बात से उसका विरोध अधिक दमदार भी हो सकता है ।

उसी क्षण मेज से कागज लेकर सर्वेक्षण पत्र का नमूना तैयार किया और कुछ कर जाने का संतोष लिए कमरे में चहलकदमी करने लगा । उसके जूते बीच में पड़े हुए थे । उन्हें चारपाई के भीतर किया । कांच की सुराही से गिलास में पानी उड़ेल कर पिया । बाहर किसी लारी की जोरदार ब्रेक की आवाज सुनकर वह खिड़की के पास पहुंचा । लारी का ड्राइवर उन लड़कों को गाली दे रहा था जो रास्ते में गेंद खेल रहे थे । लारी के स्टार्ट होते ही लड़के चिल्ला पड़े । गालियों के उत्तर देते रहे । लारी चली गई । अमित खिड़की के पास खड़ा रहा ।

चुनाव के दौरान लिखे गए दीवार-साहित्य के वे लाल-नीले-काले वाक्य अब भी सामने की दीवार पर स्पष्ट थे :

ड्राकुला और वेम्पायर को वोट मत दो।···परिवारपरस्तों को वोट त दो।···डियेगो गार्सिया ?···मजदूर दल···नों आ नेपोचिज़्म···जनता ा कल्याण जनता के हाथों में है।

दीवार रंगों और वाक्यों से भरी हुई थी। गोलियों पर काला रंग ढ़ा दिया गया था, पर नारे अब भी उसी तरह थे। फिल्मों के पोस्टर फ़ाड़ दिए गए थे। ऊपर के एक पोस्टर का वह भाग बचा हुआ था जिसमें हिंदी के मोटे-मोटे अक्षर स्पष्ट थे—चोर मचाए शोर।

ऊपर के इश्तहार भी पानी में घुल गए थे, पर उस टुकड़े को बचा रहना था। वह बचा हुआ था।

नीचे से लखन की आवाज आई, 'अमित, मैं जा रहा हूं।'

लखन की गाड़ी के आगे चार-पांच कुत्ते एक कुतिया को घेरे खड़े थे।

अनाज की दुकानों वाली गलियों से बिखरे दाल-चावल बटोरकर वह बुढ़िया ठीक समय पर सामने से गुजरी। नोत्र दाम दे लुर्द के पादरी ने अमित के अभिवादन से पहले सिर झुकाकर उसका उत्तर दिया और आगे बढ़ गया।

घंटे भर बाद। अमित ने चाहा कि वह कमरे से बाहर हो जाए। कमरे में कुछ करना नहीं था। वह बाहर आकर कुछ कर आना चाहता था। चाहे कुछ भी। इस कमरे में योंही पड़े रहने से तो यही बेहतर था कि वह इर्द-गिर्द की सड़कों पर घूम आए। घूम आने से उसके अपने जेहन का सीलापन तो कम से कम धुल जाएगा। उसका जी किशोर से भी मिल आने को करता था। पर किशोर से मिलकर एक बार फिर उससे कुछ नहीं कहा जाएगा। उसके सामने गूंगा खड़ा रह जाएगा। किशोर एक बार फिर उससे कहेगा, 'अमित, मुझे अपने मां-बाप की जितनी चिंता नहीं है उतनी अपनी दोनों बहनों की है। अब तक तुम्हारा यह कहते रहना कि सरकारी नौकरी में अपने को बांधकर मैं अपनी प्रतिभा को विकसित होने से रोक लूंगा, मुझे खलने लगा है। यह उस वक्त तो ठीक रहा जब तक कि मेरे बाप को नौकरी से रिटायर होना नहीं पड़ा था, पर अब यह बहुत कठिन हो चला है।'

उससे यह कहा नहीं जाएगा कि अमित, तुम्हारा बाप तो इतने ऊंचे ओहदे पर है उससे कहलाकर तुम मुझे किसी नौकरी में लगा तो सकते ही हो। अमित से यह भी नहीं पूछा जाएगा कि—किशोर, तुम न सिफारिश चाहते हो और न रियायत···मेरे यहां यूनियन के दफ्तर में छोटी-मोटी नौकरी तुम्हें मिल ही सकती है···उसे भी तुम रियायत समझ इंकार कर जाते हो। जिस नौकरी को बिना किसी सिफारिश और बिना परिवार-परस्ती से तुम पाना चाहते हो, वह कब मिलेगी ?

शुरू में ही अगर नौकरी में लग गया होता तो अब तक अपनी कुछ हैसियत तो बनाई ली होती पर अगर ऐसा नहीं हुआ तो अमित काफी हद तक जिम्मेवार था। अमित भारत से अर्थशास्त्र की डिग्री लेकर लौट भी आया और किशोर अपने रंगों के बीच जीवन के सही रंग को ढूंढने में लगा रहा। उसमें प्रदर्शनी का आयोजन करवा के अमित उसके बाप के भीतर भी उसके लिए कड़वाहट पैदा कर गया था। किशोर को किसी भी प्रकार की प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष मदद संभव नहीं हो पा रही थी।

किशोर के घर की ओर जाने का इरादा उसने छोड़ दिया।

सूरज छत के ऊपर आ चुका था।

७

गजेंद्र का फोन था, 'तुमने एक बार फिर मेरी दावत ठुकरा दी, अमित !'

'तुमने एक बार फिर मुझे आमंत्रित कर देने की भूल की।'

'तुम इतने अनसोशल क्यों होते जा रहे हो ? आखिर पार्टियों में भाग लेने में क्या नुकसान पहुंचता है तुम्हें ? टाई बांधकर तुम साम्राज्यवादियों के दलाल नहीं बनना चाहते, पर पार्टियों से दूर भागने का तुम्हारा क्या कारण है ?'

'तुम तो मंत्री बना दिए जाने के बाद मिलते भी नहीं। कभी मिलो तो बताऊं। एक बात तो अभी बताए देता हूं। एक पार्टी में भाग लेने

की मेरी बहुत बड़ी इच्छा है ।'

'तो फिर इस एक में तो आ जाओ ।'

'इसमें नहीं, उस दूसरी में ।'

'उस दूसरी में ?'

'हां···मैं पहला आदमी आऊंगा और विश्वास रखो, उस दिन टाई बांधकर आऊंगा ।'

'पर उस किस दूसरी पार्टी की बात कर रहे हो ?'

'उसमें···जिसमें तुम देश के मजदूरों को आमंत्रित करोगे । जीवन में एक बार तो ऐसी कोई पार्टी दी जा सकती है ?'

'तुम पागल तो नहीं हो गए ।'

'गनीमत है, अभी नहीं हुआ हूं ।'

तब से अमित को सत्येंद्र की आवाज सुने काफी समय हो गया था ।

लंबे अंतराल के बाद सत्येंद्र का फोन आया, 'कल चाचाजी से बातें हुई थीं ।'

फिर तो आगे की बातों का आभास अमित को अपने-आप हो गया था । सत्येंद्र की एकदम वही स्टीरियोटाइप आवाज, 'मेरे अपने मंत्रालय में लायज़ां आफीसर की बहुत ही अच्छी जॉब है । बस, तुम कहो और मैं अपने पी० एस० को कहकर नियुक्ति पत्र भिजवा दूं ।'

'मेरे बाप ने और क्या कहा ?'

'तुम आज शाम को फ्री हो ?'

'यह भी मेरे बाप ने ही कहा क्या ?'

'मैं पूछ रहा हूं ।'

'क्यों, क्या बात है ?'

'इधर आ क्यों नहीं जाते ? कई दिन से हम मिले नहीं । जमकर बातें करेंगे ।'

'तुम तो जानते हो कि ड्यूटी फ्री चीजें हलक के नीचे उतरती ही नहीं ।'

'एक कप चाय पीने में क्या आपत्ति है तुम्हें ?'

'खैर, चाय पीने आ जाऊंगा।'

अमित के मन में कई बार यह बात आई थी कि कभी सत्येंद्र अपने मंत्री के लबादे को अपने ऊपर से उतारे और दोनों पुराने मित्रों की तरह उसी पुरानी भाषा में बातें कर सकें। ये दोनों आज एक-दूसरे से अंग्रेजी में बातें करते हैं। इससे पहले क्लब से लेकर शहर की गलियों की आपा-धापी के बीच तक ये दोनों भोजपुरी में बातें किया करते थे। यह आदत दोनों के अपने बीच के अपनेपन की वह स्वाभाविकता थी जो अब नहीं रही। अमित को याद है, उस दिन सत्येंद्र के मंत्रालय में पहली बार यह स्वाभाविकता खंडित हुई थी। अमित ने बातें भोजपुरी में शुरू की थीं, भोजपुरी में ही अंत किया था। अपनी उस कुर्सी पर झूलते हुए सत्येंद्र से अपनेपन की उस आदत को करार नहीं रखा जा सका था। जिस गांव में दोनों ने जन्म लिया था, उसे तो सत्येंद्र ने चुनाव जीतने के बाद ही छोड़ा था जबकि अमित बहुत पहले ही छोड़ चुका था। सत्येंद्र के उस दिन के उस अप्रत्याशित व्यवहार से उसे ऐसा लगा कि उसने गांव बहुत पहले छोड़ा था; इतना पहले कि वहां की बोली तक भूल गया था।

कामरेडों के बुद्धिजीवियों के इलाके में सत्येंद्र ने अपने लिए घर ढूंढ़ा था। अमित के घर से उसका घर दो अलग शहरों में होते हुए भी अधिक दूर नहीं था। यह भौगोलिक सामीप्य अमित के लिए एक मानसिक दुराव था। अपने उस घनिष्ठ मित्र के यहां पहुंचना चाहकर भी वह पहुंच नहीं पाता।

उस दुराव को समेटकर उसने उसे कम किया। उसकी कार की आवाज सुनकर सत्येंद्र ने खिड़की से माली को पुकारा था। माली दौड़कर पहुंचा। फाटक खोला और अमित को सलाम किया था। घर का दरवाजा भी खुद उन्होंने खोला था। सोफे पर बैठकर अमित मेज पर की फांसीसी पत्रिकाओं के पन्ने उलटता रहा। अमित को सत्येंद्र का गांववाला घर याद आ जाना बड़ा ही स्वाभाविक था। वहां तो उसके पहुंचते ही सत्येंद्र की मां, उसका बाप, उसकी दोनों बहनें सभी घेर लेते थे। उसका पहुंचना रोज होता था, पर लोग इस तरह मिलते थे, जैसे वह वर्षों बाद वहां

पहुंचा हो। कात्रवोर्न के घर में सन्नाटा था। वे लोग यहां नहीं थे। पीछे छूट गए थे गांव में। सत्येंद्र यहां पर अपनी पत्नी और उसी साली के साथ रहता था, जिससे शादी के लिए सत्येंद्र की पत्नी अमित के पीछे पड़ी हुई थी। वाद में अगर वह चुप हो गई थी तो इसलिए नहीं कि अमित चुप रहा था, वल्कि इसलिए कि लड़की ने खुद कह दिया था कि वह किसी और को चाहती थी। अपने को मानहानि से वचाने के लिए उसने ऐसा कहा था। उससे पहले अमित ने उससे कहा था, 'हम दोस्त ही रहें तो अधिक अच्छा रहेगा, रीना!' कोई वीस मिनट वाद ही सत्येंद्र सामने आया था। आते ही वोला था, 'तुम्हारी भाभी रीना के साथ अपने वाप के यहां गई हुई है। वोलो, क्या पीओगे?'

'चाय।'

'यार, वनो मत। यह चाय पीने का वक्त थोड़े ही है।'

'चाय के लिए भी कोई वक्त होता है क्या?'

'हो या न हो, पर यह समय तो किसी जोरदार चीज का है।'

'मुझे तो चाय चाहिए।'

'मजा किरकिरा मत करो।'

उसने नौकरानी को आवाज देकर बुलाया था। वह आई और दो गिलास के साथ वर्फ, सोडा और व्हिस्की की वोतल छोड़ गई थी। सत्येंद्र जव गिलासों में व्हिस्की उड़ेलने लगा था तो अमित ने अपने सामने के गिलास को खींच लिया था, 'नहीं सत्येंद्र!'

'क्या बात है?'

'मैं तो चाय लूंगा।'

'तुम आज भी वही हो।'

उसने नौकरानी को दोवारा आवाज देकर चाय लाने को कहा था।

अमित की चाय आते-आते सत्येंद्र अपना गिलास खाली कर चुका था दूसरी वार उसे भरकर उसने उठाया था। अमित ने भी अपने कप को ऊपर करते हुए कहा था, 'चियर्स।'

गिलास से चुसकी लेकर सत्येंद्र ने उसे सामने की छोटी मेज पर रख दिया था। तली हुए मूंगफलियों को चुटकी से लेकर मुंह तक पहुंचा

हुए उसने कहा था, 'उस दिन तुम्हारे घर पर आशा मिल गई थी। मुद्दत बाद मिली थी, पर स्मार्टनेस उसकी वही थी।'

चाय की प्याली को मेज पर रखते हुए अमित बोला था, 'उसकी शादी हो गई है।'

अरे, मैं उस नमूने को भी जानता हूं जिसके साथ उसकी शादी हुई है। मैं सोचता हूं, आशा ने जानबूझकर उस तरह के आदमी को अपना पति बनाया है।'

'तुम गलत भी तो सोच सकते हो।'

'सही हो या गलत, पर आशा के पास जो शारीरिक लावण्य है, वह तो प्रतियोगिता की वस्तु है।'

'सर्वेंद, यह बताओ कि इस साल तुम्हारी यात्राओं पर कितना खर्च आया होगा ?'

'लो, तुम भी विरोधी पक्ष के नेता की तरह बोलने लगे। यार, अगर हम लोग यात्राएं न करें तो यह देश कहीं का नहीं रहेगा। हम लोग मिशन पर जाते हैं। नेगोसिएशन के लिए जाते हैं।'

'यह बातचीत क्या यहां से नहीं हो सकती ? कोई भी तो ऐसा देश नहीं, जहां हमारा उच्चायोग न हो।'

'उन लोगों से ही कुछ होता तो फिर रोना ही किस बात का था ?'

'तो फिर ऐसे बेकार लोगों को क्यों वहां बैठाया गया है ? वे लोग वहां राजाओं की गद्दी पर बैठे हुए हैं। इस फिजूलखर्ची···।'

'मुझे लगता है, तुम विरोधी पक्ष के अखबार पढ़कर आ रहे हो।'

'क्यों नागरिक प्रश्न भी नहीं कर सकता ?'

'नागरिक सिर्फ बुराइयां ही देखने-पूछने के लिए होता है ?'

'चलो, तुम इसे बुराइयां तो मानते हो।'

'सरकार चलाना एक बात है और चिल्लाना दूसरी बात।'

'चलने-चलाने के ढंग भी तो कई तरह के होते हैं। रेंगना भी तो चलना ही होता है।'

'छोड़ो इन बातों को, मैं तुम्हारे बाप के···'

'उसे भी छोड़ो। मैं सिफारिश का बकरा होना नहीं चाहता।'

'कहीं तुम्हारा यह आदर्श भी एक सपना न हो।'

'सपना ही सही।'

[illegible]

[illegible]

आबिद ने कोई उत्तर नहीं दिया था।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

ओर की सभ्यता देश को अपनी जड़ से काटे जा रही थी। अमित की लड़ाई मजदूरों की हैसियत और हस्ती की लड़ाई थी, पर उस लड़ाई के साथ-साथ अस्मिता की लड़ाई भी जुड़ी हुई थी। विसंस्कृतिकरण और सांस्कृतिक साम्राज्य वह दीमक था जो भीतर ही भीतर एक शक्ति को चाटे जा रहा था। उसे खोखला किए जा रहा था।

पर आदमी किन-किन मोर्चों पर लड़े ?

## ८

आशा का फोन आया था।

'क्या हाल है आशा ?'

'अमित, आखिर तुम्हारे मित्र ने मुझे समझा क्या है ?'

'क्या हुआ ? किस मित्र की बात कर रही हो ?'

'तुम्हारा एक ही तो मित्र है, मंत्री।'

'क्यों, क्या किया सत्येंद्र ने ?'

'इधर कई दिनों से लगातार वह मुझे फोन कर रहा है और हर बार मुझे अपने समुद्री इलाके के बंगले पर दावत दे रहा है।'

'पार्टी तो तुम्हारी जिंदगी का···'

'अमित, बात पार्टी की नहीं है। वह चाहता है कि मैं अकेले में उससे मिलूं। मैं हर बार उसे यही कहती रही हूं कि वह रांग नम्बर पर फोन कर रहा है। कृपया मेरी ओर से तुम उसे इतना तो कह दो कि मैं अपने को प्यार के बाद ही किसी को सुपुर्द करती हूं और वह उन लोगों में कतई नहीं, जिससे आशा प्यार कर सके।'

'पर आशा, मैं यह कैसे कह सकता हूं ? तुम्हें खुद कहना होगा।'

'कहते-कहते थक गई।'

'तो फिर उसे भी थक जाने दो।'

# ९

जानीन के घर को देखकर अमित अवाक रह गया था। वह जितना भव्य वाहर से दिखता था, उससे कहीं अधिक भव्य अंदर से था। उसकी वाहरी हस्ती को भी अमित ने भीतर से ही देखा। जानीन की चित्रशाला की खिड़की से खड़े होकर उसने वाहर के उस विस्तार को देखा जो झुरमुटों के कारण वाहर से दृश्य नहीं था। पूरे दो वीघा जमीन के वीच था वह घर। वगीचे के किनारे-किनारे आम और गुलमोहर के ऊंचे पेड़, उनसे लिपटी हरी लताएं और लताओं के वे सिंदूरी फूल। जमीन पर इस छोर से उस छोर तक हरी घास की समतल कालीन। वहां के फूलों में कई फूल अमित ने पहली वार देखे थे। जलाशय में पुरेन और कुमुदिनी, उनपर मंडराती हुई मधुमक्खियों और भौंरों को देखकर अमित ठिठक गया था। वातावरण में मृदुलता और शांति का अनुभव करके भी भीतर ही भीतर वह कांपे विना नहीं रहा। उस माहौल ने उसे दहला दिया था। इस अंतर की कोई सीमा न पाकर वह भीतर ही भीतर तिलमिलाकर रहा गया। इस अंतर को तो महसूसते हुए भी कठिनाई हो रही थी।

वह अंतर जितना वाहर था, उससे अधिक भीतर था। घर के भीतर जाने से पहले अमित को लगा था, उसके और दो पग पर स्थित उस घर के वीच क्षितिज तक का फासला था। उतना ही विस्तृत जिसमें खो जाने का भय था। अमित खुद वड़े घर में नहीं रहता था, लेकिन किशोर के घर के सामने उसे अपना घर वड़ा लगा था। उसे वह अंतर पसंद नहीं था, लेकिन उसने तो कभी यह कल्पना भी नहीं की थी कि उसके देश में दूर से वहुत विशाल न दिखने वाले घर भीतर से इतने विस्तृत हो सकते हैं। जानीन का वह घर तेईस कमरों का था। जानीन की जो चित्रशाला थी, वह अमित का आधा घर था।

जानीन के सभी चित्रों को देखकर भी वह उनपर वातें नहीं कर सका

था। उसके अपने भीतर प्रश्नों पर प्रश्न उठते रह गए थे। इस घर के भीतर भी इतनी कीमती चीजें? ये आई कहां से? उन मूल्यवान चीजों के बीच चलते हुए उसे डर लगना था। कुछ चीजें तो ऐसी थीं जो उनकी सांसों से शायद खरोंच पा सकती थीं। वह जानीन से मूक सवाल करता रह गया था। ये सारी चीजें तो तुम्हारा दादा काम से नहीं ला सका होगा तो फिर ये आई कहां से?

उसके सामने डेढ़ सौ साल का पुराना इतिहास झिलमिलाकर रह गया। सूरज के धधकते उजाले में उसने मजदूरों को पसीने में तर देखा। महसूसा उन मजदूरों के जन्म को, उनके जीवन को, उस स्थिति-परिस्थिति को—उनकी मौत को। डेढ़ सौ साल बाद वह मजदूर विरासत में कुदाली और गड़ांसा पाकर आज भी मजदूर था। लगभग वही लिबास—वही खोपड़ी—वही हालात—उस लंबी यात्रा के बाद भी वही मंजिल…वह लंबे रास्ते की यात्रा नहीं थी। एक बहुत बड़ी गोलाई की यात्रा थी, जहां आदमी वहीं को लौट आता है, जहां से यात्रा शुरू करता है।

जानीन के प्रति अमित के भीतर कोई भी अनुचित सवाल नहीं पैदा हुआ। लेकिन जानीन के घर की चीजें उसको भीतर तक चुभ गई थीं। वे चीजें उसे ऐतिहासिक यात्रा की लाश-सी प्रतीत हुईं। एक गंधाती हुई लाश। वह इतिहास का सुनहरा कब्र था।

जानीन ने पूछा था, 'कैसा लगा मेरा घर?'

'जैसा लगा, वैसा कह दूं?'

'हां।'

'अपना तो दम घुटने लगा।'

'क्यों?'

'जानीन, तुम मेरी बातों का बुरा न मानो तो कहूं।'

'मैं बुरा नहीं मानूंगी।'

'आदमी को जीने के लिए क्या इतनी सारी चीजें जरूरी हैं?' जानीन ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया था। अमित भी ऊपर से चुप रह गया था।

उस दिन त्रोपिकाना में मिलने पर जानीन बोली थी, 'तुम्हारे उस

दिन के प्रश्न पर गौर करने के वाद सोचती हूं कि आदमी को जीने के लिए बस थोड़ा-सा प्यार, खुशी और थोड़ी-सी आशा पर्याप्त हो सकती है।'

अमित उसे देखता रह गया था।

जानीन के घर का वह नीला फाटक पूरा खुला हुआ था। भीतर न जाकर अमित ने फाटक के सामने गाड़ी खड़ी कर दी। हार्न देना चाह रहा था कि उसकी नजर वाग के माली पर पड़ी। उसे इशारे से अपने पास बुलाया। अपने हाथ की वांस की टोकरी के साथ वह गाड़ी के पास आ गया। जानीन के वारे में उससे पूछते हुए अमित को झिझक हुई। उसने पूछा, 'साहव हैं घर पर ?'

'साहव और मादाम दोनों यहां नहीं हैं।''

'कोई नहीं है ?'

'सिर्फ छोटी मामजेल हैं।'

अमित को जानीन के वारे में पूछने की कठिनाई हो रही थी कि वह सामने से आती दिखाई पड़ी। उसके हाथ में गुलावी रंग की पिकनिक किट थी। उसी रंग का उसका झगला भी था और केन्वेस की टोकरी का रंग लाल और गुलावी के वीच का था। आते ही उसने कहा, 'अमित, तुम मान जाओ तो तुम्हारी यह गाड़ी यहीं छोड़ दें। मैं···'

अमित कुछ नहीं वोला पर उसके चेहरे की प्रतिक्रिया वहुत कुछ वोल गई। जानीन हंस पड़ी। गाड़ी का दरवाजा खोलने में उसे कठिनाई हुई। अपनी सीट से झुककर अमित ने दरवाजा खोला। कार में वैठकर जानीन ने माली से कहा, 'मां का फोन आए तो कह देना, मैं मारीज के यहां गई हूं।'

जानीन के इतना न कहने पर भी अगर जानीन की मां का फोन आता तो आपाया यही कहता कि जानीन मारीज के यहां गई है। यह विश्वास जानीन को था।

गाड़ी स्टार्ट करने में अमित को कठिनाई हुई। तीन-चार बार चाभी घुमाने के वाद जव गाड़ी कराहकर रह गई तो उसने जानीन की ओर देखा।

जानीन हंस रही थी। अमित तभी गांभीर्य के साथ वोला, 'तुम

हंसना बंद नहीं करोगी तो यह स्टार्ट नहीं होगी।'

जानीन ने अपने फैले हुए होंठों को जल्दी में सिकोड़ लिया। अमित ने चाभी घुमाई। एक लंबी घरघराहट के बाद इंजन स्टार्ट हुआ। उसने जानीन की ओर देखा। वह उसी तरह गंभीर मुद्रा बनाए हुए थी। उसकी गोरी बांह में एक हल्की चिकोटी देकर अमित ने गाड़ी चला दी।

दूसरे क्षण जब उसने जानीन की बांह देखी तो चिकोटी वाला भाग लाल हो गया था। अमित को दुख हुआ पर जानीन मुस्करा रही थी। दो मिनट बाद वह बर्यूपिय की उस खास गली में था, जहां से गुजरते हुए उसे कभी ऐसा लगता था कि यह शहर विशेष लोगों का शहर था। वे विशेष लोग उसके जैसे रंग के नहीं थे, उसकी जैसी स्थिति के नहीं थे। वे दिन उसके कालेज के दिन थे। यहां के रायल कालेज में वह सीनियर कैम्ब्रिज की परीक्षा देने आया था। परीक्षा-भवन में उसके इर्द-गिर्द के चार-पांच परीक्षार्थी गोरे लड़के थे। उसने उनसे बातें करने की कोशिश की थी। उसके प्रश्नों के उत्तर तक उन लड़कों ने नहीं दिए थे। अमित अपने-आपसे पूछता रह गया था—यह बहिष्कार क्यों? धन या रंग के कारण?

उसी कालेज के सामने से उसकी कार गुजरी। जिस आदमी ने कार के आगे से रास्ता पार किया, उसे अमित पहचान गया। वह वर्दी में नहीं था, पर उसकी चाल वही थी। हड़ताल करनेवालों के साथ गिरफ्तार होकर अमित भी जेल पहुंचा था। यही वह आदमी है जो इंस्पेक्टर की वर्दी में उसके सामने आया था और आते ही पूछा था, 'तुम मिनिस्टर आफ हेल्थ के पी० ए० के बेटे हो न?'

'मैं यूनियन से संबंधित हूं।'

'तुम्हारा बाप मेरे अच्छे दोस्तों में है।'

अमित तीन दिन तक जेल में था। जमानत पर भी उसने उस वक्त तक कैद से बाहर नहीं होना चाहा था जब तक कि सभी मजदूरों की रिहाई नहीं हुई थी।

एक रेनाल्ट सिक्सटीन उसकी बगल में आ गई। गोरे ड्राइवर ने अस्पष्ट शब्दों में कहा, 'से कोमसा के चो कॉन्ज्वी? मैयत के जलूस में हो

क्या ? अगर सही रफ्तार में चलाना नहीं है तो कम से कम दूसरों का रास्ता तो रोके मत रहो।'

अमित ने उसका उत्तर देना चाहा था, पर तभी जानीन ने उसके हाथ पर अपना हाथ रख दिया था।

उस घटना को भूलने में अमित को थोड़ा समय लगा, 'कहां चलते हैं ?'

'बेल मार की बात हुई थी न ?'

'उधर ही चलते हैं।'

फिर तो शहर की ओर जाने वाले रास्ते से कटकर अमित ने गाड़ी को गांवों की ओर मोड़ दिया। जानीन ने अपने को अमित के बायें कंधे से लग जाने दिया। उस स्थिति में उसके लिए चुप्पी से बेहतर शायद कोई भी दूसरी चीज नहीं हो सकती थी। अमित को जो अनुभूति हुई, वह एक जीत के बाद के आनंद की थी। उसके अपने जीवन में हार के साथ कई जीत की भी यादें थीं। वह जीत के आनंद से भली भांति परिचित था। पर यह जीत किस खेल की थी, किस लड़ाई की थी ? तो फिर वह आनंद जीत का सा आनंद क्यों था ? कहीं वह खेल और लड़ाई के इस आरंभ को ही परिणाम तो नहीं समझ बैठा था ? उसे अपनी सांसों के साथ अपना हृदय भी बड़ा-सा प्रतीत हुआ। लगा, उसके अपने कंधे पर फिर किसी दूसरे व्यक्ति का सिर आने लगा है जो कुछ विपरीत ढंग से सोच रहा था। कुछ ऐसी बातों पर तर्क शुरू हो गया था जो नई थीं। वह उसके अपने मस्तिष्क की बात-सी नहीं लग रही थी। उसने सुना अपने ही स्वर को अपने ही से प्रश्न करते हुए, 'यह आनंद असंभव के संभव हो जाने का तो नहीं ?' और फिर उत्तर भी प्रश्न ही के रूप में, 'क्या असंभव ? क्या संभव ?···अपने सही उद्देश्य से यह कतरा जाना या कन्नी काट जाना तो नहीं था ?

आज उसका बाप फिर मिशन से लौट रहा था। फिर अमित से पूछेगा, 'अभी तक तुम्हारी संवेदना की सनसनी समाप्त नहीं हुई ?' फिर उसी दफ्तर वाले स्वर में कहेगा, 'देखो अमित, तुम्हारे भीतर एक चीज है, एक ऐसी चीज जो मुझे तुम्हारे भविष्य के बारे में सोचने को विवश

कर जाती है। तुम्हारी आज की सनक तुम्हारे भविष्य को अंधकारमय करती जा रही है और तुम्हें इसका पता तक नहीं। तुम कोई भी काम करो, मुझे इसमें कुछ लेना-देना नहीं, लेकिन तुम क्रांति का लबादा पहने अपने व्यक्तित्व की नुमाइश में लगे रहो, इसे मैं तुम्हारी मूर्खता मानता हूं। अपने को अलग बताकर अपने को चमकाने का तुम्हारा यह ढंग एकदम घटिया है। कभी-कभार व्यवस्था के विरुद्ध बताकर अपने को पहली पंक्ति में खड़ा करना बड़ा आसान होता है पर बाद में यह मूर्खता ही प्रमाणित होकर रहती है। तुम्हें कभी ऐसा नहीं लगता कि अपने सामने के मजदूरों को तुम झूठा और खोखला आश्वासन देते रहते हो? वह क्षणिक अमृत जिस दिन विष बन जाएगा, उस दिन तुम्हारी क्या दशा होगी! भोले-भाले मजदूरों की नजर में देवता बन जाना अधिक कठिन नहीं होता पर उस दायित्व को निभाना कठिन होता है, अमित! एक दूसरी बात यह भी है कि इस तरह के आंदोलन से तुम उन लोगों की नजर में घृणा के पात्र बनकर रह जाते हो जिनके हाथ में सत्ता है। पानी में रहकर मगरमच्छ से वैर को तुम बुद्धिमानी कैसे समझ रहे हो?

'मैं तुम्हें उस घड़ी के लिए आगाह कर देना चाहता हूं जब तुम किसी शीशे के सामने खड़े होकर अपने को देखोगे और तुम्हें ऐसा लगेगा कि वह चेहरा तुम्हारा नहीं, बल्कि एक ऐसे उखड़े हुए व्यक्ति का है जो जीवन-भर के लिए असफल रह गया। उस वक्त तुम्हारा अपना अस्तित्व तुम्हें बोझ लगेगा। तुम अपने-आपसे भागना चाहोगे। लोग तुम्हें देखकर अविश्वास और नफरत से मुंह फेर लेंगे। अमित, क्या तुम यही चाहते हो?' उसका कहना तो यहां तक भी होता कि यह उम्र अलग ढंग से काम करने की होती है। उत्तेजना के समाप्त होते ही फिर लौट आना पड़ेगा उन्हीं मूल्यों पर। जाते हुए उसने कहा था, 'अमित, मैं पांच सप्ताह बाद लौट रहा हूं। अवधि लंबी है। लौटने पर तुम्हें सही रास्ते पर वापस पाकर हैरानी नहीं होगी मुझे।'

अमित जो उत्तर अपने बाप को नहीं दे पाता, उसे अपने-आपको सुनाता रहता—मैं मजदूरों को आश्वासन नहीं दे रहा। मैं उन्हें लड़ाई से जोड़ना चाहता हूं। वह लड़ाई जो उनकी अपनी है और जिसे लड़े

विना उनकी अस्मिता अरक्षित है। ऐसा करते हुए मेरा भविष्य घटाटोप अंधेरे में डूबकर रह जाए, इसकी मुझे परवाह नहीं। मैं इस लड़ाई को आखिरी सांस तक लड़ूंगा।' फिर तर्क करने लगता :

'अपने को भिन्न वताते रहने से वाज नहीं आओगे क्या ? कव तक नेतागीरी की वोली वोलोगे ?'

'मैं अपने को उस दुनिया का नहीं वना पाता जहां हर चीज सरल है, हर चीज के लिए सुविधा है। धारा के साथ वह जाना मुझे कभी अच्छा नहीं लगा इसीलिए मैंने यह रास्ता चुना है।'

'यह मेरा आदेश है···'

'मैं आदेशों के लिए नहीं जनमा।'

अपने वाप के हवाई-जहाज पर सवार हो जाने के वाद अमित ने अपने से पूछा था···ओझल हो गए अपने वाप से ? सही क्या है ? गलत क्या है ? क्या यह जरूरी है पापा, कि तुम्हारी सच्चाई मेरी सच्चाई हो ? मेरी अपनी भी तो सच्चाई हो सकती है। तुम यह क्यों चाहते हो कि मैं अपनी सच्चाई को रौंदकर तुम्हारी सच्चाई को गले लगा लूं ?

अमित नहीं चाह रहा था कि उसे किसी आनंद का भ्रम हो। उसके भीतर एक हिलोर अवश्य थी, पर वह उसे आनंद की व्याख्या देना नहीं चाह रहा था। यह सही था कि जानीन का सामीप्य उसे अच्छा लगता था। उसके पास होने से उसका हौंसला वढ़ जाता था और उसे यहां तक आभास होने लगता कि उसकी लड़ाई कठिन नहीं रही···पर इसका यह तात्पर्य थोड़े ही था कि अभियान सफल रहा। उसका सवसे वड़ा संघर्ष तो मजदूरों की मौजूदा हालत में सुधार लाना था। वर्तमान स्थिति उसकी शत्रु थी। उससे लड़कर उसमें परिवर्तन लाने में सफल हो जाना उसकी जीत होगा, और जानीन ?

वह एक आवारा खयाल होता; एकदम वेवुनियाद जो कभी-कभार उससे यह कह जाता कि जानीन उसे उसके निर्णय से डगमगा जाएगी। उसका यह पक्ष अधिक दमदार प्रमाणित हो जाता कि जानीन भी उसके अभियान; उसके संघर्ष का एक अंग थी।

जानीन को न अपना सकना भी उसके लिए वहुत वड़ी हार होगी।

उसे इतिहास की दरार और खाई को पाटना था और जानीन ही वह पुल थी, 'जानीन, तुम्हारी खामोशी चुभ रही है।'

'कोई गाना सुनाऊं क्या ?'

'वह तो तुम्हें आता ही नहीं।'

'मैंने तुम्हें मीरेय माच्ये और नाना मुस्कुरी के जो कासेत दिए थे, वे अच्छे लगे तुम्हें ?'

'पहले तुम बताओ कि आनंद शंकर तुम्हें कैसा लगा ?'

'कमाल है।'

'क्या ?'

'मैं तो पहले ही बता चुकी हूं।'

'क्या बता चुकी हो ?'

'कि आनंद शंकर के संगीत मुझे कितने अच्छे लगे।'

'कब बताया तुमने ?'

'इसका मतलब है कि तुम मेरी चिट्ठी को जिस तरह पढ़ना चाहिए, नहीं पढ़ते।'

'अरे हां···पर चिट्ठी की बात तो कुछ और होती है। इस बार मैं तुम्हें रविशंकर के रेकार्ड दे रहा हूं।'

ईख के खेतों के बीच से होते हुए अमित विस्तृत फैली हरियाली को देखता रहा, सोचता रहा, कितनी विराट कटनी होगी इस साल ! कटाई शुरू होने में कुछ ही दिन तो बाकी थे। देश की पूरी समृद्धि खुली हवा में फैली हुई थी। फसल के बाद वह समृद्धि चार तिजोरियों में बंद हो जाएगी। खेतों के ये सारे मजदूर अपनी बूंद-बूंद देकर उसी थोड़े-बहुत ऐतिहासिक हक से संतुष्ट हो जाएंगे। एक बार उसने एक मजदूर को कहते सुना था, चीनी निगोड़ी गोरी होती है, इसलिए गोरों की हो जाती है। यही परंपरा थी। डेढ़ सौ साल से चला आ रहा नियम था। द्वीप का यही धर्म हो गया था।

—गन्ना खाए गोरवन सीठ्ठी खाए हम लोगन।

जानीन ने अमित के खयालों को तोड़ दिया, 'कल मैंने मारीज को तुम्हारी चिट्ठियों के बारे में बता दिया।'

'और उसने फिर वही कहा होगा न कि 'तों आमूर ए तें आमूर ठांजी ?'

'नहीं। इस बार उसने कुछ और कहा था।'

'नहीं कहा कि तुम्हारा प्यार एक निषिद्ध प्यार है ?'

'नहीं।'

'फिर ?'

'बोली कि वही प्यार सबसे अधिक मूल्यवान होता है जो बड़ी कठिनाई से सफल होता है।'

'क्या मारीज भी तुम्हारी तरह देली के उपन्यास पढ़ा करती है ?'

'देली के उपन्यास वही पढ़ती है, मैं नहीं।'

'तुम क्या पढ़ती हो ?'

'एकोनोमिक्स की बोझिल किताबें नहीं पढ़ती।'

'फिर तो कॉफिदांस, एंचीरमिते और नू-दे पढ़ती होगी।'

'क्यों, मैं नाताली सारोत, फ्रांस्वाज सागां मिशेल वितोर, और रोब ग्रिले नहीं पढ़ सकती क्या ?'

'अंग्रेजी की एक कहावत है जानीन।'

'क्या ?'

'यह कि—सीक्रेटिव एक्टीविटी केन नोट बी दि एविडस आफ सिंसेरिटि।'

'तुम्हारा मतलब है, मैं तुमसे बातें छिपाती रही हूं ?'

स्टीयरिंग व्हील से बायां हाथ हटाकर अमित ने जानीन को जकड़ लिया। बेल मार का वह समुद्रतट अधिक दूर नहीं था, जहां के घने झावे के पेड़ों की शीतलता में लोरियों की थपकियां होती हैं। जहां के समुद्र का नीलापन विविधता लिए आंखमिचौली खेलता प्रतीत होता है। दूध के झाग-सी फेनिल प्यार के गीत गुनगुनाती लहरें जो आदमी की सांसों के साथ तत्काल जुड़कर आत्मीय बन जाती हैं। बालू का वह विस्तृत किनारा अब अधिक दूर नहीं था जो कपास के गलीचे की तरह स्वच्छ होता है। जहां पर पदचिह्न लहरों से धुलकर भी चमकते रहते हैं। और जब समुद्र के हरे-नीले पानी पर सूरज कांच के अणु टुकड़ों की तरह झिलमिलाता

रहता है, उन समय आदमी युग के कोलाहल और संत्रास को भूलकर एक अखंड शांति की गोद में अपने को सौंप देता है। अमित ने अपने बायें कान में जानीन की स्वर-लहरी को अनुभव किया, 'अमित जे तेम···जे तेम ···जे तेम दे तू मों केर।'

उधर वेल मार के समुद्रतट पर भी लहरें किनारे से सिर टकराती हुई यही कहे जा रही थीं, 'मुझे तुमसे प्यार है···मुझे तुमसे प्यार है··· मुझे तुमसे बेहद प्यार है।'

१०·

सत्येंद्र ने आशा से कहा, 'हमारे देश के लिए यह कान्फ्रेंस बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। यूरोपीय देशों के सैकड़ों प्रतिनिधि इसमें भाग लेने आ रहे हैं। हम इन्हें अपनी मेहमाननवाजी का सबूत देना चाहते हैं।'

'मैंने तुम्हें पहले ही कह दिया, भाड़ में जाए देश का भविष्य।'

'ये लोग आठ दिन से ज्यादा तो टिकेंगे नहीं। आठ दिन के लिए तुम्हें चार हजार रुपये···'

'रुपये भी भाड़ में जाएं।'

'यह होस्टेस की बात है, तुम इसे कुछ और क्यों समझने लगी ?'

इसपर आशा ने फोन रख दिया था।

अपना नाश्ता पूरा करके जानीन मेज के सामने से उठती कि तभी उसके बाप ने टोस्ट पर जाम की छुरी चलाते हुए बिना उसकी ओर देखे उससे कहा, 'जानीन, जे वे ते पार्ले। दस मिनट में मैं तुमसे अपने कमरे में मिलना चाहता हूं।'

जानीन ने अपनी मां की ओर देखा और सीढ़ियां चढ़ती हुई अपने कमरे में चली गई। टोस्ट पर जाम लगा चुकने के बाद जानीन के बाप

ने उसे जूल्यें के प्लेट में रख दिया। जूल्यें आनी से बड़ा था। उसने जाम वाले टोस्ट को आनी की प्लेट में रख दिया। आनी ने अपनी मां से उसकी शिकायत की। उसकी मां ने मुस्कराकर कहा, 'मांज तों पे शेरी। मेरी अच्छी बेटी है—अपनी रोटी खा ले तू। काफी बना चुकने के बाद कप पति की ओर बढ़ाती हुई बोली, 'उसके साथ तुम सख्ती से पेश न आना।'

जानीन का बाप चुपचाप गरम काफी की चुसकियां लेता रहा।

उधर जानीन अपने कमरे में पहुंचकर चुसकियां पर बैठ गई। बाहर का माहौल गुमसुम होने के कारण उसका अपना कमरा भी धुंधलापन लिए हुए था। चारपाई पर अमित के दिए हुए रविशंकर के दो लौंग-प्ले थे, अमित की चिट्ठी थी। कमला मार्कण्डेय का उपन्यास था—फ्रांसीसी में। जानीन ने तीनों चीजों को चारपाई से उठाकर अलमारी में बंद कर दिया। अमित के नाम वह पत्र जो उसने रात में लिखना शुरू किया था, मेज पर अधूरा पड़ा हुआ था; उसके अंतिम वाक्य थे—अमित मों आमूर, तुम विश्वास नहीं करोगे अगर मैं कहूं कि यह संगीत मेरा परिचित-सा लगा। ऐसा लगा कि बहुत-बहुत पहले से मैं इस संगीत को सुनती रही हूं। हो सकता है कि वह यही संगीत न होकर इसी तरह का संगीत हो···

पत्र में जानीन अपने भीतर की उस बात को नहीं कह पाई थी, इसलिए चिट्ठी अधूरी रह गई थी। उस चिट्ठी को भी उसने दराज में बंद कर दिया। उसके भीतर एक भावना थी, जिसे वह अमित को बताना चाह रही थी पर उन वाक्यों से बता नहीं पाई थी। वह क्या चीज थी, यह तो वह जानती थी, पर शब्दों से व्यक्त नहीं कर पाई थी। सोचा था, अमित सामने हो तो शायद वह उसकी उस अभिव्यक्ति को समझ सके। लोगों से उसने सुना था, भाषा अभिव्यक्ति के लिए हुआ करती है। उसके पास भी तो शब्द थे, भाषा थी, फिर भी अपनी भावना की अभिव्यक्ति उससे नहीं हो सकी थी। उसके भीतर जो खयाल पैदा होते, उन्हें महसूसते हुए भी वह उन्हें पूरी तरह व्यक्त नहीं कर पाती। कुछ न कुछ बाकी रह ही जाता था—उसे लगता, भाषा अभी उतनी समृद्ध नहीं हो पाई थी। उस दिन समुद्र किनारे लखन की टैक्सी के हनुमान के चित्र पर जब जानीन ने

जिज्ञासा प्रकट की थी और अमित ने उत्तर में रामायण की संक्षिप्त कथा ही उसे सुना डाली थी, उस समय भी जानीन को ऐसा लगा था कि वह उस कथा को पहली बार नहीं सुन रही थी। अपनी याददाश्त पर पूरा जोर देकर भी जानीन उस रहस्य को नहीं सुलझा पाई थी।

फिर उस दिन भी···

अमित उसे गांव के जीवन दिखाते हुए एक मजदूर की बेटी के ब्याह में अपने साथ ले गया था। कार से उतरते ही जानीन ने अपने चारों ओर देखा था। पंडाल—तोरणों से सजा हुआ। गाव के उन लोगों ने उसे और अमित को बड़ी ही आवभगत के साथ एकदम माड़ों के पास का स्थान दिया था। जानीन से दूल्हा-दुल्हन को आशीर्वाद दिलवाया गया था। उसी क्षण जानीन ने आंखें मूद ली थीं। उसकी धुंधली पड़ी स्मृति की परतों के नीचे से स्पंदन हुआ था। द्वारपूजा···दूल्हे की आरती···महिलाओं का मंगलाचरण···पंडित के श्लोक···इमली घोटाई···कन्या-दान···लवा मिलाना···अग्नि की परिक्रमा···माग का सिंदूर···कोहबर की खीर···विदाई···और जानीन अपनी स्मरणशक्ति पर जोर देती रह गई थी। उसके सिर मे जोरों का दर्द शुरू हो गया था। गाव से लौटते वक्त उसने अमित से कहा था, 'अमित, मैं किसी साइक्याट्रिस्ट से मिलना चाहती हू।'

'क्यो ?'

'मुझे लगता है कि तुम्हारे साथ की बहुत सारी चीजों से में मैं बहुत पहले से परिचित हूं।'

'तुम बहुत अधिक रोमांटिक हो जानीन !'

'अमित' मेरा सिर चकराने लगता है।'

'तुम हाइपर सेंसिटिव हो।'

'अमित, ये सारी चीजें मेरी जानी-पहचानी हैं।'

'तुम्हें नोवेल कम पढ़ना चाहिए।'

'कालेज की मेरी सहेलियां कहती हैं कि मैं दिन दोपहर सपने देखा करती थी।'

'उन सपनों में मैं ही होता था क्या ?'

'मुझे वह शादी वहुत प्यारी लगी।'

'वह तो गरीब लड़की की शादी थी, वहुत ही सादी-सी।'

'से ते मेर्वेये।'

अमित ने उसे अपने से बांध लिया था। वह सिमटकर उस बंधन में खो गई थी। बारिश होने लगी थी।

इस समय भी बाहर बारिश शुरू हो गई थी।

अपने कमरे से निकलकर वह अपने बाप के कमरे में पहुंची। उसका बाप अभी अपने कमरे में नहीं लौटा था। जानीन सोफे पर बैठ गई। अपने भीतर की आशंका को बाहर फेंकने की कोशिश की। उसका बाप बहुत कम बातें करने वाले लोगों में था। वह जानीन से दो-तीन प्रश्न ही करेगा। जानीन नहीं चाहती थी कि वह अपने बाप के प्रश्नों के सामने निरुत्तर खड़ी रहे। वह उन प्रश्नों के उत्तर देगी। वे प्रश्न क्या होंगे, वह जानती थी; पर उत्तर क्या होने चाहिए, यह वह नहीं समझ पा रही थी। उस समय उसकी मां का भी बगल में होना ज़रूरी है, अन्यथा उसका अपना मुंह उत्तर के लिए नहीं खुल सकेगा।

जानीन का बड़ा भाई अगर फ्रांस में पढ़ता न होकर यहां होता तो जानीन को डरने की आवश्यकता नहीं होती। इधर कुछ दिनों से उसे गायेतां की याद बहुत आती थी। अपने पिछले पत्र में उसने लिखा था, भैया, मुझे समझने वाले तो केवल तुम थे। स्कूल में पेंटिंग्स करते समय उसका रंग-भरा हाथ बालों की लट को हटाते हुए माथे से छू गया था। मारीज हंसने लगी थी। उसने अपने बटुवे से आईना निकालकर जानीन के सामने कर दिया था। तभी आर्ट टीचर सिस्टर सोलाज भी सामने आ गई थी। जानीन के माथे के उस लाल बिंदु को देखकर बोली थी, 'फब रहा है तुम्हारे ऊपर।'

जानीन ने उस टीके को नहीं मिटाया था। उसके साथ ही घर लौटी थी। उसकी मां बोली थी, 'यह क्या जंगलीपना है?'

उसका भाई गायेतां उसे एकटक देखता रह गया था।

'क्या देख रहे हो?'

'बहुत प्यारी लग रही हो। मुझे ऐसा नहीं लगता कि कोई दूसरा

ऐसा माथा होगा जहां यह टीका इतना सुन्दर लग सके।'

'सच ?'

'एक चीज की कमी है।'

यह कहकर गायेता ने सामने से तौलिया लेकर उसके सिर पर ओढनी की तरह रख दिया था।

'पूरब का सारा सौंदर्य तुम्हारे ऊपर आ गया है।'

जानीन अपने कमरे के शीशे के सामने दौड़ गई थी।

फ्रांस से शुरू-शुरू के अपने पत्रों में गायेता जानीन को 'मा जोली ऐंज्येन' कहकर संबोधित करता था। जानीन को मेरी प्यारी हिंदू छोकरी का संबोधन बहुत अच्छा लगा था।

सोफे से उठकर वह कमरे में चहलकदमी करने लगी। उसका बाप आने में देर कर रहा था, यह भी हो सकता है कि वह दस मिनट से पहले ही आ गई हो। उसने अपनी घड़ी की राय ली। उसके यहां पहुंचे ही तो दस मिनट से ज्यादा हो गया था। सुबह ठंड लिए हुए थी, पर जानीन को कमरे में चिपचिपाहट का आभास हो रहा था। दीवार पर मातिस, मोने और वानगाग के रिप्रोडक्शन शांत और स्तब्ध थे। नेपोलियन के जमाने की वे चारों कुर्सियां अपने में सिमटी हुई प्रतीत हो रही थीं। दीवार के पूर्वी ओर जो खिड़की मृग कुण्ड की ओर खुलती थी, उसकी बगल में जानीन की अपनी पेंटिंग्स थीं। कभी अन्य चित्रों के बीच उसका अपना बनाया हुआ चित्र बौना-सा लगता था, आज वह उसे पूरे कमरे को घेरे हुए लग रहा था। चित्र में वह बड़ी-बड़ी आंखों वाली जो स्त्री थी, कैनवस और फ्रेम को तोड़कर बाहर आ जाना चाह रही थी। उसकी आंखों का वह कौतूहल भय का रूप ले चुका था।

उधर से आंखें फेरकर जानीन फिर से सोफे पर बैठ गई।

नीचे से आनी और जुल्यें के झगड़ने की आवाज आई। जानीन फिर कुर्सी छोड़कर उठ गई। वह खिड़की के पास पहुंची। जलाशय के सामने पाल और विर्जिनी की मूर्ति पत्तों की आड़ में आ गई थी। महीने-भर उसके हाथ में पाल और विर्जिनी की पुस्तक देखकर गायेता ने उससे पूछा था, 'कितने दिन लगते हैं तुम्हें एक पुस्तक पढ़ने में ?'

'क्यों ?'

'जब से देख रहा हूं, तब से इसी एक पुस्तक को पढ़ती दिखाई पड़ती हो।'

'सातवीं बार पढ़ रही हूं।'

'सातवीं बार ? पागल तो नहीं हो गई ?'

'पागल क्यों होने लगी ?'

'तो होकर रहोगी। उन्नीसवीं शताब्दी की प्रेम कहानी।'

गायेतां यह भी बोल गया था कि उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के प्यार में अंतर होता है। उन्नीसवीं सदी के प्यार के सपने देखना पागलपन के सिवाय और कुछ हो ही नहीं सकता। और जानीन यह नहीं समझ पाई थी कि प्यार कैसे पुराना और नया हो सकता है। उसने अपने-आप से प्रश्न किया था, क्या उन्नीसवीं शताब्दी में ये सारे पक्षी दूसरी तरह के गाने गाते थे क्या ? कालेज में उसकी साहित्य की अध्यापिका कह गई थी कि पाल और विर्जिनी का प्यार तो शाश्वत प्यार है। तब से आज तक यह शाश्वत प्यार उसके लिए अनुत्तरित प्रश्न था। उसकी नजर अपनी हथेली पर पड़ गई। वहां अब भी अमित का नाम लिखा हुआ था। चाहते हुए भी उसे जल्दी उस नाम को मिटा देना पड़ा।

उस दिन भी उसकी हथेली पर अमित का नाम लिखा हुआ था। उसकी हथेली को अपने दोनों हाथों में लेकर अमित ने कहा था, 'तुम बहुत अधिक सपने देखती हो जानी !'

'तुम बिलकुल नहीं देखते ?'

'समय ही कहां मिलता !' अमित हंस पड़ा था।

जानीन ने सीढ़ियां चढ़ने की आवाज सुनी। उसके साथ ही उसने हृदय की धड़कनों को भी सुना। वह सहमी हुई खड़ी रही। उसकी मां थी। आते ही बोली, 'तुम अपने बाप से तर्क मत करना। वह अच्छी रौ में नहीं है।' जानीन चुप रही।

कमरे में प्रवेश करके उसका बाप सीधे खिड़की के पास जा खड़ा हुआ। पाइप को हथेली पर ठोंकते हुए उसने कहा, 'जानीन, मैं तुम्हारा बाप हूं···तुम मेरी बेटी हो। इस घर की हर समृद्धि की तुम हकदार हो,

लेकिन इसका यह मतलब नहीं हो जाता कि तुम जब चाहो, जहां चाहो, मेरी प्रतिष्ठा को उछालती फिरो। मैं सभ्य लोगों के बीच उठने-बैठने वाला आदमी हूं। आज मैं तुम्हें दूसरी बार यह कहने जा रहा हूं कि हमारे अपने लोगों के बीच सभी लड़के मर नहीं गए, जिनसे तुम दोस्ती कर सकती हो। तुम्हारी शिकायतें मेरे पास कहां-कहां से आई हैं, मैं यह कहना नहीं चाहता; पर इतना जरूर कहूंगा कि मैं इस बात के लिए तैयार नहीं हूं कि मेरी अपनी ही कोठी का मलाबार सरदार मुझे तुम्हारे बारे में आकर सुनाए।'

जानीन चुप बैठी रही। उसकी आंखें नीचे थीं।

उसकी मां एकटक अपने पति को देख रही थी। उसकी आंखों में एक याचना थी, जिसे उसके पति ने कोई महत्व नहीं दिया। वह कहता गया। कम बोलने वाला आदमी आज अपनी आदत से बाज आ गया था। पाइप के कश के बाद दरवाजे तक जाते हुए उसने कहा, 'जो इस देश में कभी नहीं हुआ है और न कभी होगा, उसे करने की कोशिश तुम नहीं कर सकतीं।'

वह कमरे से बाहर हो गया।

जाते-जाते दरवाजे को जोर से दे मारा। पूरा कमरा दहल गया। अकुलाहट लिए उसकी आवाज कमरे में गूंजती रही

अपनी इज्जत को मिट्टी में इस तरह मिलने की नौबत कभी नहीं आई थी। वह भी अपनी बेटी के हाथों? मेरा संबंध केवल इस घर से नहीं है। मेरे घर में जो कुछ होता है, उससे और भी कई लोग संबंधित हैं। क्या मुंह दिखाऊंगा उन लोगों को? काश, इस घर को मेरी हैसियत का भान होता!

## ११

जो बात जानीन अपने बाप से नहीं पूछ सकी वह थी :

'फ्रांस से कई डाक्टर, कई बैरिस्टर, कई ग्रेजुएट लड़कियों से शादी

करके उन्हें अपने साथ जब यहां तक ले आ सकते हैं तो फिर क्या कारण है कि इस देश में डेढ़ सौ वर्ष में भी एक गोरी लड़की एक दूसरी जाति के लड़के को ब्याह नहीं पाई ? क्या हम फ्रांस के गोरों से भी अधिक गोरे हैं ?

—

अपने बाप के इस प्रश्न का कि इसका परिणाम क्या होगा, अमित ने हमेशा की तरह कोई उत्तर नहीं दिया। इसलिए कि उसके पास उत्तर नहीं था, बल्कि इसलिए कि उसके उत्तर से उसके बाप के भीतर कोई भी विशेष प्रतिक्रिया नहीं होती। वह उत्तर अमित अपने-आपको ही सुनाता रहता···परिणाम ? सबसे बड़ा परिणाम तो यह होता है कि लड़ने वाले को यह जानकारी हो जाती है कि जीवन लड़ने के योग्य है, इसलिए कि वह मुफ्त की बेकार चीज नहीं हुआ करता।

उसके बाप का यह कहना भी अनुत्तरित रह जाता कि संघर्ष से अगर आदमी के अपने भविष्य बनने की उम्मीद न रहे तो संघर्ष का अर्थ ही क्या रह जाता है। अपने को आश्वासित कर जाने के लिए इसका उत्तर भी उसके अपने-आप से ही होता···जब संघर्ष एक पूरे वर्ग के लिए हो तो फिर यह क्यों आवश्यक हो कि उससे आदमी विशेष का कल्याण हो तभी उसकी सार्थकता मानी जाए। अपने कालेज के दिनों से वह अपने घर में एक ही धुन सुनता आ रहा था कि आदमी अपने लिए आने वाले कल की रोटी का प्रबंध कर ले फिर औरों की भूख का खयाल रखे। इस बात को अमित ने कुछ इतना अधिक सुना था कि वह उससे ऊब गया था। एकाध-बार वह अपनी मां से कह भी जाता कि आज को भूलकर आदमी कल को क्यों महत्व दे। अपनी-अपनी बारी होती है। आज की अपनी बारी है, कल की अपनी होगी। और इन सारी बातों के बाद उसके बाप की जो बात उसके कानों तक पहुंचती, वह होती···तुम्हारी भर्ती किसी पागलों के अस्पताल में होनी चाहिए। इस वाक्य की प्रतिध्वनियों से अमित अपने को हजारों वर्ष का थका हुआ पथिक महसूसने लगता और उसके अपने कंधे पर सिर का बोझ पहाड़-सा लगने लगता।

कभी वह बाहर होने के लिए छटपटाने लगता। कसमकश में उसका कोई अंग, उसके उस प्राण के दायरे से जब सचमुच बाहर आने लगता, उस समय वह दहलकर रह जाता। अपने को किसी तरह से भीतर कर लेना···उसे भीतर रहना था। भीतर से संघर्ष होता है, बाहर से नहीं। संघर्ष के बाद ही वह अपने को उस गिरफ्त से मुक्त कर सकता था, जिसमें वह मुद्दत से चला आ रहा था। उसके बाप के स्वर में लखन का बाप भी यही कह जाता कि वह अपनी योग्यता से नीचे आ गया था। वह अपने चाचा को कोई उत्तर नहीं देता। योग्यता के मुखौटे को अलग करके ही उसे वर्ग के लिए जूझना था जो तीसरे दर्जे के नागरिक की गिनती में पड़े रह गए थे। उन्हीं लोगों के लिए संघर्ष करके उसे अपनी सांसें आजाद लगतीं। उसीमें निहित था उसकी खुशियों का एक बहुत बड़ा भाग। इसके लिए वह बहुत कुछ भुगत चुका था और उन्हें भूल भी गया था। न उसे आने वाले कल के लिए अधिक मोह था न बीत जाने वाले कल के लिए। जीनेवा लेबर कनवेन्शन का विवरण पढ़ते हुए उस दिन एकाएक एक विचार उसके भीतर घर कर गया था···अगर आदमी के भीतर यह इच्छा भी पैदा हो जाए कि उसका आनेवाला कल बेहतर घड़ियों का हो तो उसे अपने वर्तमान को मजबूत करने में लग जाना चाहिए क्योंकि वर्तमान की नींव पर वह आने वाले कल का बोझ टिकेगा।

जितना सशक्त वर्तमान होगा उतना ही उज्ज्वल भविष्य हो सकता है, इसलिए मजदूरों के वर्तमान की चोरी हो जाने का डर उसे हमेशा रहता। सरकारी स्तर पर हुई एक सभा में उसने इसलिए यह कहा था कि राजनीति जिस भविष्य का आश्वासन दिए चली आ रही है, मैं उस-पर कम विश्वास करता हूं। मैं वर्तमान की बात करता हूं। भविष्य में जो होगा, वह होगा; अभी जो होना है, वह हो जाना चाहिए। राजनीति की बेबसी को वह जानता था, इसलिए उसके तकाजे को महत्व न मिलने से वह हताश नहीं हुआ था। चीनी उद्योग के मालिक ने उसपर व्यंग्य कसा था, *पैगम्बर की मुट्ठी में होता है आदमी का भाग्य।*

अमित ने उत्तर दिया था, यह तो मैं नहीं जानता, पर जो मैं जानता

हूं, वह यह है कि मालिकों की मुट्ठियों में जो बंद है, वह मजदूरों की सांसें हैं।

यूनियन के सदस्यों की संख्या के अंदाज से सर्वेक्षण-पत्र की नौ हजार प्रतियां निकाली गई थीं। उन्हें उसी क्षण वितरण की आज्ञा देकर अमित ने तीन विशेष बैठकों के दिन तय किए। विधानसभा की अगली बैठक से सात दिन पहले ही वह चाहता था कि सर्वेक्षण का परिणाम यूनियन की बैठक में पहुंच जाए। काम शुरू करते ही उसने भी दौरा शुरू कर दिया। चेक-आफ की समस्या से पहले उसे महंगाई-भत्ते की समस्या को सुलझा लेना था। मालिकों की ओर से उत्तर अभी नहीं पहुंचा था। उसकी प्रतीक्षा किए बिना अमित ने मजदूरों के बीच की बैठकों को जारी रखा।

पहले ही गांव में उसपर प्रश्नों की बौछार शुरू हो गई, 'महंगाई-भत्ता हमें अभी तक क्यों नहीं मिला ?'

'यूनियन में रहने से क्या फायदा ?'

'हम लोगन के भाग में हमेशा तावा के पछला रोटी का हे होवेला ?'

'पिछली मीटिंग में आपने कहा था कि खेतों में काम करने वाले मजदूरों की यूनियन सबसे ताकतवर यूनियन है, फिर भी क्या कारण है कि हमारी मांग की कोई कदर नहीं होती ?'

'पढ़ल-लिखल ना होवल से इहे हाल होवे ला भैया।'

सभी कुछ सुन चुकने के बाद अमित ने एक-एक प्रश्न का उत्तर दिया। पूरे डेढ़ घंटे तक बोलते रहने के बाद अंत में उसने बैठक के उपस्थित डेढ़ सौ के करीब मजदूरों को वचन देते हुए कहा, 'महंगाई-भत्ता आपको पंद्रह दिन के भीतर मिलकर रहेगा। लेकिन याद रहे, हमारी लड़ाई सिर्फ इतनी ही नहीं है। खेतों में काम करने वाले मजदूरों की स्थिति में जब तक वे सारे सुधार नहीं होते, जिनकी हम लोगों ने मांग की है, तब तक हमें एक सबसे खतरनाक बात से अपने को बचाए रखना है। वह है छोटी-मोटी बातों को लेकर आपस में झगड़ जाना। कुछ लोग इसीमें लगे हुए हैं कि आप लोगों को विभाजित कर दें। अगर ऐसा हो गया तो फिर अब तक का सारा किया-कराया मिट्टी में मिल जाएगा। आप लोगों

का विश्वास हमारे ऊपर नहीं, अपने-आपपर बना रहना चाहिए।'

तीन दिन के भीतर लखन के साथ उसीकी गाड़ी में पंद्रह गावों के लोगों से मिलने के बाद अमित महीने के आखिरी शुक्रवार को दफ्तर ही में बिताने के खयाल से रुक गया था। वह मजदूरों और मालिकों के बीच पिछले आरबिट्रेशन की फाइलें देख रहा था कि मिशेल का फोन आ गया था, 'क्या कर रहे हो अमित ?'

'पिछले आरबिट्रेशन की रिपोर्ट देख रहा हूं।'

'खाना खा चुके ?'

'अभी नहीं।'

'तो फिर मैं आर्क-आं-स्येल में तुम्हारा इंतजार कर रहा हूं। दस मिनट में पहुंच आओ।'

'कौन-कौन हैं ?'

'सिर्फ हम दोनों होंगे।'

'तो फिर आधे घंटे का समय दे ही डालो ?'

'मुझे जोर की भूख लगी है।'

'भूख मुझे भी जोरो की लगी है, पर…'

'खैर, मैं यहां तुम्हारी राह देखूंगा।'

कोई चालीस मिनट बाद ही अमित आर्क-आ-स्येल पहुंच सका। अपने सामने बीयर का गिलास रखे मिशेल अमित का इंतजार कर रहा था। वह उसी छोटे-से आक्वेरियम के पास वाली मेज के सामने था, जहां गेड्रिग जाने से पहले, वह अमित के साथ बीयर ले चुका था। अमित के बैठते ही मिशेल ने पूछा, 'क्या पीओगे ?'

'पूरे महीने बाद आज पहला बीयर लूंगा।' मिशेल ने बेयरे को इशारे से पास बुलाया, 'एक और स्टेला ले आओ।'

अमित और मिशेल की मेज के ठीक सामने हिंदी का वह कवि दो भारतीय मित्रों के साथ बैठा हुआ खाने के बाद काफी ले रहा था। अमित उसे इसलिए जानता था, क्योंकि अभी कुछ ही महीने हुए इस कवि को इंगलैण्ड की महारानी एलीजबेथ की ओर से एम० बी० ई० की पदवी मिली थी। अमित ने उस अवसर पर इस कवि का टेलीविजन पर-इंटरव्यू

भी देखा था। पहले तो अमित को यह बड़ा ही अजीव लगा कि स्वतंत्र हुए देश के नागरिकों को अब भी इंग्लैण्ड की रानी उपाधियों से सम्मानित किए जा रही थीं। पर हिंदी के कवि को सम्मानित होते पाकर अमित को ऐसा आभास हुआ था कि जिस साहित्य-सेवा के लिए कवि को उसके देश की ओर से न कोई आदर मिला था और न ही भारत की ओर से, तो फिर इंग्लैण्ड का यह सम्मान ही सही। हिन्दी में लिखने वालों की कदर तो हुई। अमित ने इधर महीनों से हिंदी की कोई पुस्तक नहीं पढ़ी थी। भारतीय उच्चायोग का पुस्तकालय भी तो कंकाल की तरह था। इधर आशा से भी भेंट नहीं हो रही थी, जिससे एक-दो अच्छी पुस्तकें मिल जातीं।

बीयर आ जाने पर अमित ने पहली चुसकी ली। एक्वेरियम के शीशे से बाहर की ओर देखा। दो बच्चे पर्यटकों के सामने हाथ फैलाए चल रहे थे। मिशेल ने उसके ध्यान को अपनी ओर आकर्षित कर लिया, 'अमित, मैं सोचता हूं, 'चेक-आफ सिस्टम' से हमें वंचित करके सरकार हमारी ताकत को कम करना चाह रही है। ऐसी हालत में तुम खुद सरकार के पक्षधर हो गए तो हमारी स्थिति नाजुक हो सकती है।'

'किसने कह दिया तुमसे कि मैं सरकार का पक्ष ले रहा हूं?'

'आवें सेकी मो कोने।'

'तुम गलत सोचते हो। छोड़ो इस बात को। तुम देखोगे कि मेरा निर्णय वही रहेगा जो मजदूरों का होगा।'

'मजदूरों को अपने भले-बुरे का ज्ञान होता तो आज यह हालत क्यों होती?'

'पहले मैं भी यही सोचता था।'

'अब क्या सोचते हो?'

'मजदूर अपना बुरा-भला बहुत अच्छी तरह समझता है।'

'खैर, क्या खाओगे?'

'मैं बस दो सेंडवीचेज लूंगा।'

'बस?'

'हेवी ब्रेकफास्ट लेकर घर से निकला हूं।'

'तुम्हारी कार कब आ रही है ?'

'कल।'

मेज से मीनू उठाकर मिशेल ने आँखें दौड़ाईं। अमित की ओर देखा, 'सा एन वेज सा।'

'क्या हुआ ?'

'तुम भी देख लो, झींगों और लाब्स्टर खाने के लिए जेब में आठ गुने ज्यादा पैसे होने चाहिए।'

'मैलानियों की कृपा है और क्या।'

'साथ-साथ चीजों के दाम पर कोई खास निगरानी भी तो नहीं। लूट का बाजार खुला हुआ है, लोग लूट रहे हैं।'

'व्यापारियों का पौ हमेशा बारह रहता है। आजकल तो धनी होने का सबसे आसान तरीका यही है कि आदमी दुकान खोलकर बैठ जाए।'

दोनों खाकर बाहर निकले। जुम्मा होने के कारण मुसलमानों की सभी दुकानें बंद थीं। न्यूटन गली से होते हुए दोनों आगे बढ़ गए। गलियां खचाखच भरी थीं। अफ्रीकन बैंक के कान्फरेंस में आए हुए प्रतिनिधियों का झुण्ड शापिंग के लिए निकले हुए थे। लगता था, पूरा शहर ही खरीद लिया जाएगा। पिछले चुनाव में अपनी कुर्सी हार चुकने वाला, वह लंगड़ा मंत्री सामने से गुजरा। बहुत कम लोगों की नजर उसपर पड़ी। बैंकों के पास पैसों की गंध लेते हुए दो-चार भिखारी खड़े थे। समोसे बेचने वाले लड़के ने जो कमीज पहन रखी थी, उसपर एक मछली के पंजर के साथ फ्रेंच का यह वाक्य था—पूरी मछली किसने खा ली ?

दोनों आपस में बातें करते हुए भारतीय उच्चायोग के सामने से गुजरे। उच्चायोग के दो अफसर आपस में जिस भाषा में बातें कर रहे थे, वह अंग्रेजी थी। इसका पता दोनों को दो मिनट सुनने के बाद ही लग सकता था। अमित ने कभी नहीं सोचा था कि मिशेल उससे इसी बात को लेकर प्रश्न कर उठेगा, 'इन लोगों को हिन्दुस्तान की भाषा नहीं आती क्या ?'

'आती तो होगी।'

'तो फिर इस तरह की घटिया अंग्रेजी क्यों बोलते हैं ?'

'आत्मगौरव की भी तो वात होती है।'

दोनों आगे बढ़ गए। मिशेल के उस सवाल से अमित को घाव-सा लगा था। और जव उसने अपने-आपसे पूछा तो उसका कोई उत्तर नहीं मिला उसे। चीनी दुकानों पर लाल चीनी अक्षरों पर उसकी नजर पड़ते ही दूसरा प्रश्न उसके दिमाग में कौंध गया, 'इसके पीछे कौन-सी शक्ति है?'

समूचे द्वीप में कोई भी ऐसी चीनी दुकान नहीं थी, जिसपर लाल चीनी अक्षरों में दुकान का नाम न लिखा हुआ हो। कभी दो ऐसे चीनी नहीं मिलते जो आपस में किसी दूसरी भाषा में वोलते मिल जाते। कौन-सा संगठन था इसके पीछे, क्या राज था इसका? इसपर, इससे पहले भी अमित कई वार सोच चुका था। एक वार उसने आह-पियांग की पीठ ठोंकते हुए कहा था, 'तुम ठीक कहते हो आपी कि हमारे पास अपनी जवान में कोई भी दैनिक पत्र नहीं। मैं तो तुम लोगों के संगठन की दाद देता हूं। तुम लोग आठ हो और चार पत्र निकलते हैं तुम्हारे।'

यह वात यूनियन की उस मीटिंग में हुई थी, जव मजदूरों के अखवार की चर्चा हो रही थी। अमित ने कहा था कि यूनियन के अखवार के लिए दो ही भाषाएं हो सकती हैं—भोजपुरी या हिंदी। ये ही दो भाषाएं हैं, जिन्हें गांव के मजदूर सौ प्रतिशत जानते हैं। इसके वाद तो अखवार निकालने की वात ही मर गई।

पाप हेनेसी गली के वाद दोनों अपने-अपने दफ्तर चले गए। पर अलग होने से पहले मिशेल ने फिर एक वार कहा था, 'तुम चेक-आफ के वारे में एक वार फिर सोच लेना।'

मिशेल अमित के कालेज का सहपाठी था। यह संयोग ही रहा कि दोनों का क्षेत्र भी एक ही वना। क्षेत्र एक होने पर वहुत कम अवसरों पर अमित और मिशेल के विचार मेल खाते थे। जिस मुद्दे पर मिशेल समझौता कर लेता था, उस मुद्दे पर अमित से समझौता कभी नहीं हो सका था।

दफ्तर पहुंचकर अमित ने सुरेन को पांच आदमियों से वातें करते पाया। पता चला कि उन पांचों में से तीन व्यक्तियों को वनारस की कोठी से निकाल दिया था। उनमें से एक व्यक्ति को अमित वहुत अच्छी तरह

जानता था। बनारस के मजदूरों के बीच वह बहुत सक्रिय नेता था। अमित ने उससे प्रश्न किया, 'कब से तुम्हारे मित्रों को काम से निकाला गया है ?'

'आज पांचवां दिन है।'

'वजह ?'

'पुरानी कहानी है।'

'मतलब ?'

'चुनाव के समय की खीस अभी निकाली जा रही है।'

'खैर, तुम पूरी बात तो बताओ।'

चुनाव के दौरान मालिक ने सभी मजदूरों की एक मीटिंग बुलाई थी। उसमें उसने हम सभीको यह कहा था कि हम जिस दल के साथ चल रहे हैं, वह दल हमको खाई में ले डूबेगा। हमारा देश अभी आजादी के लिए तैयार हुआ है। अपनी औकात से बड़े बोझ को अपने ऊपर लेकर वह डूब जाएगा, उसके साथ-साथ हम सभी तबाह हो जाएंगे। वह चाहता था कि हम उस दूसरे दल के साथ चलें, जो मारिशस की रक्षा के लिए, उसे फ्रांस के साथ जोड़ना चाहता था। हम सभी इसके खिलाफ थे पर मेरे इन साथियों ने खुलकर विरोध किया था। रामदेव से तो मालिक की कहा-सुनी भी हो गई थी। इसी बात का बदला मालिक ने इतने दिनों बाद लिया।'

'कोई बहाना ?'

'सरदार से इनका झगड़ा हो गया था।'

'क्यों ?'

'गांव की एक लड़की को लेकर।'

'देखो मैं मंगलवार को तुम लोगों के यहां आ रहा हूं। लौटकर तुम लोग कोई भी ऐसी हरकत मत करना जिससे कोठी वालों को दूसरा बहाना मिल जाए। कोई कारण नहीं है कि वे तुमको इस तरह नौकरी से अलग कर दें।'

पांचों आदमियों के चले जाने पर अमित सुरेन को साथ लिए श्रम मंत्रालय चल पड़ा।

उसके दिमाग में जो कौंधती रही, वह परसों सुबह की घटना थी। सवाना गांव के मजदूरों के दो दल। एक संतुष्ट, दूसरा असंतुष्ट। असंतुष्ट दल से उस युवक ने चिल्लाकर कहा था, 'ये अपने को संतुष्ट बताने वाले वे लोग हैं, जिन्हें धनी मालिकों की मेज की बची हुई जूठन हजम करने को मिल जाती है। एक अच्छा घर, दो अच्छे कपड़े और शाम के वक्त थोड़ी-सी शराब। बस, इसी नशे में वे अपने को अपने मजदूर भाइयों से अलग बताने लगे हैं। मुझे ऐसे लोगों से घृणा है।'

तभी बीच में अमित को बोलना पड़ा था, 'हम अपने उद्देश्य को घृणा के साथ न जोड़ें। हमारा उद्देश्य न मालिकों से घृणा है, न दिशाहीन मजदूरों से। हमारा उद्देश्य अपने अधिकारों की सुरक्षा है। इसके लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम पूंजीपतियों की साजिशों को अच्छी तरह समझ लें। इनकी मनोवृत्तियों को समझ लें। ये लोग यही चाहते हैं कि हमारे लोग हमेशा वैसे ही रहें, जैसाकि पच्चीस वर्ष पहले थे और आज भी लगभग वही हैं। ये पूंजीपति नहीं चाहते कि मजदूर में संगठन रहे। ये नहीं चाहते कि हमारे लोग शिक्षित हों, वे यह भी नहीं चाहते कि मजदूरों के दिन सुधरें।

'वे जो चाहते हैं, हम वह नहीं चाहते और जो वे नहीं चाहते, वही हमें करना है, अपनी प्रतिष्ठा और अपने अधिकारों के लिए। हम यह नहीं चाहते कि जो-जो सुविधाएं उन्हें नसीब हैं, वे सभी हमें रातोंरात नसीब हो जाएं; पर हम यह भी नहीं चाहते कि हमारी अपनी स्थिति में कोई सुधार आए ही नहीं।

'मजदूरों को न तो मोटरगाड़ी चाहिए, न चार-पांच नौकर और न ही वैज्ञानिक सुविधाओं से भरा हुआ महल। ये सब चीजें न चाहते हुए भी मजदूर को अपनी इज्जत चाहिए, अपना हक चाहिए।'

उन संतुष्ट लोगों में से तीन मजदूर आज सुबह अमित से मिलने आ गए थे।

## १२

सात दिन हो चुके थे अमित को किशोर से मिले।

पिछली बार किशोर बोल गया था, 'कलाकार एक अकेला जीव होता है।'

अकेला जूझते रहने के बाद जब वह किसी कृति को जन्म देता है, तब उसी क्षण उसके भीतर यह आशा भी जन्म लेती है कि उसकी रचना को कोई देखे और अपनी प्रतिक्रिया दे।

ऐसा नहीं होने पर कलाकार फिर एक अकेला जीव होकर रह जाता है, अपनी यातनाओं के बीच।

किशोर अकेला कोने में पड़ा रहा।

अमित की जाने की इच्छा नहीं थी। वह अपने दफ्तर में बैठा हुआ उधेड़बुन से बाहर होने की चेष्टा में उमीस डूबा रहा। बगल के कमरे से राविया की अंगुलियों की रफ्तार टाइप राइटर पर बोल रही थी। बीच-बीच में नुरेन के अन्य लोगों के साथ बातें करने की आवाज भी आ रही थी। अभी पाँच ही मिनट पहले आशा का फोन आया था कि कालेज के सभी विद्यार्थी वो बेसब्री थी। फोन रख चुकने के बाद अमित ने अपने-आप से पूछा था—बेसब्री किसलिए? उसे सुनने के लिए या ट्रेड यूनियन के बारे में जानने के लिए? दोनों बातें उसे निरर्थक लगी थी। पंद्रह दिन पहले वे दोनों लड़के जो उससे मिलने आए थे, वे उसके वही शिष्य थे, जिन्होंने अमित के इस्तीफा पर कालेज में हड़ताल करने की ठानी थी। इसका पता अमित को आशा से चला था। उसी क्षण कालेज पहुंचकर उसने दोनों से बातें की थीं और हड़ताल नहीं हुई थी। अमित को उस कालेज में जाना बड़ा कठिन लग रहा था; पर चूंकि वह दोनों लड़कों को वचन दे चुका था, इसलिए उसका अपना अंतिम निर्णय जाने के पक्ष में हुआ।

उसके दिमाग में जो कौंधती रही, वह परसों सुबह की घटना थी। सवाना गांव के मजदूरों के दो दल। एक संतुष्ट, दूसरा असंतुष्ट। असंतुष्ट दल से उस युवक ने चिल्लाकर कहा था, 'ये अपने को संतुष्ट बताने वाले वे लोग हैं, जिन्हें धनी मालिकों की मेज की बची हुई जूठन हजम करने को मिल जाती है। एक अच्छा घर, दो अच्छे कपड़े और शाम के वक्त थोड़ी-सी शराब। बस, इसी नशे में वे अपने को अपने मजदूर भाइयों से अलग बताने लगे हैं। मुझे ऐसे लोगों से घृणा है।'

तभी बीच में अमित को बोलना पड़ा था, 'हम अपने उद्देश्य को घृणा के साथ न जोड़ें। हमारा उद्देश्य न मालिकों से घृणा है, न दिशाहीन मजदूरों से। हमारा उद्देश्य अपने अधिकारों की सुरक्षा है। इसके लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम पूंजीपतियों की साजिशों को अच्छी तरह समझ लें। इनकी मनोवृत्तियों को समझ लें। ये लोग यही चाहते हैं कि हमारे लोग हमेशा वैसे ही रहें, जैसाकि पच्चीस वर्ष पहले थे और आज भी लगभग वही हैं। ये पूंजीपति नहीं चाहते कि मजदूर में संगठन रहे। ये नहीं चाहते कि हमारे लोग शिक्षित हों, वे यह भी नहीं चाहते कि मजदूरों के दिन सुधरें।

'वे जो चाहते हैं, हम वह नहीं चाहते और जो वे नहीं चाहते, वही हमें-है, अपनी प्रतिष्ठा और अपने अधिकारों के लिए। हम यह नहीं चाहते कि जो-जो सुविधाएं उन्हें नसीब हैं, वे सभी हमें रातोंरात नसीब हो जाएं; पर हम यह भी नहीं चाहते कि हमारी अपनी स्थिति में कोई सुधार आए ही नहीं।

'मजदूरों को न तो मोटरगाड़ी चाहिए, न चार-पांच नौकर और न ही वैज्ञानिक सुविधाओं से भरा हुआ महल। ये सब चीजें न चाहते हुए भी मजदूर को अपनी इज्जत चाहिए, अपना हक चाहिए।'

उन संतुष्ट लोगों में से तीन मजदूर आज सुबह अमित से मिलने आ गए थे।

सात दिन हो चुके थे अमित को किशोर से मिले ।

पिछली बार किशोर बोल गया था, 'कलाकार एक अकेला जीव होता है ।'

अकेला जूझते रहने के बाद जब वह किसी कृति को जन्म देता है, तब उसी क्षण उसके भीतर यह आशा भी जन्म लेती है कि उसकी रचना को कोई देखे और अपनी प्रतिक्रिया दे ।

ऐसा नहीं होने पर कलाकार फिर एक अकेला जीव होकर रह जाता है, अपनी यातनाओं के बीच ।

किशोर अकेला कोने में पड़ा रहा ।

अमित की जाने की इच्छा नहीं थी । वह अपने दफ्तर में बैठा हुआ उधेड़बुन से बाहर होने की चेष्टा में उसीमें डूबा रहा । बगल के कमरे से राबिया की अंगुलियों की रफ्तार टाइप राइटर पर बोल रही थी । बीच-बीच में सुरेन के अन्य लोगों के साथ बातें करने की आवाज भी आ रही थी । अभी पाच ही मिनट पहले आशा का फोन आया था कि कालेज के सभी विद्यार्थी को बेसब्री थी । फोन रख चुकने के बाद अमित ने अपने-आप से पूछा था—बेसब्री किसलिए ? उसे सुनने के लिए या ट्रेड यूनियन के बारे में जानने के लिए ? दोनों बातें उसे निरर्थक लगी थीं । पद्रह दिन पहले वे दोनों लड़के जो उससे मिलने आए थे, वे उसके वही शिष्य थे, जिन्होंने अमित के इस्तीफा पर कालेज में हड़ताल करने की ठानी थी । इसका पता अमित को आशा से चला था । उसी क्षण कालेज उसने दोनों से बातें की थीं और हड़ताल नहीं हुई थी । अमित कालेज में जाना बड़ा कठिन लग रहा था; पर चूंकि वह दोनों वचन दे चुका था, इसलिए उसका अपना अंतिम निर्णय जाने —

फोन पर मिशेल से कुछ जरूरी बातों के बाद अपने दफ्तर से बाहर होकर उसने सुरेन से बातें कीं और कालेज को चल पड़ा।

उससे केवल इतना ही कहा गया था कि वह यूनियन के बारे में बोले। वह खुद नहीं समझ पा रहा था कि वास्तव में उसे बोलना क्या था। कुछ समय पहले आशा ने उसे बताया था कि उसका विषय ट्रेड यूनियनिज्म था। कार चलाते हुए वह सोचने लगा, इसके किस पहलू पर बोलूं ? जो हर जगह बोलता रहा हूं, क्या उन्हीं बातों को छात्रों के सामने भी रखा जा सकता है ?

आधे घण्टे बाद उसने कालेज के कान्फरेंस हाल में खुद को डेढ़ सौ छात्रों के सामने पाया। वह कोई घण्टे तक आज के संदर्भ में श्रमिक संघवाद की भूमिका पर बोलता रहा। इसके तुरंत बाद एक विद्यार्थी ने हाथ ऊपर उठाते हुए पहला प्रश्न किया, 'राजनीतिक हस्तक्षेप को ट्रेड यूनियन कहां तक स्वीकारने को तैयार है ?'

अमित ने हंसकर कहा, 'कहां तक नहीं स्वीकारने को तैयार है, मैं इसका उत्तर देना चाहूंगा। ट्रेड यूनियन राजनीतिक सहयोग को नहीं नकारता, उसके हस्तक्षेप को नकारता है। राजनीति में प्रायः उद्देश्य की भिन्नता और विविधता होती है, जबकि श्रमिक संघ का एक मात्र उद्देश्य श्रमिकों की स्थिति को बेहतर बनाना होता है।'

'इस एक उद्देश्य के कारण ही संघ को सक्रिय होना पड़ता है। इस सक्रियता का रूप कोई हो, पर उद्देश्य वही रहता है, मेहनतकशों का खयाल रखना। जबकि राजनीति अपने भिन्न उद्देश्यों के कारण कभी संघ के इस उद्देश्य में बाधक हो जाती है, इसलिए संघ को इस मामले में बहुत ही सावधानी बरतनी पड़ती है। राजनीतिक हस्तक्षेप के आगे सहम जाने का मतलब यूनियन के लिए मौत होता है। हस्तक्षेप प्रायः धमकियों के बल हुआ करता है। इसलिए कभी-कभार ट्रेड यूनियन इस धमकी के सामने ठिठकता जरूर है, पर उसे सहम जाना नहीं कहा जा सकता।'

दूसरे छात्र ने फ्रेंच में पूछा, 'यह भी तो कहा जाता है कि यूनियन सौदेबाजी के लिए हुआ करती है।'

इस बार भी अमित ने हंसकर कहा, 'यह उतना ही सच है, जितना

कि तुम्हारी पीढी के बारे में यह कहा जाना कि वह बिना सोचे-समझे आन्दोलन की मशीन है। श्रमिक संघो की नींव, इस खयाल से शायद डाली गई होगी। यह भी हो सकता है कि इसी बात को लेकर उसका उदय भी हुआ, पर आज के इस आन्दोलन को मात्र सौदेबाजी का विशेषण दे डालना लाछन के सिवाय और कुछ नहीं हो सकता। आज का यह संघ मजदूरों की समस्याओं को हल करके उसको लाभ पहुंचाने के लिए है। अब इसीको अगर सौदेबाजी कहा जाए तो दूसरी बात हुई। मैं फिर से दोहरा दूं कि संघ का एकमात्र उद्देश्य श्रमिको का हित है।'

'श्रमिक संघ का दूसरा अर्थ हड़ताल भी तो हो सकता है।'

'ठीक उसी तरह जिस तरह युवा क्रांति का दूसरा अर्थ बांझ क्रांति हो सकता है।'

'मिस्टर अमित, आप अपने हर उत्तर के लिए हमारी पीढ़ी को जिरहबख्तर क्यों बना रहे हैं ?'

'कवच मोम का नहीं, लोहे का बनाया जाता है, इसीलिए।'

तालियों के बाद अगला सवाल एक लड़की का था, 'दुनिया का सबसे बड़ा ट्रेड यूनियन कहां पर है ?'

'अभी तक तो पश्चिम जर्मनी का मेटल वर्कर्ज यूनियन विश्व का सबसे बड़ा यूनियन माना जाता है। इसके सदस्यो की संख्या पच्चीस लाख से ऊपर है।'

उसी लड़की ने दूसरा प्रश्न किया, 'मिस्टर अमित, विश्व का सबसे पुराना यूनियन कौन-सा है ?'

'लगता है, किसी क्विज प्रोग्राम में आ गया हूं। खैर, दुनिया का सबसे पुराना यूनियन मेरे खयाल में बूट बनाने वालों का संघ था, जिसकी स्थापना १८६०-७० के आस-पास हुई थी।'

'सबसे पहली हड़ताल कहां पर हुई थी ?'

अमित एक बार फिर हंसा, 'वह तो शायद कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन ने किया था।' इस उत्तर पर केवल वे ही लोग हंस सके जिन्हें संदर्भ की जानकारी थी। हंसी के बाद ही अमित ने सही उत्तर दिया, 'कहा जाता है कि ईसा से ३०९ वर्ष पूर्व रोम शहर में आरिसतोस नामक यूनानी

संगीतज्ञ ने किया था। इससे पहले कि इस तरह के और भी प्रश्न किए जाएं, मैं यह बता देना चाहता हूं कि विश्व की सबसे लंबी हड़ताल अभी हाल ही में १९६१ में समाप्त हुई है ३३ वर्ष बाद। यह हड़ताल डेनमार्क के नाइयों की थी। सबसे बड़ी समूह हड़ताल १९२६ में हुई थी और इसमें तीस लाख के करीब मजदूरों ने भाग लिया था। और कोई प्रश्न ?'

इसके बाद भी प्रश्न हुए पर लेक्चर हाल से बाहर।

आखिरी सवाल आशा का था, 'क्या हाल है तुम्हारी जानीन का ?'

छात्रों के बीच बोल चुकने के बाद अमित ने यह नहीं सोचा था कि प्रेस कान्फरेंस के दौरान उसे ट्रेड यूनियन की परिभाषा देनी पड़ेगी। फिडेल कास्ट्रो शैली की दाढ़ी थी उस पत्रकार की, जिसने सबसे अधिक प्रश्न किए थे। उसीके एक अप्रत्याशित प्रश्न पर अमित को क्रोध आ गया था, पर उसे दबाकर उसने धीरे से कहा था, अगर कोई ट्रेड यूनियन का ऐसा लीडर होगा तो मैं उससे यही अनुरोध करूंगा कि वह अपने व्यक्तित्व को निखारने के बदले उन हजारों मजदूरों की स्थिति सुधारने में अधिक समय बिताए। सही बात तो यह है कि ट्रेड यूनियन के आंदोलन में कोई नेता नहीं हुआ करता। वे एक उद्देश्य के नौकर होते हैं। उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही उन्हें सांसें लेनी पड़ती हैं। यूनियन को अपने लोगों और ... समय का खयाल रखना पड़ता है। अपना खयाल रखने वाला ट्रेड यूनियनिस्ट ओझा हो सकता है, डाक्टर नहीं। मेरे ऊपर यह आरोप बेबुनियाद है कि मैं सत्ता का साथ लेने लगा हूं। यूनियन मजदूरों की अमानत होती है, सत्ता की नहीं। उसे आम आदमी के लिए लड़ना होता है। उसकी रक्षा करनी पड़ती है। मुंह बाए भेड़ियों से मुट्ठी-भर लोगों के यहां सारी सुविधाएं बंद हैं। यूनियन उन सुविधाओं को वहां से रिहा करके मजदूरों के बीच बांटने के लिए लड़ती है; पर इसका यह मतलब नहीं कि यूनियन सत्ता की उन बातों की भी अवहेलना करे जो उसे मजदूरों के हित में प्रतीत हों। इसका यह तात्पर्य नहीं हो जाता कि कल अगर सत्ता मजदूरों की मुट्ठी से उसके हक को छीनना चाहे तो भी हम उसके साथ होंगे। इस तरह के खयाल दो ही तरह के लोगों के हो सकते हैं, एक तो उस आदमी के जो यूनियन का अर्थ नहीं जानता और दूसरा उस व्यक्ति के जिसे हर

हालत में हमारे आंदोलन को कमजोर करना है।'

अमित के लिए वह दिन इधर का उसका सबसे व्यस्त दिन रहा। उसी शाम उसे मजदूरों के बीच उसी स्वर मे बोलना पड़ा, 'मेरे दोस्तो, हमें अपने इस आंदोलन से अब तक जो सीख मिली है, वह यही है कि हम किसी भी हालत में अपनी एकता को खंडित न होने दें। विभाजित होने का मतलब हमारे लिए लड़ाई मे निहत्थे हो जाना है। वे लोग, जिन्होंने औरो के हकों को मारकर अपने को हम लोगों से अलग जीव प्रमाणित कर दिया है, अपनी हर सांस के साथ यही चाहते हैं कि हम विभाजित हों। इसके लिए वे लोग कई तौर-तरीकों को अपनाएंगे। हमे उन सभी बातों से बचना है। हमारे ही बीच से, प्रलोभन मे आकर, कोई उन लोगों के प्रयोजन को जाने बिना, हमें भड़काने और अलग-अलग बांटने का प्रयत्न कर रहा है। हमे सचेत रहना है। आदमी जो कुछ करता है, अपने हाथ-पाव-आखें-दिमाग सभीके साथ करता है और सफल रहता है। अपने शरीर के उन अंगों को अलग-अलग करके हम कुछ नही कर सकते। यह वह समय है, जब हमें अपनी छोटी-छोटी बातों को महत्व देकर, उस बडी बात से मुकरना नही है। आज के उखड़े हम फिर नही पनप सकते। एक बाढ़...बहुत बडी बाढ़, कल हमें डुबा जाने के लिए उठने की कोशिश में है, उसे अभी से ही रोकने की कोशिश नहीं की गई तो फिर देर हो जाएगी और हम बहा लिए जाएंगे। यूनियन आपके लिए कुछ नही कर सकती अगर आप खुद अपने हक को पहचानते हुए उसके लिए खडे नही होंगे।'

वे एक गांव के लोग थे, जिनके सामने वह बोल रहा था। देश-भर मे सैकड़ो गाव थे, जहा उसे बोलना था। चेतना लानी थी। लोगों को एक धमिक सूत्र में बाधना था।

कई दिन के बाद अमित ने अनुभव किया कि उसकी शक्ति वापस आ गई थी।

एक रात पहले अमित ने अपनी डायरी मे लिखा था. वह लड़का गोरा था। आखें नीली थी उसकी। मुश्किल मे २०-२१ साल का होगा। उसके पास कृषि विज्ञान का डिप्लोमा था, जो उसे दो-तीन साल के अध्ययन के बाद मिल गया था। उसीके बल, वह कृषि मंत्रालय में सलाहकार

था। उसके लिए उसे साढ़े तीन हजार रुपया माहवार मिलता था। आठ साल के एक मजदूर के सामने खड़ा होकर उसने कहा, 'ए बूढ़े, तुम्हारे कुदाली पकड़ने का ढंग अच्छा नहीं है।' बूढ़े ने आंखें उठाकर उसकी ओर देखा, 'सलाम साहेब !'

'मैं कह रहा हूं, तुम्हारे कुदाली पकड़ने का ढंग अच्छा नहीं है।'

पचास साल से वह आदमी खेतों में जूझ रहा था। पचास साल से वह उसी तरह कुदाली थामे आ रहा था। उसी तरह कुदाली थामकर वह सभी से अधिक काम कर लेता था। उसने चुपचाप कुदाली को दूसरे ढंग से पकड़ने की कोशिश की। लड़का दूसरे मजदूर को सुझाव देने आगे बढ़ गया। साठ साल का वह मजदूर कुदाली को सही ढंग से पकड़ने की कोशिश करता रहा।'

## १३

कालेज के दिनों में अमित और किशोर एक रंग की कमीज पहनते थे। एक ही तरह की पतलून, एक ही तरह के जूते। दोनों की दोस्ती पर बाकी दोस्त दोनों को जोड़ा-जोड़ी कहकर चिढ़ाते।

'जब हम दोनों एक-दूसरे के इतने करीब हैं तो फिर क्या वजह है कि स्वभाव हमारे इतने भिन्न हैं ?'

'भिन्न तो नहीं है।' किशोर ने कहा।

'हम दोनों का सोचना कभी एक जैसा नहीं रहा। तुम एकदम शांत रहते हो और मैं चंचल स्वभाव का हूं।'

'मुझे तो तुम चंचल नहीं लगते।'

'तुम लड़कियों से दूर भागते हो।'

कुछ देर चुप रहने के बाद किशोर बोला था :

'मुझे लड़कियां पसंद नहीं।'

जब अमित भारत जाने को हुआ था, तब किशोर ने उसे रोकने का

बहुत प्रयत्न किया।

'हममें कभी न जुदा होने की बात हुई थी अमित!'

'यह जुदाई स्थायी थोड़े ही है। और फिर मैं तो चाहता हूं कि तुम भी साथ चलो। कला की ओर तुम्हारी रुझान है। डिग्री लेकर लौटो।'

'तुम तो ऐसे कहते हो, जैसे भारत पड़ोस का ही कोई गांव हो, जहां दो पैसे में भी आदमी पहुंच सकता है।'

अमित के प्रस्थान के दिन तक किशोर कहता रह गया था, 'बड़ा असह्य होगा यह अकेलापन।'

'दोस्ती और मुहब्बत तो पास रहकर जितनी गहरी नहीं होती, वह दुराव से उससे दुगनी गहरी हो जाती है—और फिर यह दो-तीन वर्ष कौन-सा बड़ा समय होता है? तुम देखना, कितनी जल्दी लौट आऊंगा।'

इसके बाद किशोर उदास रह गया था।

## १४

अमित को धीरे-धीरे होश आया। होश आ जाने पर भी उसे अपनी पलकें भारी ही लगीं। आंखों के सामने एक झालर-सी झिलमिलाती रही। आंखों को छत से हटाकर उसने अगल-बगल देखा। वही धुंधलका—कांपता हुआ। गर्दन में दर्द महसूस कर उसने अपने हाथ को उस जगह पर पहुंचाने की चाह में पाया कि उसके हाथ पीछे की ओर बंधे हुए थे। उसके पांव भी बंधे हुए थे। किसी तरह करवट बदलकर फिर बैठने में सफल रहा। उसके ठीक सामने तेज रोशनी का बल्ब जल रहा था। उसने आंखें मूंद लीं। कुछ देर बाद आंखें खोलकर चारों ओर देखा। तीन ओर सीमेंट की दीवारें थीं। चौथी ओर शीशे की बंद खिड़कियां थीं। सलाखें थीं। खिड़की के ऊपर के भाग खुले हुए थे। वहां भी लोहे की छड़ें थीं। बीच की खिड़की के पास पहुंचकर अमित ने बाहर झांकने की कोशिश की। बाहर अंधेरा था। चट्टानों से टकराती हुई लहरों की

आवाजें थीं। उसने अपने हाथ के बंधनों को आजमाया। रस्सी नुकीली दांतों की तरह चुभकर रह गई। उसकी कलाई की घड़ी ज्यों की त्यों बंधी हुई थी। रात के साढ़े दस बज रहे थे। लहरों की आवाज को भेदती हुई सेगा की आवाज आई :

रोजाना सो मारी फिर न्वाये
मे रोजाना लिपा तू सेल
जामें ली मीजेर जीमून पू दोरमी आवेक ली
(रोजाना का पति डूब गया
पर रोजाना अकेली नहीं
उसे सोने के लिए मर्दों का अभाव कभी नहीं हुआ।)

उसके बाद ढपली की आवाज थी।···और कोयले पकने की गंध।

कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था, फिर भी अमित को समझते देर नहीं लगी कि यह आवाज बहुत ही पास से आ रही थी। हो सकता है कि वह किसीके बंगले का रखवार गा रहा था या वह जिस स्थान पर था, वह मछुओं की कोई बस्ती हो।

उस कमरे को चारों ओर से देखते हुए अमित ने अपने-आपसे पूछा, पर मैं यहां पहुंचा कैसे ?—शाम को छः बजे के करीब रहा होगा। वह मजदूरों से मिलकर लौट रहा था। उसकी गाड़ी का एक मोड़ पर रोका जाना···तीन आदमियों का उसकी कार में जबरदस्ती आ बैठना। उसे ड्राइविंग सीट से हटाकर एक व्यक्ति का उसी जगह पर आ जाना। पिछली सीट के एक दूसरे व्यक्ति द्वारा दबोचा जाना और फिर अपने कंधे पर किसी प्रहार से तिलमिला जाना। अमित को लगा कि वह किसी स्टंट फिल्म का ट्रेलर देख रहा था। उस भारी दर्द को उसने चुपचाप महसूस लिया था।···सूरज अभी डूबा नहीं था, फिर भी घटाटोप अंधेरा छा गया।

अमित कैद था, पर वह अपने को किसका कैदी समझे ? चोर-डाकू होते तो उसकी जेबें खाली कर ली गई होतीं। उसकी घड़ी खोल ली गई होती। ऐसा कुछ भी तो नहीं हुआ था। मजदूरों के बारे में सोचा, जिनके यहां से वह लौट रहा था। उन लोगों के बारे में सोचा, जिनके

साथ मजदूरों के अधिकारों के लिए वह लड़ रहा था। जानीन के बारे में सोचा। उसका खयाल जानीन के बाप पर रुका। कुछ समझ में नहीं आ रहा था उसको कि कौन थे वे तीनों लोग? उसको यहां बंद कर जाने में उनका क्या प्रयोजन था? यह स्थान कौन-सा था? समुद्र-किनारे किसी-का बंगला हो सकता है, किसका? कहीं पास ही तंदूर में कोयले पक रहे थे। कोयले की गंध से माहौल भारी था।

दरवाजे के पास उसने आवाजें सुनीं। दरवाजा खुला। वे ही तीनों आदमी फिर सामने आ गए। एक ने आगे बढ़कर उसके बंधन खोले। घुंघराले बाल वाले व्यक्ति ने सिगरेट के लंबे कश के बाद कहा, 'तुम्हारी कार का पेट्रोल खत्म हो गया था। हम भरवा लाए।'

'कौन हो तुम लोग? मैं यहां क्यों लाया गया हूं?'

'तुम्हारे पहले सवाल का जवाब हम जरूरी नहीं समझते। दूसरे का दे रहे हैं—तुम यहां इसलिए लाए गए हो कि तुम्हें मालूम हो जाए कि एक दिन तुम इसी तरह कहीं से उठा लिए जाओगे और गरदन में पत्थर का बोझ लिए समुद्र में डुबो दिए जाओगे। जिस तरह आज किसीको कुछ नहीं मालूम हुआ, उसी तरह तुम्हारे डूब जाने के बाद भी लोग यही सोचेंगे कि उड़नतश्तरी वाले तुम्हें अपने यहां उठा ले गए।'

'मुझे इस तरह उठा लाने का कारण क्या है?'

'कहा न, जो हम आने वाले दिनों में करने को विवश हो जाएंगे, उसी-की यह एक झलक थी।'

'मैं यहां से बाहर होना चाहता हूं—यह कौन-सी जगह है?'

'यह स्थान कुछ भी हो, हम तुम्हें बड़े आदर के साथ तुम्हारे शहर तक छोड़ आएंगे; पर इससे पहले तुम हमारी एक बात ध्यान से सुन लो।'

इसके साथ ही उस व्यक्ति ने फ्रिओली में एक बड़ी-सी गाली दी। अमित चुप रहा।

'अगर तुमने उस लड़की का पीछा नहीं छोड़ा तो फिर इस बार की तरह यहां से लौटकर नहीं जाओगे।'

'कौन होते हो तुम…?'

अमित की बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि दाहिनी ओर के

आदमी ने उसपर थप्पड़ चला दिया। घुंघराले बाल वाले काले व्यक्ति ने फुर्ती से उस थप्पड़ को रोक लिया। दोबारा अमित की मां को क्रिओली में गाली देकर बोला, 'हम अभी तो नहीं, पर कल तुम्हारी मौत हो सकते हैं।'

'किसके आदेश पर तुम लोग···?'

'चोंच बंद कर, नहीं तो हमेशा के लिए बोलना बंद कर जाओगे।'

'यह बंगला उसीका होगा, जिसका तुम लोग काम कर रहे हो।'

'यह तुम्हारा कब्रिस्तान हो सकता है, अगर तुमने यह आखिरी चेतावनी नहीं मानी।'

उसने अपनी बगल के व्यक्ति से इशारे में कुछ कहा। वह आदमी आगे आया। अपने हाथ के रूमाल को अमित की आंखों पर ले जाकर पट्टी बांध दी। आपत्ति का कोई अर्थ नहीं था, इसलिए अमित चुप रहा। अपने सामने के अंधेरे में उसने सुना, 'हम तुम्हारी गाड़ी में तुम्हें तुम्हारे शहर तक छोड़ आते हैं।'

अमित कुछ नहीं बोला। कोई चालीस कदमों के बाद वह अपनी गाड़ी की पिछली सीट पर था। गाड़ी स्टार्ट हो जाने पर भी तंदूर से कोयले की गंध आती रही। उस जगह से हटते हुए अमित कम से कम एक निष्कर्ष पर पहुंच चुका था। जिस स्थान में वह कोई चार घंटे तक बेसुध पड़ा रहा, वह समुद्री इलाके का बंगला ही था···पर वह बंगला जानीन के बाप का नहीं हो सकता। वहां की लहरों की आवाज भिन्न थी और फिर उस इलाके में कोयले नहीं पकाए जाते। रास्ते में अमित ने अपनी आंखों से पट्टी हटाने की एक-दो कोशिशें कीं, पर सफल नहीं हुआ। चक्करदार रास्ते के ढलानों का आभास पाकर वह इलाके का अनुमान लगाना चाह रहा था, पर कुछ निर्धारित नहीं हो पाया था।

अपने स्कूल के दिनों में बस से यात्रा करते समय वह प्रायः आंखें बंद करके जगहों को पहचानने की कोशिश करता और काफी हद तक सफल भी रहता···पर वह शायद इसलिए कि वह रास्ता रोज का जाना-पहचाना था और हर बस स्टाप पर रुकने से जगह का अनुमान लगाना

आसान हो जाता था। इस समय तो उससे समय का भी अंदाजा नहीं लगाया जा रहा था। लग रहा था, वह घंटे से अधिक की यात्रा थी। तीनों आदमियों के वार्तालाप में भी वह उनके बारे में अधिक नहीं जान सका था। उसे सभी कुछ विचित्र-सा लग रहा था। उसे कैद रखा भी गया तो सिर्फ पांच-छः घंटों के लिए ही क्यों? वह धमकी तो रास्ते में रोककर भी उसे दी जा सकती थी। कुछ भी रहा हो, अमित इस बात पर विश्वास किए बिना नहीं रह सका कि यह सभी कुछ जानीन के बाप की ओर से किया जा रहा था। जिस द्विविधा में वह पड़ा रहा कि इसके बारे में जानीन को बताए या न बताए। सोच रहा था, बताने से क्या लाभ? वह जानीन को दुखी नहीं करना चाह रहा था···पर फिर एक बात थी। जानीन को कम से कम उस मनोवृत्ति का पता तो चले।

कार के झटके के साथ रुकने पर अमित को लगा कि उसकी गाड़ी को बड़ी बेरहमी और लापरवाही के साथ चलाया जा रहा था। उसने अपनी आंखों पर हाथों का स्पर्श महसूसा। उसकी पट्टी खोल दी गई। अमित ने चारों ओर देखा। वह अपने घर से अधिक दूरी पर नहीं था। उसके साथ बैठे हुए व्यक्ति ने धीरे से कहा, दूसरे ने और भी धीरे से कहा, 'यह सिर्फ एक चेतावनी थी। तुमसे एक बार फिर कहे जा रहे हैं। खबरदार, तुमने उस लड़की से मिलने की कोशिश की!'

अमित चुप रहा। मन में आया कि पूछ ही ले—उससे मिलता रहूं तो क्या कर लोगे। यह प्रश्न उसके भीतर ही रह गया।

तीनों व्यक्ति कार से नीचे उतर गए। लंबे काले व्यक्ति ने कहा, 'हम तुम्हें जाते हुए देखेंगे।'

जिस जगह पर कार रोकी गई थी, वह सुनसान थी। कुछ ही दूरी पर फिलिंग स्टेशन था। वहां पर चार-पांच गाड़ियां खड़ी थीं। अपनी कार स्टार्ट करते हुए अमित के मन में आया कि इनकी कार इधर ही कहीं आस-पास में होगी। इनका पीछा किया जाए···फिर उसे यह खयाल उतना अच्छा नहीं लगा। ऐसा करना, मामले को और भी उलझाना था। बिना कुछ कहे उसने कार आगे बढ़ा दी। वह व्यू-मिरर में देखता रहा। काफी दूर निकल आने पर भी उसने तीनों आदमियों को उसी तरह खड़े

पाया।

घर पहुंचने पर उसने अपनी मां को वेसब्री से अपनी प्रतीक्षा करते पाया, 'यह कोई समय है घर लौटने का ?'

'गांव में लोगों से मिलते वात करते देर हो जाती है।'

'इतनी दूर। कहीं से फोन करके हमें चिंतित होने से तो वचा सकते थे।'

अमित ने अपनी मां को वांहों में वांध लिया।

अपने कमरे में पहुंचकर उसने सिगरेट जलाई। दो कश के वाद उसने उसे राखदान के हवाले कर दिया। वह अपने को स्थिर नहीं कर पा रहा था। नीचे से राधिका ने खाने के लिए आवाज दी। अमित नीचे उतरा। एक गिलास दूध पीकर ऊपर आ गया। जानीन को फोन करने की चाह उसके भीतर पैदा हो गई थी। पर इतनी रात गए जानीन को फोन करना उचित नहीं समझा। और फिर फोन पर क्या कहना था उससे ? वह अपने पंलग पर उठंग गया। अपने को स्थिर करना उसे वड़ा कठिन प्रतीत हो रहा था। इस प्रक्रिया को वह भय मानने को तैयार नहीं था, पर उसका इस तरह विचलित होना पहले कभी नहीं हुआ था। वह अपने को किसी प्रचंड आंधी द्वारा झकझोरा-सा पा रहा था।

कोई घंटे वाद उसने अपनी अलमारी खोली। दराज से नींद की गोलियां निकालीं। उन्हें गौर से देखा और उनमें से एक को चुटकी में लेकर डिविया को दराज में वंद कर दिया। मेज की कांच की सुराही से उसने गिलास में पानी उंड़ेला और गोली गले के नीचे उतार ली।

पलंग पर लेटकर उसने आंखें मूद लीं। अपनी अस्थिर पलकों द्वारा वह किसी ववण्डर के वीच से नींद को पकड़ लाना चाह रहा था। पर नींद थी कि पकड़ में आ ही नहीं रही थी। उसने दूसरी सिगरेट जलाई। छोटी-सी मेज को राखदान के साथ पलंग के पास खींच लिया। उसी तरह पड़ा हुआ कश लेता रहा। वेड-लाइट के स्विच को आफ करके उसने अपने शरीर को शिथिल करने की कोशिश की पर मस्तिष्क के तनाव के साथ शरीर की पूरी मांसपेशियां तनी हुई थीं। ऊपर से स्थिर रहकर

भी वह आन्तरिक स्थिरता के लिए कशमकश में पड़ा रहा।

पलकों के भारी होने के साथ-साथ अपना कमरा उसे किसी तरल पदार्थ से डबाडब भरा हुआ प्रतीत होने लगा था। वह पदार्थ काफी गाढ़ा था, जिसमें बड़ी ही कठिनाई के साथ वह डुबकियां लेता रहता। कभी बवण्डर से बाहर आने की कोशिश में उसकी सांसें फूलने लग जातीं।

- किसी बहुत ही लम्बी कन्दरा से जानीन की आवाज आती। उसकी प्रतिध्वनियां होतीं और फिर वह प्रतिध्वनि अनुध्वनियों में छिटक जाती। अमित उन टुकड़ों का सहारा लेकर ऊपर आना चाहता पर अपने बोझिल शरीर से नीचे ही की ओर लुढ़का चला जाता। वह चिल्ला उठता, जानीन ···जानीन···जानीन···

और अपनी ही आवाज की प्रतिध्वनियों में सिमटकर वह स्पन्दनहीन होकर एक बहुत भारी शून्य में खोकर रह जाता। वह शून्य विस्तार पाता गया और···

उस विस्तृत फैले शून्य में एक ओर मजदूरों का जुलूस था। भूखे-प्यासे, थके-मादे, टूटे-उखड़े मजदूरों के जुलूस की बगल में ताड़ के पेड़ की तरह लम्बी आकृतियां···बाहर को निकली हुई मोटी-मोटी आंखों वाली मालिकों की आकृतियां···और···बहुत सारी अस्त-व्यस्त चीजें और उन चीजों के बीच जानीन का झिलमिलाता चेहरा···।

अमित की खुमारी बढ़कर फिर एकाएक कम हो आई और उस नशीले होश में उसने पहले मजदूरों की आवाजें सुनीं, प्रगति के हकदार हम भी हैं।···हम भी हैं···हम भी हैं। फिर दूसरी आवाज भी वही। गूंजती रही। अमित के कान बज उठे। उसने कानों पर हाथ रख लिए।

तीसरी आवाज जानीन की थी। धीमी और करुण, अमित···अमित··· अमित, कुहासे में···

एकाएक चकाचौंध कर देने वाली रोशनी फैली थी और धमककर धमाके के साथ उसकी वह कार-दुर्घटना। अर्द्ध बेसुधी में वह गाड़ी के ऊपर आ गए पहिये को घुमाता हुआ देखता रह गया था।

उस सन्नाटे को तोड़ा था जानीन के चीत्कार ने,···अमित··· अमित···अमित···

पिछले ही दिनों मुड़ियां पहाड़ के नीचे एक गांव के मजदूरों के बीच अमित को पहुंचना था। उस विस्तृत फैले पहाड़ के नीचे फूलों के खेत थे। वही दृश्य अमित को बोझिल आंखों के सामने कौंध गया। मुड़िया पहाड़ का ऊपरी हिस्सा जो कि किसी आदमी के सिर की तरह था, टूटकर उन फूलों के ऊपर गिरने ही वाला था। वह उन फूलों का चीत्कार था, जिसे अमित ने सुना। अपने दाहिने हाथ को आगे बढ़ाए अमित दौड़ पड़ा। पहाड़ को फूलों पर गिरने से रोकने के लिए।

वह गिर पड़ा। उठकर फिर दौड़ा। फिर गिर पड़ा और इस बार उससे उठा न जा सका। उससे हाथ-पांव भी न मारे जा सके। अमित को आखिर नींद आ ही गई।

## १५

किशोर ने मन्त्रालय से प्राप्त अपने पत्र के उत्तर को जो कि चालीस दिन बाद उसे मिला था, अमित के सामने रख दिया था। पत्र पढ़कर अमित ने पूछा था, 'इसका क्या मतलब कि तुम्हारे चित्रों में देश का कोई भी सही रंग नहीं उभर पाया है ?'

किशोर ने कोई उत्तर नहीं दिया था।

अमित मन ही मन सोच उठा था, 'देशभक्ति के लिए क्या यह जरूरी है कि कलाकार देश के झण्डे की तस्वीर बनाता रहे ?'

इस प्रश्न को उसने जानीन से भी किया था और जानीन ने प्रश्न का उत्तर प्रश्न से दिया था, 'दफ्तरों में कला-पारखी कब से बैठने लगे ?'

यह जानकर कि वह किशोर के चित्र न खरीदने का बहाना था, जानीन शाम को अमित के साथ किशोर के घर पहुंची थी।

तीन चित्र पसन्द करके बोली थी, 'आज के जूझते हुए जीवन के रंग हैं सभी चित्रों में। ये तीन मैं खरीदने जारही हूं। अमित से राशि भिजवा दूंगी।'

दूसरे दिन अपने हाथों पर तीन हजार रुपये पाकर किशोर की प्रश्न करने की शक्ति जाती रही।

उसने अपने भीतर एक आवाज सुनी, 'तो नौबत दया और भीख तक आ गई!'

इसके बाद गहरे कुएं का सन्नाटा।

पहली बार लखन ने भय के कीटाणुओ को अपने भीतर रेंगता-सा महसूस किया। उसकी अपनी गाडी की रफ्तार कोई खास नही थी फिर भी स्टीयरिंग व्हील उसके हाथो मे तिलमिलाया और उसने एक्सिलरेटर से पाव हटा लिया। कार को एक झटका-सा लगा क्योकि उसके गीयर बाक्स का एक पुर्जा ढीला हो चला था। उसने व्यू-मीरर मे देखा। रास्ते के दोनों तरफ के झावे के घने पेडो के कारण पीछे का अंधेरा और भी गहरा था। ब्रेक पर पाव पहुंचाकर उसने गाडी रोक ली। लाइट आफ कर दी। उस अंधेरे को महसूसा, उसे अपनी लम्बी सास में खीचा। झावे के पेड़ों की दाहिनी कतार के पीछे दस-पन्द्रह कदमो पर दहाड़ता हुआ समुद्र था। अंधेरे में आवाजें सीधी नहीं आया करतीं। वह गम्भीर गर्जन टेढ़ा-मेढ़ा आ रहा था। उसके बायें ओर से किसी का शक हो रहा था। सिगरेट सुलगाकर लखन ने बाईं ओर देखा। आवाज दिखाई नहीं पडी। वह उस घटाटोप अंधेरे को ताकता रहा।

वह टैक्सी ड्राइवर था। उसके जीवन मे इस तरह ताक लगाए रहना रोज का काम होता है लेकिन उस ताक और इस ताक मे अन्तर था। यह स्थान उसके अपने अड्डे से चौबीस मील की दूरी पर था। उस दुराव के बावजूद इलाका उसका अपरिचित नही था। अंधेरे की उस गहनता मे उसने टटोला। वह तीन मील दूर था तभी किसी गिरजाघर का घण्टा बारह बजा रहा था। इस समय सभी बंगलों में नींद गहराई लिए होगी, सभी पहरेदार भी सो रहे होंगे। आदमी और कुत्ते भी। काली चट्टानों से अदृश्य ज्वार-भाटे अपने माथे धुने जा रहे थे। उसके मन मे ख्याल आय धरती सो जाती है पर समन्दर कभी नही सोता · [illegible]

उसने गाड़ी की रोशनी जलाई और दूसरे ही क्षण बुझा दी। उसके कान सजग थे। समुद्र गर्जन के अलावा वे दूसरी आवाज सुनने की ताक में थे। एक क्षण, दो क्षण—कोई आवाज नहीं आई। वह ऊंघने की स्थिति में आने वाला था पर एक लम्बी जम्हाई के बाद वह अपने दोनों हाथों की अंगुलियों से खेलता रहा। ऊपर के कंजूस आकाश पर इने-गिने तारों की झिलमिलाहट थी।

जगह को चारों ओर अच्छी तरह देख उसने गाड़ी स्टार्ट की। उसे कुछ कदम आगे ले जाकर फिर रोक लिया। सागर के उस चीत्कार के साथ-साथ झावे के पत्तों की सांय-सांय की आवाज भी मिल गई थी।

पीछे से रोशनी आई। वह अपनी सीट पर संभलकर बैठ गया। सात टन की लारी दस टन के बोझ के साथ लड़खड़ाती हुई सामने से निकल गई। अभी चार-पांच महीने पहले ही लखन भी इसी तरह बालू ढोने का धंधा कर चुका था। वह उसे चोरी नहीं मानता था 'क्योंकि हर खेवे के लिए इंस्पेक्टर को पचास रुपए दिए जाते थे।

चुनाव की सरगर्मी के दौरान जब कई लोगों को टैक्सी की पर्मिट मिलने लगी थी, उस समय लखन को भी मिल गई थी। उसने तो सुन रखा था कि एक पर्मिट के लिए कुछ लोगों को पांच हजार रुपये तक देने पड़े थे। उसे एक पैसा भी देना नहीं पड़ा था। तभी उसके भीतर यह विचार कौंध गया था कि आखिर ये चुनाव हर साल क्यों नहीं होते ? सामने के मोड़ के बाद लारी की आवाज और रोशनी के मिटते ही लखन ने दाहिनी ओर से आती हुई आकृति को देखा। अमित को पहचानने के लिए उसकी चाल काफी थी। लखन ने अपनी बगल का दरवाजा खोल दिया। भीतर आते ही अमित ने पूछा, 'बहुत पहले आ गए थे ?'

'दस मिनट हुए होंगे।' लखन ने आधा समय बताया।

उसने गाड़ी स्टार्ट की। सात वर्ष की पुरानी टोयोटा अपने साइलेंसर के छेद के कारण घरघराहट के साथ आगे बढ़ गई। काफी दूर निकल आने पर लखन ने जम्हाई ली, फिर कहा, 'कल अगर चाची फिर मेरे ऊपर बरस पड़ी तो क्या जवाब दूंगा ?'

'इस बार यह कह देना कि हम लोग···'

'सतनारायण स्वामी की कथा सुनने गए थे।'

'तुम गाड़ी इतनी तेज क्यों चला रहे हो?'

'अपनी नींद और अधिक हराम करना नहीं चाहता और फिर कल सुबह तुम्हारी तरह घर पर नौ बजे तक ठहरना थोड़े ही है।'

अमित ने चुप्पी साध ली, लेकिन लखन को अपने को नींद से बचाने के लिए बातें करना जरूरी था। उसने कहा, 'जानते हो, जिस फ्रांसीसी को हवाई अड्डे पर छोड़कर आ रहा हूं, उसने क्या कहा? उसके अपने विचार में हमारे इस द्वीप को अपनी समस्याओं से बचने के लिए फ्रांस से अधिक गहरा सम्बन्ध स्थापित कर लेना चाहिए। वह कह रहा था कि हम लोग फ्रांस की भाषा बोलते ही हैं, इस बात के लिए वहां के लोग हमारे प्रति काफी उदार हो सकते हैं। तुम्हारा क्या ख्याल है?'

अमित चुप रहा। लखन की इन बातों से अलग गाड़ी की रोशनी में झलककर ओझल हो जाने वाले उन मछेरों को देखकर सोचता रहा, 'ये बस्तियां, ये झोंपड़ियां···इनकी हर चौखट एक अलग सीमा बनकर रह जाती है···क्यों?' जिस रास्ते पर गाड़ी भागी जा रही थी, वह दो दुनिया के बीच विभाजन-रेखा की तरह था। एक दुनिया थी गोरे मालिकों की, दूसरी दुनिया थी मछुए और मजदूरों की। बारह फुट चौड़ा वह रास्ता जमीन आसमान का फासला बनाए हुए था।

लखन पूछ बैठा, 'बंगले का पता चला?'

'हां।'

'किसका है?'

'जानीन के चाचा का।'

'जान चुकने के बाद अब क्या करोगे?'

अमित ने इसका उत्तर नहीं दिया।

तीन दिन तीन रात के संघर्ष के बाद ही वह उस स्थान का पता लगा पाया था, जहां उसे बन्द रखा गया था। उसका यह विश्वास ठीक ही निकला था कि किसी भी हालत में वह बंगला जानीन के [illegible] था। दो चीजें थीं जो उसको यह विश्वास दे गई थीं—समुद्र का वह [illegible] गर्जन और वहां की हवा की वह सिहरन। दो चीजें थीं जो [illegible]

को ला सकी थीं। तंदूर से आती कोयले की गंध और सेगा की वह धुन। इस बात की उसे हैरानी नहीं थी कि यह बंगला जानीन के चाचा का निकला। जानीन का बाप इतना मूर्ख नहीं था कि वह अपने ही बंगले में उसे कैद रखता।

लखन का यह प्रश्न कि अब वह क्या करेगा, अमित को उधेड़बुन में डाल गया था। उसे उस ठौर को हर सूरत में जानना था। वह उसे जान गया, इसका उसे आत्मसंतोष था। पर अब जान चुकने के बाद वह क्या करे, यह उसकी समझ में नहीं आ रहा था। कुछ करने के इरादे से वह तलाश में नहीं निकला था। जगह को खोज निकालना बस उसका उद्देश्य था। खोज निकालने के बाद उसका यह संदेह तो कम से कम मिट गया था कि वह काम यूनियन के प्रतिद्वंद्वियों का नहीं था। रास्ते-भर लखन उससे यही कहता रहा कि वह मामले को पुलिस के हाथ सौंप दे अन्यथा आगे चलकर यह भयंकर रूप ले सकता है। पहले तो वह यह चाहता रहा कि अमित उसे उन तीनों आदमियों के बारे में ठीक-ठीक बताए। अमित को खुद हुलिया अच्छी तरह याद नहीं था। याद भी रहता तो वह लखन को न बताता। वह लखन को बहुत अच्छी तरह जानता था। अपने टैक्सी चालक मित्रों को साथ लेकर वह हंगामा खड़ा कर सकता था।

अमित इस बात को सोच ही रहा था कि लखन बोल पड़ा, 'मैं सालों के दिमाग ठिकान लगा दूं तो मेरा नाम नहीं।'

कालेज के दिनों से ही लखन ऐसा था। परिवार के लोगों की नाक में दम कर जाता था। साल भी नहीं हुआ, कैद जाते-जाते बचा था। अभी तो पिछले दिनों की बात है, किसी रेस्तरां के जापानी नाविकों के साथ उलझ पड़ा था। अगर वह चार साथियों के साथ न होता तो उसकी हड्डी-पसली एक होते देर नहीं होती। अमित के बाप के हस्तक्षेप पर ही पुलिस से मामले को रद्द किया जा सका था। पढ़ने का सभी अवसर पाकर भी नहीं पढ़ पाया। किसी तरह सरकार में अच्छी नौकरी मिल गई थी। वहां तीन महीनों से अधिक टिक ही नहीं सका। नौकरी से हटा दिया गया था उसे। दूसरी बार नगरपालिका में उसे नौकरी दिलाई

गई। यहां भी सात महीनों से ज्यादा नहीं रहा। टैक्सी की दुनिया को अपनी दुनिया बनाकर वह खुश था। टैक्सी की दुनिया से उसे हटाने की कई कोशिशें की गई थीं, पर लखन को उस जीवन के सभी खतरों से प्यार था।

'इन सालों को तुम इसी तरह छोड़ दोगे तो ये इससे भी खतरनाक वार कर सकेंगे।' लखन का यह वाक्य अमित को भीतर से भयभीत कर गया। उस रात की वह धमकी उसके कानों में बज उठी। इसके साथ ही जानीन का वह वाक्य भी गूंजा, 'कोई तुम्हारा बाल बांका नहीं कर सकेगा अमित!'

दोनों क्षितिज में ओझल होते सूरज की अन्तिम लालिमा को निरख रहे थे जब जानीन ने यह वाक्य कहा था। उसके बाप ने उसे धमकी दी थी, 'सा वा ते कूते लावी दे से मालाबारलला। तुम्हें तुम्हारा यह हठ महंगा उतरेगा जानीन! इसका दाम कहीं तुम्हारे उस मालाबार की जान से चुकाना न पड़ जाए।'

जानीन ने पहले कहा था, 'तुम्हें सावधान रहना होगा अमित!'

'क्यों?'

इस क्यों का उत्तर जानीन ने नहीं दिया था। सूरज की अंतिम लालिमा को निरखते हुए बोली थी, 'कोई तुम्हारा बाल बांका नहीं कर सकेगा अमित!'

जानीन का यह वाक्य अमित के लिए अभयदान था। वह उसका जिरहबख्तर था।

'लेकिन…'

जानीन का वह पत्र अभी भी अमित की जेब में था। उस चिट्ठी के अंगुलियों से छू जाने पर वह भय से सिहर उठा।

'आज मुझे मेरी दादी बता रही थी कि मेरा बाप तुम्हें अपने रास्ते से हटाने के लिए कुछ भी बाकी नहीं छोड़ेगा। कल दादी ने अपने कानों उसे कुछ लोगों से बातें करते सुना था। इस काम के लिए वह हजारों देने को तैयार है…अमित, तुम्हें अपना खयाल रखना होगा, अपने लिए न सही, मेरे लिए।' पत्र का अन्तिम वाक्य भी यही था, 'मेरा प्यार तो यही कहता है कि कोई तुम्हारा बाल बांका नहीं कर सकता। मेरा प्यार तुम्हारी

रक्षा करेगा।'

अंधेरे में पुरानी गाड़ी की घरघराहट और हवा के सांय-सांय के बीच जानीन का यह अन्तिम वाक्य प्रतिध्वनित होता रहा।

लखन बोले जा रहा था। अमित का ध्यान कहीं और था। उसके कानों में एक आवाज बजती रही, 'अमित, मैं तो बस एक ही चीज चाहती हूं। मिट्टी के चिराग की तरह मैं सूरज के तेज प्रकाश में खो जाना चाहती हूं। वह सूरज तुम हो, बस तुम। जब भी तुम हैसियत की बात करते हुए मुझे सामन्ती बताने का प्रयत्न करते हो, मैं पीड़ा से अकुला जाती हूं। तुम मुझे सिर्फ उसी रूप में देखा करो जिसमें मैं तुम्हारे सामने हुआ करती हूं। प्यार के अथाह सागर में एक बूंद की तरह विलीन होकर ही मैं अपने को खुशी पा सकती हूं।'

अमित को ऐसा एहसास हुआ था कि हृदय प्रायः वही मांगता है, जिसे देने में जीवन अपने को असमर्थ पाता हो। उसने जानीन से पूछा था, 'तुम्हीं बताओ, हृदय का तकाजा आदमी को भावुक बना जाता है या भावुकता हृदय से तकाजा कराती है?'

जानीन ने कोई उत्तर नहीं दिया था। प्रश्न को अच्छी तरह सुनकर ी वह समझ नहीं पाई थी।

## १६

किशोर उन पुस्तकों को कभी नहीं पढ़ पाया, जिन्हें उसके लिए किसी और ने पाठ्यक्रम में लाद रखा था। अपनी पसन्द की पुस्तकों की तलाश में वह अनायास ही कला के जगत में खो गया था। कमरे बन्द करके पढ़ने का बहाना करता हुआ वह चित्र बनाने में लगा रहता और इसके लिए अपने बाप से खरी-खोटी भी सुनता रहता। और तभी से एकान्त और बहुत बड़ी खामोशी के बीच ही वह जीता आ रहा था और सृजन करता आ रहा था उसी खामोशी का—उस अथाह खामोशी का।

अमित ने उससे कहा था, 'किशोर, सृजन का जन्म विद्रोह से होता है। तुम हो कि अपने-आप में आटे की लोई की तरह हो, इस तरह अपने को आटे की लोई मान लेने के बदले तुम आवाज तो उठाओ। कई बार कलाकार को जनता के सामने चिल्लाकर अपनी कला समझानी पड़ती है।'

किशोर हंसकर बोला था, 'मैं मजदूरों का नेता नहीं हूं अमित! मेरा विद्रोह शारीरिक नहीं हो सकता। अगर मेरे चित्रों में तुम्हें विद्रोह नहीं दिखाई पड़ता तो फिर समझ लो कि सचमुच ही उन चित्रों का कोई मोल नहीं। ऐसी हालत में उसके लिए चिल्लाने से क्या होता है।'

अमित को हमेशा ऐसा ही लगा था कि किशोर में लड़ने की शक्ति नहीं थी। शक्ति होती तो मेनका उसके जीवन से इस तरह लुप्त नहीं हो जाती। फिर अमित सोचता कि कहीं मेनका से वंचित हो उसकी यह दशा तो नहीं थी। मेनका उसका परित्याग कर गई थी। वह उसे छोड़कर भाग गई थी।

अमित उसे उसके चित्रों के नीले रंग के लिए कोसा करता, 'नीले रंग का बहुत अधिक उपयोग करते हो तुम। उससे ऊब पैदा होती है।'

'नीला एक विशेष रंग है अमित! विस्तृत आकाश और सागर की तरह यह भी विस्तृत है। यह विस्तृत वेदना का रंग है। यह अथाह का रंग है। रोज का रंग है। गोरे रंग की तरह यह संयोग का रंग नहीं। यह अभिव्यक्ति का रंग है। इसकी सीमा नहीं होती, और जिसकी सीमा नहीं होती, वह सत्य होता है।'

अमित कुछ नहीं समझकर चुप रह जाता।

उसकी चुप्पी पर हंसकर किशोर बोलता, 'कलाकार सभी पागल होते हैं। उनके लिए गुजर चुका कल कभी ओझल नहीं होता, आने वाला कल एकदम स्पष्ट न होकर भी रहस्य नहीं हुआ करता। इन दोनों के बीच की सच्चाई के क्षण के लिए कलाकार को अपना सभी कुछ त्यागना पड़ जाता है और एक तरह के नवनिर्माण लाने में वह···वह लग जाता है।'

किशोर के लिए चित्रकारी संवाद थी। वह चाहता था कि अपने पेंटिंग्स के माध्यम से वह दर्शकों से बातें कर सके। उसके सभी चित्र

चल्ला-चिल्लाकर लोगों से बातें करना चाहते थे पर सारा कुछ मोना-गाग बनकर रह गया था।

प्रतिक्रिया के अभाव को वह असफलता मान ले ?

तो फिर अंधाधुंध चलते रहने का क्या अर्थ रह गया था। वह अपनी आत्मशान्ति या अपने को सुख पहुंचाकर खुश करने के लिए सृजन नहीं करता था, उसका आविष्कार दूसरों को कुछ दे सके, इस उद्देश्य से उसने तूलिका थामी थी, रोटी कमाने के तो कई रास्ते होते हैं।

फिर पाब्लो पिकासो का वह वाक्य होता जो उसके अपने इर्द-गिर्द के शून्य में प्रतिध्वनित होने लग जाता :

...मैं जब भी एक नई तस्वीर शुरू करता हूं, ऐसा महसूस होता है कि मैं अपने को एक बहुत बड़े शून्य में ढकेले जा रहा हूं।

अकुलाता हुआ उस शून्य के बवण्डर से बाहर आकर किशोर अपने सभी चित्रों को देखने लग जाता। एक-एक चित्र उसके जीवन के संघर्ष के साथ जुड़ा था। एक-एक उसके अपने जीवन के दारुण दण्ड और यन्त्र-णाओं का गवाह था। वह अपने उस पहले चित्र को देखता। वह उस समय का चित्र था जब वह मोनेत और सेनाज का अध्ययन कर रहा था। किशोर ने भी अपने उस प्रथम तैलचित्र में मानेत की तरह प्रकृति के स्पंदन को सपाट और परछाइयों के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया था। फिर उसका वह नया चित्र था। दोनों चित्रों के बीच लम्बी यात्रा थी। आर्ट नूवो की रूमानियत के बाद क्यूबिजुम का भी उसने सहारा लिया था। फिर उसको भी त्याग कर रेन्वार के निकट पहुंचने का प्रयत्न किया था। उसके कुछ चित्रों पर आन्द्रे, ब्रेतो का प्रभाव स्पष्ट था पर स्यूरीएलिज्म की शैली ने उसे अपनी बातें नहीं कहने दी थीं। पिकासो के बाद वह सबसे अधिक प्रभावित दाली से था। एक पत्र के कला-समीक्षक ने उसे दाली का नक्काल तक कह दिया था। उसके पिछले चित्रों से रंगों की गंध अभी गई नहीं थी। उन्हें गौर से देखते हुए वह अपने भीतर एक गर्व-सा अनुभव करता। वह उसकी अपनी शैली थी। अपने रंग अपनी रेखाएं...उसकी वह खुशी क्षणिक हुआ करती थी। वह अपनी उम्र का खयाल करता फिर एक चित्र से दूसरे चित्र के बीच वे

समयान्तर का खयाल करता।

हर एक दूसरे चित्र के बीच युग-युग का अन्तर था। उसे लगता कि वह बहुत बूढ़ा आदमी है। और इसी खयाल के साथ वह अपने चित्रों के सामने बैठ जाता, कोई दो-तीन घण्टे बाद ही वहां से उठने के लिए। एक दिन अनायास उसके मन में एक विचार आया था। दूसरे ही दिन एक नये चित्र के साथ वह अमित के सामने पहुंचा। वह उसका पहला चित्र था, जिसमें नीले रंग का अभाव था। चित्र अमित की समझ में नहीं आया था। उसने पूछा था, 'क्या है यह ?'

'तुमने अच्छा किया अमित, सरकारी नौकरी से इस्तीफा दे दिया। नौकरी तुम्हें इस्तीफा देती, इससे तो यही बेहतर रहा कि तुमने खुद पिंड छुड़ा लिया उससे। यह उसी इस्तीफा का चित्र है। जीवन से इस्तीफे का चित्र है··· । सरकार की नौकरी और जिन्दगी एक-सी हुआ करती है। दोनों कभी न कभी आदमी को इस्तीफा दे ही जाती हैं। इस चित्र में एक आकृति है, एक काली आकृति। जीवन उसे इस्तीफा दे, इससे पहले वह खुद जीवन से इस्तीफा लिए जा रही है। क्या तुम यह नहीं सोचते अमित कि जीवन आदमी को त्यागपत्र दे, इससे पहले ही आदमी त्याग-पत्र देकर उससे मुक्त हो जाए।'

किशोर की ये बातें अमित को अजीब-सी लगी थीं। वह एक अज्ञात आशंका से भीतर ही भीतर कांपकर रह गया था।

किशोर दो कदम पीछे जाकर अपनी रचना देखने लगता, खड़ा रहता। उसे लगता, उसकी रचना उसे ही देखने लगी थी और वह भी विस्फारित नेत्रों से। और जब उसे अपनी रचना के रंग दहकते हुए प्रतीत होने लगते, तब उसे विश्वास हो जाता कि उसकी रचना में दम था। उसे उसकी सजीवता का भी विश्वास हो जाता पर फिर भी उसे लगता कि वह कृति संपूर्ण नहीं थी। वह उन कमियों को ढूंढने लग जाता और उदास मन से कैनवस के सामने खड़ा रह जाता था।

कई अवसरों पर ऐसा भी होता कि वह रचना को दीवार की ओर उलट देता। इतने पर भी जब उसकी उदासी नहीं जाती तो वह काले रंग से चित्र को लीप देता।

अपने नये चित्र को वह गौर से देखता रहा। उसके मन में कई शीर्षक आए। एक उसे पसंद आ गया था। निराशा पर तभी आशा आ गई थी।

'यह तुम्हारी नई कृति है ?'

'हां।'

'बहुत सुन्दर है।'

'तुम्हारे बारे में तो यह कहा जाता है कि तुम झूठ कभी बोलती ही नहीं।'

'मैं झूठ नहीं बोल रही।'

'सचमुच यह चित्र तुम्हें पसंद है ?'

'तभी तो कह रही हूं।'

'तब तो इसका शीर्षक बदलना पड़ेगा।'

'क्यों ? क्या शीर्षक रखा है इसका ?'

'रखने की सोच ही रहा था।'

'क्या ?'

''निराशा'। पर यह नाम अच्छा नहीं।'

'मुझे तो 'निराशा' असम्बद्ध लग रहा है।'

''आशा' कैसा रहेगा ?'

आशा मुस्करा कर रह गई थी।

'कोई तीन सप्ताह बाद ही आशा उसके पास पहुंची। किशोर अपनी नई रचना पर काला रंग पोत रहा था।

'यह क्या कर रहे हो किशोर ?'

'असफलता का मुंह काला कर रहा हूं।'

'असफलता कैसी ?'

'यह रचना सफल नहीं रही।'

'तुम लोग कलाकार हो, खुद पारखी क्यों बन जाते हो ?'

'यही तो एक उपाय है कल के अच्छे चित्र के लिए। अगर मैं इससे मोह कर बैठा तो फिर सफलता दूर ही रह जाएगी।'

'अपने सृजन के साथ इतनी बेरहमी ?'

'यही बेरहमी तो वह ऊपर वाला भी करता रहा है। कितनी अपूर्ण और असफल कृतियां उसने बनाई हैं।'

'भगवान को क्यों कोसने लगे?'

'कोस नहीं रहा हूं। समीक्षा कर रहा हूं।' इसके साथ ही वह जोर से हंस पड़ा।

उसकी वह हंसी आशा को हैरत में डाल गई। वह हंसी जैसे किशोर की अपनी हंसी नहीं थी। उस हंसी में एक गूंज थी···हृदय-विदारक गूंज। वह आशा को एक डर-सा दे गई।

## १७

क्यूपिप छोड़ते ही अमित ने ड्राइवर की सीट ले ली थी। बगल में जा बैठने पर जानीन को उस ठंड का खयाल आया। अमित को उस बारीक कमीज में पाकर पूछना चाहा कि कोट या कोई पुल-ओवर क्यों नहीं लिया था उसने। चाहकर भी उसने नहीं पूछा। न पूछने का बस यही कारण था कि वह अमित के उत्तर का अन्दाजा लगा सकती थी। दो पिछले अवसरों पर उसने अमित से टाई न बांधने का कारण पूछा था और दोनों अवसरों पर अमित ने फ्रांस फेनन के स्वर में कहा था कि टाई बांधकर वह अपने को नवसाम्राज्यवाद का कठपुतला बनाना नहीं चाहता था। दोनों बार जानीन हंसकर रह गई थी।

जानीन की पेजो को अमित पहली बार नहीं चला रहा था, फिर भी उसके चलाने से ऐसा लगता था कि अभी दो दिन पहले वह ड्राइविंग लाइसेन्स लेकर आया हो। उसको उस तरह सावधानी बरतते देख जानीन वजह पूछ बैठी थी। और अमित ने कहा था कि प्रोलेटेरियट के हाथ में जब बुर्जुआ गाड़ी आ जाती है तो ऐसा ही होता है। इसपर भी जानीन रुक-कर रह गई थी। अमित अपनी गाड़ी क्यूपिप के फिलिंग स्टेशन पर छोड़ आया था। मैकेनिक के यहां से निकल आने के बाद अमित को अपनी गाड़

गाड़ी अपनी गाड़ी-सी नहीं लगती थी। इंजन में एक गड़बड़ी रह ही गई थी। इस पेजो को चलाते हुए अमित के जेहन में खयाल कौंध गया। अपने अन्तर को हर जगह बनाए रखने के लिए आदमी ने अपनी बनाई हुई चीजों के बीच भी भारी अन्तर पैदा कर दिया है। हर चीज की अलग जाति थी, अलग हैसियत थी, जिससे आदमी के बीच का वह अन्तर और भी विस्तृत होता चला जा रहा था। अमित को अपना यह खयाल अच्छा नहीं लगा। उसने उसे पीछे छोड़ दिया। गाड़ी की रफ्तार बढ़ आई थी।

आधे घण्टे की ड्राइविंग के बाद कार तोम्बो-बे ने उस ठौर पर रुकी जहां इलाके का बस-टर्मिनस था। कार को मूलमोहर के नीचे छोड़कर दोनों ने उस ऊंचाई से खाड़ी पर एक सरसरी नजर दौड़ाई और मिट्टी काटकर बनी सीढ़ियों से नीचे उतरे। ढिठोड़ी के पेड़ के पास बैठा वह आदमी उनके पास आ गया। उसीकी उस पुरानी नाव में चढ़कर दोनों ने नदी को उस स्थान पर पार किया जहां वह समुद्र के पानी से मिलकर अपने को अस्तित्वहीन कर गई थी। नाविक के हाथ में एक रुपया रखकर अमित ने जानीन का हाथ थाम लिया। बाल पर चलते हुए दोनों उस स्थान पर पहुंच गए, जहां कुछ बच्चे किनारे उतरी हुई छोटी मछलियां फंसाने में लगे हुए थे। कुछ ही दूरी पर दोनों बैठ गए। कार वहां अदृश्य थी पर मुड़िया पहाड़ सामने था। जानीन ने अमित से पूछा कि इतने सुन्दर स्थान का नाम मौत की खाड़ी क्यों पड़ा। फिर उसे याद आया कि यही वह स्थान था जहां वर्षों पहले इतिहास के उन प्रथम नाविकों में पीटर बोथ की नाव फंसकर डूब गई थी। अपने साथ लाए ट्वीस्टीज के दोने को जानीन ने अमित के हाथों पर रख दिया।

उसे खोलकर अमित ने चार-पांच ट्वीस्टीज अपने हाथों में रखे और जानीन को थमा दिया। आधे घण्टे के बाद दोनों ऊपर आए। वहां से आगे का रास्ता लिया।

प्वेत-ओ-पिमां के समुद्री इलाके से होते हुए वे त्रु-ओ-वीश पहुंचे। वहां की सैलानी बस्ती के चक्कर के बाद वे मों स्वाजी रुके। जानीन ने घड़ी देखी, दस बजने को था। डिकी से तौलिये निकालकर जानीन ने झावे की छाया में बिछाया। अमित ने कोकाकोला की बोतल खोली। जानीन को

थमाते हुए बोला, 'घूम आते हैं फिर बैठेंगे।'

दोनों अपने-अपने हाथों में कोकाकोला की बोतलें थामे बालू पर चल पड़े। समन्दर शीशे की तरह साफ था। छोटी-छोटी लहरें उठ रही थीं। मेडिटेरेनियन क्लब की रंगीन पाल वाली नावें दौड़ी चली जा रही थीं। स्की का प्रशिक्षण लेने वाला व्यक्ति हर दूसरे क्षण पानी में उलट जाता था। जानीन को हंसी आ रही थी। अमित गम्भीर रहा। उसकी नजर उन पाच औरतों पर चली गई थी जो मों स्वाजो के विशाल मैदान की एक पगडंडी से सिर पर घास के बोझ लिए बस्ती को लौट रही थीं। एक ओर ये औरतें थीं, दूसरी ओर मेडिटेरेनियन क्लब के सामने बीच पानी का वह छोटा-सा द्वीप जिसमें तैरने के उन हलके कपड़ों के बोझ को भी त्यागकर लोग मुक्त थे। उस न्यूडिस्ट कैम्प की औरतों के साथ जानीन ने सिर पर घास के बोझ लिए औरतों की तुलना की। लगा कि तुलना की कोई वजह ही नहीं थी। वे दो अलग दुनिया थीं—दो अलग दुनिया के लोग…।

दोनों अपनी चप्पलें गाड़ी के पास छोड़ आए थे। फेनिल तरंगें उनके पांवों में टकरा-टकराकर टूट रही थीं। पानी बर्फ की सी ठंडक लिए हुए था। अमित से हाथ छुड़ाकर जानीन दो कदम दौड़ी और दूध-सी सफेद बालू पर बैठ गई। अमित भी उसके पास बैठ गया। बैठ जाने से अमित को सामने का समुद्र और भी विस्तृत जान पड़ा। जानीन ने अपनी बाहें अमित की गरदन में डाल दीं। अमित के हाथ की खाली बोतल को उससे लेकर उसने उसे अपनी बोतल थमा दी। दो पर्यटक किसी भाषा में बातें करते हुए सामने से गुजरे।

'अमित, हम दोनों एक बार रीयुनियन टापू घूम आएं।'

'इन सैलानियों को देखकर ऐसी इच्छा जागी क्या ?'

'यही सोच लो।'

'तुम तो नकल पसन्द नहीं करतीं।'

'एक द्वीप में दो अजनबियों के रूप में हम अपने को अलग और अकेले महसूसते।'

'वह तो यहां भी महसूस सकते हैं।'

'यहां वह पूरी स्वतन्त्रता कहां ? कल मेरा बाप मुझपर फिर बिगड़ रहा था।'

'तुम भी तो असम्भव करना चाह रही हो।'

'अमित, जे तां प्री। कृपया ऐसी बात मत करो।'

'जानीन, सच्चाई को नकार कर उसके लिए लड़ने से क्या होता है ? उसे स्वीकारती हुई लड़ो।'

'अमित, तुम फिर असम्भव-अन्तर और न जाने कौन-कौन सी बातें करोगे।'

'तुम वह चिट्ठी देखना नहीं चाहोगी जो कल की डाक से मुझे मिली है ?'

'फिर ?'

'हां ?'

अनाम ?'

'हां, अनाम।'

'देखूं ?'

'अभी नहीं जानीन...।'

'मैं देखूं अमित !'

'हमारे खाने का प्रोग्राम कहां है ?'

'रोश-न्वार।'

'तुम्हारे बंगले में ?'

'हां।'

'तो फिर वहीं खाने के बाद उसे पढ़ना।'

ग्रांत्रे की बस्ती में कार की रफ्तार को कम करके अमित ने कहा, 'देख रही हो जानीन ! दाईं ओर की ये झोंपड़ियां ! ये उन लोगों की दुनिया है जो हमेशा से यहां रहकर जूझते रहे। और यह बाईं ओर समुद्र की गोद के ये आलिशान बंगले। यह उन लोगों की दुनिया है जो कहीं और रहते हैं और यहां बस अवकाश के क्षणों में आते हैं।'

गाड़ी की रफ्तार और भी कम हो जाने पर गीयर को सेकण्ड में डालते हुए अमित ने उसी गम्भीर स्वर में आगे कहा, 'गली के दाहिने

छोर में बायें तक फासला चार पगों का है, पर इस छोर के और उस छोर के बीच का फासला जमीन-आसमान का है। यह फासला रबड़ के फीते की तरह है। समय के साथ यह और भी बढ़ता जाता है। इन बंगलों के कारण इन छोटी कुटियों को जो सब से बड़ा फायदा पहुंचता है, वह जानती हो, क्या है ? तुम्हें के आधे दिन इन कुटियों के आंगन में धूप पहुंच ही नहीं पाती। इधर के बच्चे बंगलों की छाया में पलते हैं।'

इन अन्तिम वाक्य को अमित ने ठंड के कंपन के साथ कहा। ग्रांबे के नीले समुद्र की उन रंग-बिरंगी नावों को देखते हुए जिनके मूल्य से द्वीप के गरीबों को वर्षों तक खिलाया जा सकता था। अमित सिहर उठा था। कार फिर से अपनी स्वाभाविक रफ्तार ले चुकी थी। दो मिनट के लिए वे दोनों पेरेबेर के पब्लिक बीच के पास रुके। विविध नीलापन लिए समुद्र काच के टुकड़ों की तरह झिलमिला रहा था। जानीन को इस ठौर का एक सूर्यास्त का दृश्य याद आ गया। उस दिन उसका भाई भी बगल में था। बोला था, 'इतना सुन्दर सूर्यास्त संसार में कहीं नहीं होता होगा।' दोनों आगे बढ़े। केप मालेरे में पहले के स्थान पर ठिठककर दक्षिणी सागर के छोटे द्वीपों को देखते रहे। जानीन ने कुछ फोटो भी लिए।

वहां से आस लारे और ग्रा गोब होते हुए वे सीधे जानीन के बाप के बंगले पहुंचकर रुके। झावे और नारियल के पेडों के झुरमुट के बीच था वह बंगला। गाड़ी के फाटक में प्रवेश होते ही दो तरफ से दो कुत्ते भौंकते हुए गाड़ी के आगे आ गए। जानीन पर नजर पड़ते ही दोनों पूंछ हिलाने लगे। बंगले का रखवार भी सामने आ गया। कार से उतरते हुए जानीन ने रखवार से कहा, 'जगलाल, डिकी से सामान निकाल लो।'

सामने काली चट्टानों से समुद्र की भारी-भरकम लहरें दहाड़ती हुई आवाजों के साथ टकराकर तितर-बितर हो रही थीं।

अमित को उन ज्वारभाटों की ओर एकटक ताकते पाकर जानीन ने कहा, 'मैं घुटनों के बल चलती थी। तब से इस संगीत को सुनती आ रही हूं। ये मुझे सुलाती थीं थपकियां दे-देकर। कुछ और बड़ी होकर उन लोरियों में कुछ और ढूंढने लगी थी। उस संगीत का अर्थ मुझे बहुत देर से मिला। अब तो यहां अकेले आने पर अपने भीतर कुछ विस्फोट होना

चाहता है। आज तुम साथ आए हो, देखती हूं इन लहरों में संगीत आज क्या कहेगा।'

बंगले की भव्यता देख कर अमित आश्चर्यचकित था। भीतर पहुंचकर हर चीज को शहर पहुंच आए गंवार की तरह घूर रहा था और जानीन अपनी धुन में अपनी ही कहे जा रही थी, 'यहां के तट पर नंगे पैर दौड़ने में आनंद आता है। लहरों के दूधिया झाग पांवों में गुदगुदी कर जाते हैं। आटे की तरह चिकनी सफेद बालू की ठंडक सिहरन दे जाती है और···'

अमित ने उसकी बातें काटकर पूछा, 'जानीन, इतना बड़ा बंगला साल में सिर्फ बीस-तीस दिन रहने के लिए? तुम इसमें खो नहीं जातीं? अपना होता तो बोझ-सा लगता।'

जानीन हंस पड़ी, 'अपना भी होता तो बोझ ही सा लगता।'

'पर है तो तुम्हारा ही।'

'मेरे बाप का है।'

'तुम्हारे बाप की चीजें तुम्हारी नहीं क्या?'

'जरूरी नहीं कि वे मेरी भी हों।'

'इन सारी चीजों को नकार जाने की शक्ति है तुममें?'

'क्यों नहीं।'

'आदी हो जाने पर···'

'वह बहुत कमजोर आदमी होगा जिससे आदत नहीं छूटती।'

'तुम मुझे यहां क्यों लाईं?'

'रास्ते में पड़ता था। सोचा···'

'आराम से बैठकर खाना खा ले···जानीन, इस तरह का आराम सभीको नहीं भाता है। कुछ लोगों की इससे छाती फटने लगती है। सारा कुछ खाई दरार-सा प्रतीत होने लगता है।'

अमित की गरदन में बांहें पहुंचाकर जानीन ने अपने होंठों से उसकी आवाज को जब्त कर दिया।

बंगले से कुछ दूरी पर जहां चट्टानें विस्तृत नहीं थीं और ज्वार-भाटे प्रलयंकर नहीं थे, दोनों ने स्नान किया। धूप में बैठे रहे। बंगले को

लौटने पर दोनों ने खाने की मेज को सजा हुआ पाया। जगलाल ने सारा कुछ गरम कर दिया था। घर पर खाना तैयार करते समय राधिका ने अमित से कहा था, 'उससे पूछना मत भूलना कि कौन-सी चीज उसे सबसे अच्छी लगी। इसीलिए खाते समय अमित पूछना नहीं भूला, कैसा है?'

'चम्पा भी हमारे यहां ये चीजें कभी-कभार पकाती है पर इतना अच्छा कभी नहीं। खाने के तुरन्त बाद जानीन ने अमित से वह चिट्ठी मांगी जिसकी चर्चा वह मां स्वामी से कर चुका था। जंगली बादाम की घनी छाया के नीचे बैठकर जानीन ने वह चिट्ठी पढ़ी। अमित उसके चेहरे को लाल होते देखता रहा। पत्र समाप्त करके उसने अमित की ओर देखा। दोनों चुप रहे, फिर जानीन ही पहले बोली, 'इसमें तो धमकियां भी हैं। इन धमकियों के लिए पुलिस में...'

'मुझे धमकियों की चिन्ता नहीं है'...इसमें जो गालियां हैं, वह एक व्यक्ति विशेष को नहीं बल्कि एक पूरी जाति को हैं...सच पूछो तो मुझे इससे घाव लगा है जानीन, इससे तो यही लगता है कि बीसवीं सदी के *इस वैज्ञानिक युग में भी कुछ आदमियों को आदमी नहीं समझा जाता।* कुछ बातें कभी तो ऊपर आ ही जाती हैं।'

जानीन की आंखें एकाएक डबडबा आई थीं। अमित ने उसके हाथ से वह चिट्ठी लेकर उसे फाड़ दिया।

'मुझे अपने बाप से इस तरह की उम्मीद नहीं थी अमित!'

'यह पत्र कोई और भी तो लिख सकता है।'

अपने आंसुओं को टपका देने के लिए जानीन ने आंखें दूसरी ओर घुमा ली।

ठीक एक बजे दोनों बंगला छोड़कर आगे बढ़े।

मेबर्ग के रास्ते में समुद्री इलाके की छोटी-छोटी बस्तियों की उन झोपड़ियों की ओर जानीन का ध्यान आकर्षित कराते हुए अमित कह रहा था, 'शायद इन दृश्यों को तुमने न देखा हो। यहां से गुजरी तो जरूर होगी पर ऐसा होता है जानीन कि हम पास से गुजरकर भी इन दृश्यों को नहीं देख पाते।'

मेबर्ग तक जानीन कुछ नहीं बोली।

घण्टे-भर बाद वह ग्री-ग्री का क्रूर दृश्य था, जहां जानीन ने अपनी ख़ामोशी तोड़ी, 'मैं छोटी थी तो यहां आने से डरती थी। लगता था, ये पहाड़ से उफनते ज्वारभाटे मुझे दबोचकर सागर में विलीन हो जाएंगे।'

ज्वारभाटे की झटास दोनों के ऊपर से निकल गई।

उस झंझावात् के पानी से जानीन एकदम भीग गई। अमित थोड़ा पीछे था इसलिए उसके केवल पतलून का कुछ भाग भीगा था। गीले कपड़ों में जानीन सिमट गई। अमित को वह बेहद अच्छी लगी। अमित उसे एकटक देखता ही रह जाता अगर उसे यह ख़याल न आता कि जानीन भीगे कपड़ों से बीमार हो सकती थी। चट्टान की आड़ में जानीन ने ऊपर के कपड़े उतारे और अपने को तौलिये से लपेट लिया। सागर दहाड़ता रहा। दोनों चट्टान के ऊपर धूप में बैठे रहे : 'अमित, इन लहरों के प्रण को कोई तोड़ सकता है क्या ?'

'उनके प्रण को कोई नहीं तोड़ सकता, पर···'

'चुप क्यों हो गए ?'

'ये लहरें इन चट्टानों को भी कभी नहीं तोड़ सकतीं।'

'चट्टानों में कन्दराएं तो बना देती हैं ?'

'यह सही है।'

'हमें भी कोई नहीं रोक सकता अमित···क्यों, तुम इस तरह चुप क्यों हो ?' बादलों की मोटी परतें सूरज के ऊपर आकर ठिठक गईं। जानीन को ठंड लगी। वह अमित से चिपक गई, 'अमित···'

इस एक शब्द में अमित को जैसे अपने समूचे भविष्य की हिलोरें मिल गई हों।

## १८

किशोर की मेज पर ताश के पत्ते बिखरे पड़े थे।

वह उन पत्तों से स्काइस्क्रैपर बनाने में लगा हुआ था। पत्तों की वह

इमारत दो बार लुढ़क चुकी थी। वह तीसरा प्रयास कर रहा था। अपने गिलास का कोकाकोला पी चुकने के बाद अमित उसे एकटक देखता रहा। उसके तीनों प्रश्नों में से किशोर ने एक का भी उत्तर नहीं दिया था। अपनी सिगरेट के टुकड़े को अधफूटे राखदान में छोड़ते हुए उसने पिछले प्रश्न को दोहराना चाहा पर वैसा करता कि इससे पहले किशोर ने सिर उठाकर उसकी ओर देखा, 'अमित, तुम जानते हो, मैं कौन हूं ?'

'एक बहुत अच्छे कलाकार हो तुम।'

'बिना मान्यता वाला।'

'जरूरी नहीं कि मान्यता और कला के बीच विशेष सम्बन्ध हो।

किशोर ने नीचे के ताश के पत्तों की कतार में एक पत्ते को खींच दिया। बाकी सभी पत्ते मेज पर लुढ़क गए। मुस्कराते हुए उसने कहा 'मैं चिड़ी का ग्यारह नम्बर हूं।'

'चिड़ी का ग्यारह नम्बर ताश के पत्तों में होता ही नहीं।'

'मैं वही हूं, जो नहीं हुआ करता। कहीं नहीं हुआ करता।'

'यह तुम्हारे हताश-निराश होने की प्रतिक्रिया तो नहीं हो सकता ममत्व प्रेम की प्रक्रिया है क्या ?'

किशोर फिर से ताश के पत्तों का स्काई-स्क्रैपर बनाने में लग गया

अमित और जानीन की उस दिन की यात्रा नु-ओ-शेफं के पास समाप्त हुई थी। वह मृगकुण्ड ज्वालामुखी की याद दिलाता था। जानीन ने अमित से पूछा था, 'इस प्रसुप्त ज्वालामुखी में भी अगर अंगारे निकलने लग जाएं तो ?'

'उसी दिन भेद-भाव मिटेगा। उसी दिन सभी एक स्वर में रक्षा की गुहार करेंगे। कोई गरीब न होगा, कोई धनी नहीं होगा। न कोई छोटा, न कोई बड़ा। उस दिन का वह प्रलय किसीको नहीं देखेगा। वह रंग देखेगा न हैसियत, न कद देखेगा न पद देखेगा …।'

जानीन हैरत के साथ अमित को देखती रह गई थी। उसे उस

उत्तर को वह समझ न सकी। उस समय ढलते हुए सूरज की लालिमा पश्चिमी आकाश को तर किए हुई थी। ठंड बढ़ आई थी। जानीन की अमित से विलग होने की इच्छा नहीं हो रही थी।

विलग होने से क्षण-भर पहले की जानीन की उन बातों से अमित को भी उतनी ही हैरानी हुई थी जितनी कि उसकी बातों से जानीन को हुई थी, 'मैं तुम्हें प्यार करती हूं अमित, इसलिए मेरी बात को भावुकता और संवेदना का विशेषण बड़ी आसानी से दिया जा सकता है, लेकिन अगर मैं तुम्हें प्यार न भी करती तो यह प्रश्न मेरे समूचे जीवन की नींद को हराम कर जाने के लिए पर्याप्त था कि आखिर क्या कारण है कि इतने लम्बे इतिहास के दौरान रंग के भेद को इस तरह बरकरार रखा गया है? विश्व-भर के इतिहास और साहित्य में जब प्यार ने किसी दीवार को अपने सामने टिकने नहीं दिया, तो फिर यह कैसा अपवाद है कि यहां की वह दीवार आज भी ज्यों ही त्यों है? तुम तक पहुंचने के लिए अगर मैं इस दीवार को नहीं फांद सकी तो···उसे अपनी लाश पर ढह जाने दूंगी।'

अमित अवाक् उसकी ओर देखता रह गया था। भर्राई हुई होकर भी वह आवाज किसी और की न होकर जानीन की ही थी।

'अमित एक बात मेरी समझ में नहीं आती। सुना है और पढ़ा भी है कि हर धर्म, हर साहित्य में प्यार को पवित्र कहा गया है···तो फिर इस पवित्र वस्तु को लोग इस तरह दुत्कारते क्यों रहते हैं? दुनिया-भर की जो प्यार-कथाएं हैं, सभी दारुण यन्त्रणाओं की कथाएं हैं···ऐसा क्यों?'

'इसीलिए तो वह पवित्र माना जाता है।'

जानीन अमित के उत्तर से संतुष्ट नहीं हुई थी, पर चुप रह गई थी।

उसी रात अमित की मां काफी देर तक अमित के कमरे में बैठी रही थी। उसने कहा था, 'मैं तो तुम्हारी सभी बातें मान चुकी···और अब भी मैं उस बात पर विश्वास नहीं करती···मैं तो अभी भी यही कहूंगी कि यह न कभी हुआ है और न कभी होगा।'

'मां, तुमने कभी माना था कि आदमी चांद पर भी पहुंच सकेगा?'

'यह दूसरी बात है अमित !'

'नहीं मां, वही सम्भव और असम्भव वाली बात है।'

'खैर, तुम भी असम्भव को सम्भव बनाकर दिखाओ तो सही'''मैं अगर एक क्षण के लिए इसे सम्भव भी मान लूं तो क्या मेरे एक प्रश्न का उत्तर दोगे ?'

'पूछो।'

'वह लड़की तुम्हारे घर आकर किस धर्म को मानेगी ?'

'जो उसकी मर्जी।'

'और तुम ?'

'जो मेरा धर्म है, वही।'

'और तुम्हारा बच्चा ?'

अमित चुप रहा। उसकी मा ने अपने प्रश्न को दोहराया, 'उसका क्या धर्म होगा ?'

'दोनों धर्मों के प्रति आदर ही उसका अपना धर्म होगा।'

'वह हिन्दू कहां तक रहेगा ?'

'हम कहां तक हिन्दू हैं मा ? खैर, मां, मैं तुम्हें सही बात बता ही दूं। अभी कहूं तो वह हिन्दू धर्म अपनाने को तैयार है, पर मैं नहीं मानता कि धर्म बाजार का कोई कपड़ा है कि आदमी जब चाहे उतार या पहन ले। मैं चाहता हूं कि जानीन हिन्दू बनने का वह दिखावा न करे जो बस एक साड़ी पहनकर माथे में टीका लगा लेने से होता है'''वह उस हिन्दुत्व को जीए, जो ऊपर की नहीं, भीतर की चीज होती है।'

'बेटा, कुछ लोग कालेपन और सांवलेपन को बदसूरती मानते हैं, उसी तरह कुछ लोग बस गोरेपन को ही सुन्दरता मानते हैं।'

'नहीं मा, मैंने गोरेपन को सौन्दर्य नहीं माना है। मैंने प्यार को सुन्दर माना है।'

'ठीक है अमित !'

वह अपने कमरे को लौट गई थी। उसके चले जाने पर अमित को ऐसा लगा था कि उसकी मा के सामने बातें अधूरी रह गई थीं। जाती हुई अपनी मा की आंखों में उसने झांक लिया था। वह नाराज नहीं थी।

उन आंखों में वही भाव था, जो अमित हमेशा से देखता आ रहा था। वह छोटा था···सर्दी के मौसम में मां के सामने आईसक्रीम का हठ करने पर उसकी मां की आंखों में यही भाव हुआ करता था। अमित के आईस-क्रीम खा चुकने के बाद उसकी मां उसे घी-मधु पिला देती थी।

जानीन को अब तक वह अपनी मां के सामने सिर्फ इसलिए नहीं लाया था कि वह चाहता था कि उसकी मां अपनी ओर से यह इच्छा प्रकट करे। सुबह अमित चारपाई पर ही था, जब उसकी मां भीतर आ गई थी। अमित को लगा था कि मां रात-भर सोई नहीं होगी। उसकी आंखों में एक हलकी लाली थी। आते ही वह बोली थी, 'मैं उस लड़की को देखना चाहती हूं।'

'जानीन को ?'

'कोई दूसरी लड़की भी है क्या ?'

'तुम कहो तो आज ही शाम उसे तुम्हारे सामने ला खड़ा करूं।'

'मंगल की शाम उसे ले आना।'

मां यह कहकर चली गई थी। अमित खुश हो गया था। राधिका जब चाय लिए ऊपर आई थी तो अमित ने उसके दोनों कंधों को पकड़-कर झकझोर दिया था। चाय छलक गई थी। चादर और फर्श की ओर देखती हुई राधिका बोली थी, 'यह तुम्हीं साफ करोगे।'

राधिका की उस मुस्कान को उसने नहीं देखा जो कमरा छोड़ते समय उसके होंठों के बीच थिरक आई थी। राधिका के चले जाने पर अमित अपनी अस्त-व्यस्त पड़ी चारपाई पर बैठ गया। सोचा···प्यार भी विचित्र ···नहीं, प्यार नहीं···प्यार कैसे विचित्र हो सकता है ? पर हां, उसका असर विचित्र होता है। अमित उस असर की गुदगुदी को महसूसता रहा। वह बस महसूसने के लिए ही थी। उसकी कोई अभिव्यक्ति सम्भव नहीं थी। किशोर को भी वह शायद अपने ऊपर के इस असर के भाव को न बता सके। किशोर कलाकार था। अमित अगर थोड़ा भी बताता तो वह समझ जाता, पर क्या बताना था, यह तो उसे मालूम होता ? कभी तो वह सोचता था कि प्यार के लिए उसके पास समय ही कहां है। और जब समय मिला तो पहला प्रश्न जो उसके भीतर पैदा हुआ था, वह यह

था कि अब कहीं यही मेरा समय न ले बैठे। तब उसे लगता कि उसमें एक ताजगी आ गई थी···सक्रियता और स्फूर्ति आ गई थी। उसका हौसला बढ़ जाता था। अपने मजदूर मित्रों के लिए लड़ने का हौसला। अमित ने जानीन से कहा था, 'मेरी लड़ाई जिन लोगों के साथ है, उनमें तुम्हारे बाप का नाम भी आता है।'

'जानती हूं।'

'बुरा नहीं मानती?'

'वह लड़ाई तो तुम्हें करनी ही थी···इस बहाने नहीं तो दूसरे बहाने।'

अमित ने प्यार की कहानियां देखी थीं···सुनी थी, जिया नहीं था और जब तक जिया नहीं था, यही सोचता था कि एक बार किसी लड़की को चाह लेने पर आदमी अपने को अलग चीजों से काट लेता है···दुनिया पीछे छूट जाती है और वह उस लड़की के साथ या तो किसी बहुत बड़े जंगल में खो जाता है या किसी बहुत बड़े रेगिस्तान में पहुंच जाता है, जहां से अपनी दो परछाइयों के सिवाय कुछ और दिखाई ही नहीं पड़ता। उसकी वह धारणा कितनी गलत थी, आज वह अपने माहौल को और भी स्पष्ट पाकर समझ सका था। यह जूझना भी उसे अच्छा लगता था। उसकी मां कहती तुम्हारा प्यार एक असम्भव प्यार है। वह दुखी होकर कहती थी। अमित को असम्भव का दुख नहीं था। हर असम्भव में ही तो उसे जूझने का अवसर मिलता था। सम्भव के लिए क्या जूझना था? और फिर आदमी को अगर जूझना न पड़े तो वह जी कैसे सकता है? दम घुटने लगेगा। अकुलाहट पैदा हो जाएगी और···

## १९

जिस कमरे में डावकर की कोठी और मिल-मालिकों की बैठक हुई, वह जानीन के कमरे की बगल में पड़ता था। बाल्कनी की ओर खिड़कियों के खुले रहने के कारण उधर की सभी बातें जानीन सुन पाई थी। बातें

इसलिए भी स्पष्ट सुनाई पड़ी थीं क्योंकि कभी कुछ आवेश में और जोरों के साथ बोला जा रहा था। सभी कुछ सुन चुकने के बाद जानीन ने सोचा था कि ये सारी बातें वह नहीं सुन पाती तो अधिक अच्छा होता। शैम्पेन की बोतल के खुलने की आवाज के साथ ही वह अपने कमरे से बाहर हो गई थी।

पश्चिमी बालकनी के ताम्बे की छड़ों के सहारे खड़ी वह सूरज को ओझल होते देखती रही। एकाएक बहुत दिनों के बाद उसे घर के प्यानो के सामने बैठने की इच्छा हुई। नीचे पहुंचकर वह उस काले चमकीले प्यानो को गौर से देखती रही फिर उसके सामने जा बैठी। यह वाद्य उसके घर की सबसे पुरानी चीजों में था। इटली के फ्लोरेन्स में बना हुआ यह प्यानो इस घर में एक वाद्य के रूप में न होकर सौन्दर्य-प्रसाधन के रूप में अधिक था।

प्यानो के नोटों पर उसकी अंगुलियों के पहुंचने से पहले कई धुनें उसके कानों में गूंज गई। एक धुन उसके मस्तिष्क में आकर चिपक गई। वह थी एगन एण्ड वाईटिंग की 'टिल वी मीट एगेन'।...और जानीन की अंगुलियां प्यानो पर थिरक उठीं।

चम्पा ने पीछे से आकर कहा कि मादाम उसे प्यानो से हट जाने को कह रही हैं। जानीन घर के दूसरे प्यानो के सामने पहुंची। यह नया प्यानो उसका बाप फ्रांस से खरीद लाया था। प्यानो के सामने क्षण-भर खड़ी रहने के बाद जानीन के अपने भीतर की चाह ही शिथिल पड़ने लगी। वह लौटकर फिर से अपने कमरे को आ गई। मीटिंग रूम की बातें अब तक कोलाहल का रूप ले चुकी थीं और सात व्यक्तियों की आवाजें साठ की आवाजें-सी लग रही थीं। जानीन ने अपनी दोनों खिड़कियां बन्द कर लीं—कोलाहल से अधिक ठंड से बचने के लिए। उसे लगा कि आज हमेशा से अधिक ठंड थी। बाहर हलकी बारिश थी इसलिए वह मेजों क्लांस नहीं जा सकी थी। दो सप्ताह से वह बिलकुल क्लब नहीं गई थी। उसके कई साथी उससे मिलने घर आ गए थे। जानीन की अनुपस्थिति की वजह से रीयुनियन टीम के साथ वह वाली-बाल का मैच भी नहीं हुआ था। कल जब उसकी सहेलियां उसे घसीटे मेजों क्लांस ले

जाना चाह रही थी, उस समय उसने आज पहुंचने की बात कहकर उन लोगों से पीछा छुड़ाया था। पिछली बार वह अमित को अपने साथ लिए वहां गई थी। उसके साथियों की प्रतिक्रिया से स्पष्ट था कि सभीको अमित की उपस्थिति खटकी थी। उसी क्षण से वह स्थान जानीन को चुभने-सा लगा था। आज न जा सकने का उसे दुख नहीं था। हीटर ऑन करके वह अपने कमरे में बैठी रही। घंटे पहले मीटिंग रूम से जो आवाजें आई थीं, उनकी प्रतिध्वनियां उसके इर्द-गिर्द होती रहीं। वह उसके अपने बाप ही का स्वर था, 'सरकार को धमकाने के लिए एक सरल उपाय तो वही होगा कि हम उसे अपने दिवालियेपन की सूचना दे दें।

'इसका एक उलटा रूप यह भी हो सकता है कि सरकार मिल खरीदने पर उतर आए और अगर ऐसा हो गया तब तो फिर लेने के देने पड़ जाएंगे।'

'सरकार के पास इतना दम कहां ?'

'अगर सरकार इस बात से सहन सकती है तो फिर मुझे कोई एतराज नहीं।'

जानीन इस वार्तालाप के संदर्भ को अच्छी तरह जानती थी। सभी क्षेत्रों के मजदूरों की तनख्वाह में वृद्धि हुई थी। वह केवल शक्कर उद्योग था, जहां मजदूर आज भी उसी हालत में थे जिसमें वर्षों पहले थे, जब आटा-चावल आधे दाम में आते थे। बहुत सारी बातें न समझ सकने के बावजूद भी जानीन कम से कम एक बात तो अच्छी तरह समझ गई थी। शक्कर उद्योग के पास धन का कोई अभाव नहीं था। इधर विश्व मंडी में शक्कर के दाम बढ़ने से इनकी आमदनी सात-आठ गुनी अधिक हो चली थी। मजदूरों के हक को ये लोग खुशी-खुशी दे सकते थे, इससे इनकी तिजोरियां ज्यों की त्यों भरी पड़ी रह सकती थीं। पर न देने का एक ही कारण था। इन लोगों की अपनी हानि की कोई बात तो थी ही नहीं तो फिर ? लम्बे तर्क के बाद अन्त में जानीन को एक उत्तर तो मिल ही गया था। वह यह मानने को विवश थी कि चीनी उद्योग की ये हस्तियां यह नहीं चाहतीं कि मजदूर की दशा में कोई सुधार आए। उसमें सुधार आने का मतलब होगा, एक दूसरे वर्ग का जन्म। यही बात उन्हें गवारा नहीं थी।

पावकार उद्योग के इन लोगों ने जिस वर्ग को पैदा किया था, वह सिर झुकाए आज्ञा पालन करने वाला वर्ग था। एक ऐसा वर्ग जो हर डांट-डपट पर हाथ जोड़कर सामने खड़ा हो जाता था। दशा सुधार के बाद यह वर्ग मालिक और नौकर के अन्तर को कम करके पावकार उद्योग की हस्ती को मटियामेट कर सकता है। इस आशंका की चर्चा जानीन पहले भी अपने बाप से सुन चुकी थी।

उधर अमित था।

इधर जानीन का बाप था।

दोनों के संघर्ष के बीच थी वह।

और बीच से दोनों छोरों को देखती हुई वह अपने-आपसे प्रश्न कर बैठती, 'अगर अमित नहीं होता उस दूसरे छोर पर तो क्या यह मेरा अपना माहौल मुझे ऐसा ही लगता, जैसा आज लग रहा है? इस एकाएक के घिनौनेपन का आभास क्या संवेदना है? तो फिर?'

जिस तरह उसके कई प्रश्नों के उत्तर नहीं हुआ करते, ठीक उसी तरह इसका भी कोई उत्तर नहीं रहा। उत्तर के अभाव में भी प्रश्न पैदा होते ही गए। अमित का यह कहना क्या सही नहीं कि मजदूरों को मात्र उनके अधिकारों से वंचित नहीं रखा जाता बल्कि, उन्हें भीतर से मार डाला जाता है? उनके हृदय और उनकी आत्मा की हत्या कर दी जाती है? जानीन के भीतर जो पहला विचार पैदा हुआ था, वह था अपने लोगों को समझाने का प्रयत्न करना···उनसे यह कहना कि उस पहली घड़ी से जो झूठ मजदूरों के साथ बोला जा रहा है, उसे रोक दिया जाए। पर कौन सुनता उसे! उसकी दादी ने तो यहां तक कह दिया था कि गधे का बोझ गधा ढोता है, घोड़ा नहीं। दूसरा खयाल जो उसको आया था, वह था अमित के साथ होकर उसके संघर्ष को अपना संघर्ष बना जाना और···और फिर···। इससे आगे वह सोच ही नहीं पा रही थी।

जिस समय जानीन को यह ज्ञात हुआ था कि वह अमित को प्यार करती है, उस समय उसने यह सोचा था कि उसे एक दीवार को तोड़ना था···रंग के भेद को मिटाना था। पर इधर अमित के बहुत अधिक करीब पहुंचकर वह सोचने लगी थी कि दीवार एक ही नहीं थी···अनेक

थी। किस-किस को तोड़े? इससे पहले भी तो इन दीवारों को गिराने के प्रयास होते रहे हैं…ये तो टूटती और बनती रहती हैं। अमित उसे उन व्यक्तियों के बारे में बताता जिन्होंने इस देश की दासता की दीवारों को तोड़ा। आज जानीन ने अपने-आपको सुना…तो क्या उस दीवार के ढहते ही गुलामी खत्म हो गई? यह वह आज भी मौजूद है नया जामा पहने?

कमरा गर्म हो चला था। जानीन कोच पर उसी तरह बैठी रही। वह इन सारे प्रश्नों को किसीके सामने रखना चाहती थी। किसके सामने रखे? अपने बाप के सामने रखने का कोई मतलब ही नहीं था। मां के सामने रखे तो वह बरस पड़ेगी—दुनिया-भर की चिंता को अपने सिर क्यों लिए फिर रही हो?

सचमुच वह उन चिंताओं से मुक्त रहकर भी तो जी सकती है, फिर…? जी तो सकती है पर शायद उसे उस आनंद से वंचित रह जाना पड़े जो वह चाह रही थी, यह तो अपने जीवन में अमित को पाने से पहले ही वह सोचा करती कि हर एक की खुशी देखकर जो खुशी होगी, वह कितनी बड़ी होगी! एक दिन उसने अपने-आपसे पूछा था कि चम्पा के पास अपनी जमीन का एक टुकडा, अपना एक छोटा-सा घर होता तो? कितनी खुशी होती चम्पा को और उसकी उस खुशी से खुद वह कितनी खुश होती! लेकिन चम्पा की वह खुशी किसके हाथों गिरवी थी? कम से कम एक बात तो स्पष्ट थी…एक आदमी का घर दस बीघा जमीन घेरे हुए था और दूसरे आदमी को पांव रखने की जगह नहीं थी। उसकी मा उससे कहती, 'अपने हाथ देख, तुम्हारी सभी अगुलिया बराबर नहीं।'

अपनी मा की इन दलीलो के सामने वह चुप रह जाती, उन्हें बच्चो की दलील मानकर। और उसकी मा उसकी चुप्पी पर खुश हो जाती। सोचती, वह जानीन को प्रभावित कर सकी थी।

सूरज डूब चुका था। उसका मध्यम प्रकाश अब भी वातावरण से लिपटा हुआ था। नारियल के झुके पत्तो के छोर पर चोचे अपने खोतो में झूल रहे थे। जानीन भी अपने को उसी तरह अनिश्चित मे झूलती पा

रही थी। चम्पा ने दरवाजे के पास से आवाज दी, 'मामजेल तेलेफोन !'

जानीन ने दरवाजा खोला और चम्पा के आगे-आगे दो-दो करके सीढ़ियां उतर गई। अमित का ही फोन था वह।

'जानीन, तुम्हारी लाइन खराब थी क्या ?'

'नहीं तो।'

'तीन बजे से लगातार तुम्हें ट्राई कर रहा हूं।'

'शायद...।'

'खैर, छोड़ो...कल मुझे नौकरी से हटाए गए कुछ मजदूरों की समस्या पर जांच करने निकलना है...तुम मेरा इन्तजार न करना।'

'शनिवार को।'

'मैं फोन करूंगा। आज रात क्या कर रही हो ?'

'कुछ नहीं। घर पर हूं।'

'आज रात टेलीविजन पर एक सुन्दर हिन्दी फिलम आ रही है। जरूर देखना।'

'कौन-सी फिलम ?'

उस दिन तुम पूछ रही थीं न कि इण्डियन फिल्मों के कौन-कौन-से प्रतिवद्ध डायरेक्टर हैं जो अपनी फिल्मों में मानव मूल्यों को उकेरने में सफल रहे हैं ? सम्भवतः यह फिलम देखने के बाद तुम्हें...'

'पर अमित, मैं समझ पाऊंगी ?'

'जिन चीजों को मैं चाह रहा हूं, तुम समझो, उन्हें समझने के लिए भाषा दीवार नहीं बन सकती है। तुम फिलम देख तो लो फिर उसपर बात करेंगे।'

'नाम नहीं बताया तुमने ?'

' 'वन्दिनी'।'

' 'वन्दिनी' का क्या अर्थ होता है ?'

'ला प्रिजोन्येर। इसका संगीत भी तुम्हें बहुत अच्छा लगेगा।'

'जरूर देखूंगी।'

टेलीविजन के हिन्दी कार्यक्रम के समय जानीन के घर स्थानीय कार्यक्रम की जगह पर रीयूनियन के कार्यक्रम देखे जाते थे। कभी भूल से

अगर हिन्दी कार्यक्रम सामने आ जाता तो जानीन का बाप, उसकी मां तथा उसकी दादी तक नाक सिकोड़ने लग जाते और जानीन इस बात को कभी नहीं समझ सकी थी कि हिन्दी के प्रोग्रामों से इन लोगों को इतनी चिढ़ क्यों थी। भाषा न समझने के कारण? अगर ऐसा होता तो फिर दुनिया-भर के अन्य संगीत चाव से क्यों सुने जाते थे? उसका भाई जब यहां था तो हर वक्त मेक्सीकन, इटालियन और स्पेनिश गानों को गुनगुनाता रहता था जबकि उन गानों का एक शब्द भी वह नहीं समझता था।

रात को जिस समय स्थानीय टेली पर हिन्दी फिल्म थी, ठीक उसी समय ओ० आर० टी० एफ० पर एलफ्रेड हिचकाक की कोई फिल्म थी। जानीन के लिए यह आसान नहीं था कि वह टी० वी० सेट के सामने बैठे अपने मां-बाप की हाजिरी में हिन्दी फिल्म देख सकती, पर उसने तय कर लिया था कि वह उस फिल्म को अवश्य देखेगी।

## २०

जानीन का बाप कैनवस के जिन सफेद जूतों को पहनकर टेनिस खेलने जाता, वे एक सौ पचहत्तर रुपये के थे। खेल-कूद के सामान वाली विशेष दुकान से उसने उन्हें खरीदा था।

जानीन गुलमोहर के पेड़ के नीचे बैठी नाताली सारोत का उपन्यास पढ़ रही थी। अपाया सात रुपये के सफेद जूते पहने काम पर आ गया था। जानीन का बाप सुबह के टेनिस के रियाज के बाद लौटा था। अपाया के पांव के जूतों पर नजर पड़ते ही उसने कड़ककर पूछा था:

'ये जूते कहां से मिले तुम्हें?'

'साहब, चीयीन की दुकान से खरीदे हैं।'

इसपर जानीन के बाप ने जेब से अठन्नी निकालकर उसके सामने फेंक दी थी, 'उठा लो इसे। मैं चाहता हूं कि तुम इससे काले रंग का

शू-पालिश खरीदो। और कल मैं तुम्हारे जूतों को सफेद देखना नहीं चाहता। समझे या नहीं ?'

अपाया सकपका गया, जानीन चुप रह गई। एक खौलने वाली चुप्पी थी वह।

वह किशोर के उस नये चित्र को देखता रहा।

रंगों की अस्पष्टता के बीच एक बैंगनी आकृति···लम्बी गर्दन और अनुपात से बहुत अधिक बड़े-बड़े उसके दो हाथ। अपनी ही गर्दन दबोचते हुए बाहर आ गई आंखें, फिर भी होंठों पर बुद्ध जैसी मुस्कान···।

अमित ने किशोर से पूछा, 'क्या है यह ?'

'मेरा नया चित्र।'

'यह तो मैं भी देख रहा हूं, पर ?'

'यह इस्तीफा है···जीवन से इस्तीफा यानी कि आत्महत्या।'

अमित दहल गया।

अपाया फूलों की क्यारियों के बीच निराई में व्यस्त था।

गुलमोहर के पत्तों के बीच की नन्ही खिड़कियों से शाम की किरणें जहां-तहां बेसुधी की हालत में पड़ी हुई थीं। आस्तेरिक्स की पीठ पर हाथ फेरती हुई जानीन गौरैया की जोड़ी को जलाशय की मुंडेर पर जमा पानी में नहाते देख रही थी। गरमी के मौसम की खामोशी शाम बोझ की सी प्रतीत हो रही थी। आमड़ा के नंगे पेड़ पर इने-गिने पीले पत्ते बाकी थे। बाग के फूल भी गरमी की अकुलाहट लिए थे। पिछवाड़े के काले पेड़ के सूखे पत्तों की खड़खड़ाहट स्पष्ट थी। जानीन उसीको सुन रही थी। हवा थम जाती। खड़खड़ाहट बन्द हो जाती। फिर एकाएक आवारा हवा के झोंके से खड़खड़ाहट नुकीली सुई की तरह उसके कानों में चुभ जाती और उसके सोचने की प्रक्रिया में झटका लग जाता। फिर हवा बन्द हो जाती। गरमी की शाम की वह खामोशी गहरी बन जाती और वह उसमें गहराई

तक डूब जाता।

कल रात उसके बाप के ये थप्पड़...उसके गाल गरम हो गए हैं... उसके यहां पार्टी थी। फोटो की आमदनी दुगनी हुई थी। उसकी दो खुशियां कहीं और मनाई जा चुकी थीं। ईख की कटाई अभी पराकाष्ठा पर थी फिर भी फसल के इतने शानदार होने की खुशी इतनी सीमित नहीं हो सकती थी। यह तीसरी पार्टी थी। पिछली दोनों में अपनी मां के बहुत विवश करने पर जानीन को जाना पड़ा था। वह यहां से ऊब-कर लौटी थी। तीन ही दिन बाद उसके अपने ही घर उसके ऊबने का दूसरा अवसर था। वह विशाल कमरा भरा हुआ था। वे सभी एक तरह के लोग थे...एक तरह की सासें थी उनकी। जानीन अपने से बस इतना पूछकर रह गई थी कि क्या वह भी उन्हीं लोगों में से थी ?

पार्टी से पहले ही उसकी मां बोल पड़ी थी कि दावत अधिक लोगों को दी जा चुकी थी। सभी आ गए थे। जानीन उस भीड़ की चिपचिपाहट में अकुला उठी थी। तीन-तीन, चार-चार की टोलियों में लोग इस तरह बातें कर रहे थे, जैसे सुनने वाले बहरे हों। हंसी से छत हिलती-सी प्रतीत हो जाती। एअर कंडिशन्ड कमरे में भी लोगों को पसीना आ रहा था। पसीने की गन्ध से सौन्दर्य-प्रसाधन की सभी गंध दब गई थीं। बहुत अधिक आवाजें थीं, बहुत अधिक उल्लास, बहुत अधिक चहलपहल। जानीन वहां से हटकर बरामदे में आ गई थी। बरामदे के स्तम्भों से चिपकी बेलों के पास खड़ी हो गई थी। वह तीसरा व्यक्ति जामुनी रंग के कोट में उसी रंग की टाई बांधे उसके सामने आ खड़ा हुआ था। जानीन उसे जानती थी। जा-द मार्गो ने उसका परिचय जानीन से कराया था। तीन महीने पहले मुलाकात के पहले अवसर पर ही उसने जानीन के होंठों को चूम जाने की कोशिश की थी। उस घड़ी से अब तक उसने कई कोशिशें की थीं। उसकी सांसों से आती हुई फ्रांसीसी सिगरेट की गंध से जानीन की सांसें भारी हो जातीं। वह दूर भाग जाती। जानीन फिर से भीड़ के बीच लौट गई थी। उसका मन बार-बार अपने कमरे को लौट जाने को करता रहा था। उसके बाप ने पहले ही कह दिया था, 'पार्टी के समाप्त होने से पहले तुम उसे नहीं छोड़ सकती।'

कठिनाई से लोगों के बीच चलने-फिरने का रास्ता था। कठिनाई से किसीकी बात समझ में आ रही थी। कठिनाई से वह सांस ले पा रही थी। वह एक जगह रह रुकना नहीं चाहती थी। हाथ में सेंडविच का प्लेट लिए वह इधर से उधर टहल रही थी। उसकी कोई सात-आठ सहेलियां थीं लोगों के बीच, पर सभी व्यस्त थीं। मेहमानों की देखभाल और परोसने के लिए लाफलोर से सात आदमी आए हुए थे। सफेद लिबास में ये ही सात व्यक्ति थे जो लोगों के रंग से भिन्न रंग के थे। जानीन सोच उठी थी इसीलिए तो वे जश्न में शरीक न होकर सेवा में लगे हुए थे। गोरा रंग सेवा लेने के लिए होता है, काला रंग सेवा करने के लिए। अच्छा कानून था यह! सेवा करने वाला सबसे बूढ़ा आदमी था वह, जिसके हाथ से ट्रे छूट गया था। गिलास के टुकड़ों को उठाते हुए उसकी अंगुली कट गई थी। खून बह चला था। जानीन ने दौड़कर उसके हाथ को अपने हाथ में ले लिया था। उसके कंधे के तौलिये से वह खून पोंछने लगी थी कि तभी उसका बाप सामने आकर उस व्यक्ति पर बरस पड़ा था। जानीन को खींचकर उसने अलग कर दिया था।

कल रात का यही दृश्य जानीन के जेहन में चिपका हुआ था।

हट ही नहीं पा रहा था। उस व्यक्ति की उस पीड़ा को वह जूझ रही थी। वह आदमी चुप रह गया था पर उसके भीतर बहुत बड़ी पीड़ा थी। जानीन उस पीड़ा को देख चुकी थी। अब भी देख रही थी। जानीन के लिए वह स्थिति एक बहुत बड़ी चुनौती थी। किसी दूसरे व्यक्ति की पीड़ा को सहने की चुनौती। उसकी अपनी आंखों के सामने जो घना अंधेरा रह-रहकर छा रहा था, वह कुछ न होकर उस काले आदमी की वह पीड़ा ही थी। अब उससे जूझते हुए जानीन की छोटी-बड़ी सभी धमनियों में वही पीड़ा होने लगी थी। रात उसे नींद नहीं आई थी। न जाने किस अकारण खयाल के साथ वह काला आदमी अमित की यादों के साथ जुड़ गया था। वह उस पीड़ा को अन्त तक झेलना चाह रही थी। उसे अन्त तक झेलकर वह अमित के साथ जुड़ सकती थी।

वह सोचने को विवश हो गई थी कि उसे उस लड़ाई में शामिल होना था जिसे आदमियत के नाम होना ही है। वह होता भी रहा हो। और

हर बार किसी बड़े शून्य में खो जाती होगी। उसकी जीत की कभी चर्चा ही नहीं होती या तो'''। कुछ भी हो, कल रात का वह दृश्य उसकी हड्डियों तक को भेदता हुआ भीतर प्रवेश कर गया था। वह अपमान उसका अपना भी था। वह उस निरीह आदमी के साथ जुड़ गया था। इससे पहले न जाने कितने लोग इस तरह पीड़ित हुए होंगे। आज उस आदमी की पीड़ा को वह बाट पाई थी। समझ सकी थी कि वह दर्द कितना बड़ा दर्द था। उसका संकल्प शक्ति पा गया था।

चम्पा सामान की टोकरी लिए दुकान को जाती दिखाई पड़ी।

आस्तेरिक को नींद आ गई थी। आपाया धूप को माथे पर थामे निराई किए जा रहा था। पत्तों की खडखडाहट रह-रहकर हो ही जाती थी। गौरैया की जोड़ी डैनों से पानी झाड़ने लगी थी। जानीन अपने खयालों में खोई रही।

उसके भीतर ज्वारभाटे-सी कोई चीज उठती रही, उसकी यादों से टकराती रही। उसके मस्तिष्क से टकराकर वे खयाल टुकड़े होकर छितर जाते और उसका हर अणु टुकड़ा ज्वारभाटे की तरह उसे विचलित कर जाता। विचलित होकर ही सजग हो पाती और उसमें देखने-समझने की चेतना आ जाती, यथार्थ को पहचान की स्थिति में आकर वह अशान्त हो चली थी। जिस दायरे में वह थी, उससे बाहर आकर खड़ा होना चाहती थी।

उसका अपना ही स्वर था वह, जो उसे सुनाई पड़ने लगा था, 'आदमी को आदमी के हाथ इतना दण्डित होना पड़े? इसलिए कि जो दमदार हो, उसके लिए कमजोर को दबाना नियम बनकर रह गया है? यह कानून कब तक रहेगा? और फिर यह रंग की प्रभुता क्या आज भी पुरानी नहीं हुई? तो फिर कब होगी? चांद पर बसेरा के बाद?

'कहीं ये सारी बातें मैं केवल इसलिए तो नहीं सोच रही कि अमित का पक्ष लेना है मुझे?' तर्क का एक पहलू और सामने आता।

पर तभी कई पुरानी घटनाओं की याद के साथ उसे स्मरण होता कि इस तरह की भावना तो अमित को जानने से पहले से उसके भीतर थी। उसने अपने को अमित के हवाले इसलिए थोड़े ही कर दिया था कि उसका रंग

उससे भिन्न था। अमित में उसने जो भिन्नता पाई थी, वह रंग की न होकर व्यक्तित्व की थी। उसने उस व्यक्ति को दूसरों के लिए आग में कूदते देखा था। इस भिन्नता को उसने महत्व दिया था। यह एक ऐसी भिन्नता थी जो उसने अब तक नहीं देखी थी। इसीलिए इस भिन्नता के आदरस्वरूप उसने रंग का अन्तर नकार दिया था।

अपनी दादी से वह बारम्बार पूछती रह गई थी कि आखिर इसमें भावुकता की क्या बात थी। अंधेपन का क्या प्रश्न था। इज्जत के बनने-बिगड़ने की क्या नौबत थी। जो प्रश्न वह अपने बाप से नहीं कर सकी, उन्हें अपनी दादी से करती रह गई थी। गोरा होना अगर देवता होना है तो फिर गोरे आदमियों के बीच चोर, खूनी क्यों होते हैं? अत्याचारी और हक मारने वाले क्यों होते हैं? काला आदमी नफरत के काबिल होते हैं तो फिर अपने मालिकों के प्रति उसकी वफादारी और उसके परिश्रम के फल को भी नफरत कहकर नकारा क्यों नहीं जाता?

जानीन रात सोई नहीं थी। दिन-भर भी वह सोचती रह गई थी। अपाया की स्वामिभक्ति को मूर्खता समझने लगी थी। उसके अपने भीतर तनाव-से आ गए थे। उसके सोचने का ढंग अपने संतुलन को खो चुका था, फिर भी वह अपने को सोचे जाने से रोक नहीं पा रही थी।

उसने अपनी मां से पूछा था, 'अमित के पास अगर वह सभी कुछ होता जो हमारे पास है तो क्या उस समय तुम उसे हमारे परिवार के योग्य समझ सकतीं?'

उत्तर में उसकी मां बोली, 'मक्खी हाथी के बराबर हो जाने के बाद भी दूध में गिरकर मक्खी ही रहेगी और उसे उसी तरह निकाल फेंकने में ही बुद्धिमानी है।'

जानीन ने उस बुद्धिमानी को समझने के प्रयास में अपनी सभी बुद्धि खपा दी थी।

उसके उसी प्रश्न के उत्तर में उसके चाचा ने कहा था, 'तुम कुछ भिन्न कर जाने के चक्कर में अनर्थ पर तुल गई हो।'

उसी शाम उसे पादरी के सामने खड़ा कर दिया गया था। पादरी ने उससे कहा था, 'तुम नादान हो बेटी···इस उम्र की यह छोटी-सी भूल

बाद में तुम्हें पहाड़-सी प्रतीत होगी।'

उसने अपने-आपसे पूछा था, 'कैसी नादानी, कैसी भूल ?'

पादरी उसे परमात्मा के उपदेश सुनाने लग गया था।

उसकी चाची कह गई थी, 'इसको झाड़-फूंक होनी चाहिए। कोई मलामत सवार है इसके ऊपर।'

जानीन को ऐसा लगा कि चारों ओर से लोग उसे पकड़े हुए थे। वह अपने को छुड़ाकर भागना चाहती थी। उसकी निगाह असाया पर टिकी रहीं। उसके जनम से पहले से वह उसके परिवार की खिदमत में था। चालीस साल पहले माली था, आज भी माली था।

गौरैया की जोड़ी उड़ गई।

असाया के शरीर पर पसीने की बूंदें चमकती रहीं।

पार्टी से एक दिन पहले जानीन ने अपनी मां को जीतने का प्रयास किया था। वह चाहती थी कि उसकी मां उसकी बात को स्वीकार जाए और उसकी वकालत कर जाए उसके सामने। घर में उसकी मां की बातें कई अवसरों पर चल जाती थीं, वह इसलिए कि आज जानीन के बाप के पास जो कुछ था, उसकी तीन-चौथाई से ऊपर जानीन की मां को अपने बाप की मृत्यु पर मिला था।

'अमित से मुझे विलग करना असम्भव है मामा !'

'अठारह साल की सभी लड़कियां यही भाषा बोलती हैं।'

'पर सभीकी भाषा झूठी नहीं होती होगी मा !'

'झूठी नहीं हुआ करती। भावुकता की क्षणिकता लिए होती है।'

'सभी तो नहीं हुआ करती मामा !'

'तो फिर वह एक ऐसा हठ होता है जो उसे कहीं का नहीं छोड़ता।'

'मामा, तुम सब एक बात जान लो···मैं किसी भी हालत में तुम लोगों की आपत्ति को नहीं मानूंगी।'

'तुम भी यह जान लो जानीन कि तुम्हारा बाप भी किसी भी हालत में वह नहीं होने देगा जो तुम चाह रही हो।'

'तुम भी वही करोगी मामा ?'

'और क्या कर सकती हूं···तुम्हें खाई में कूदने दूं ?'

'तुम मेरी एक बात समझने की कोशिश तो करो। मैं अमित को प्यार करती हूं और मुझे कोई रोक नहीं सकता।'

'तुम्हें केवल वही मिला था ?'

'लगता तो ऐसा ही है मामा ! मेरी समझ में एक बात नहीं आती कि उसमें क्या कमी देख ली है तुम लोगों ने ?'

'और तुमने क्या खासियत देख ली है उस दो कौड़ी के आदमी में ?'

'मैंने तो तुम्हें पापा से भिन्न समझा था। तुम तो उसीकी भाषा बोलने लगी।'

'जो इस देश में कभी नहीं हुआ, उसे तुम क्यों करना चाहती हो ?'

'यही तो मैं तुमसे पूछना चाहती हूं मां कि इस देश में आज तक ऐसा क्यों नहीं हुआ ? क्या वजह है इसकी ? किसने किसको अपने योग्य नहीं समझा ? किसने किससे घृणा की है और क्यों ?'

'तुम मुझसे बहस करना चाहती हो क्या ?'

'नहीं मामा मैं तो वह पूछ रही हूं जो मैं नहीं जानती।'

'जानीन, आखिर तुम्हें हो क्या गया है ?'

'मुझे कुछ नहीं हुआ है मां, मैं तो सिर्फ यह चाहती हूं कि तुम मान जाओ न मेरी बात को।'

'मैं तुम्हारी उस बात को कैसे मान जाऊं जिससे तुम्हारा अहित हो ? मुझे अगर किसी बात की चिन्ता है तो वह केवल तुम्हारे भविष्य की है और कुछ नहीं। तुम्हें मेरी बात अजीब भी लग सकती है क्योंकि आजकल की औलादें अपने बड़ों को अब वह महत्त्व नहीं देतीं जो हमने कभी अपने बड़ों को दिया था। फिर भी जानीन, मैं तुम्हारा अहित नहीं होने दूंगी। मैं…'

उसकी आवाज एकदम बदल गई थी। जानीन से तुरन्त नहीं बोला गया। कुछ थमकर ही उसने आगे कहा, 'प्यार से किसीका अहित कैसे हो सकता है मां ? मैं तुम्हें दुख नहीं पहुंचाना चाहती। सिर्फ अपनी खुशी मांग रही हूं। तुमसे…तुम मेरी मां हो।'

'काश सचमुच वह तुम्हारी खुशी होती !'

'फिर तो मेरे लिए जानना अभी बाकी रह गया कि खुशी क्या होती

है। जिससे आदमी प्यार करे, उसे खोखली इज्जत और बेबुनियाद अन्तर के लिए भुला देना ही सुखी होती है क्या ? मा, मैं तुम्हें दुख नहीं पहुंचाना चाहती, पर···'

'तुम मुझे दुखी नहीं कर रही पर कल खुद अपने को दुखी करके मुझे दुख पहुंचा जाओगी। एक तो पहले ही से मुझसे दूर है और तुम पास होकर भी··· । मैंने सोचा था और तुम्हारे बाप से कहा भी था कि मैं तुम्हें मना लूंगी।'

'किस चीज के लिए मामा ?'

'अपने जीवन को एक त्रासदी बना जाने से।'

'अपना जीवन तो उस वक्त त्रासदी बन जाएगा जब सचमुच ही तुम लोग मुझसे अमित को छीन लोगे।' इस वाक्य को जानीन ने बच्चे का सा स्वर में कहा था।

'बचपन से तुम ऐसी थीं जानीन, कभी भी तुमने अपनी हैसियत को पहचानने की कोशिश नहीं की। तुम छोटी थीं, रघुनाथ को हमें नौकरी से इस बात के लिए अलग करना पड़ा था कि तुम उसकी लड़कियों के साथ सभी अन्तरों को पाटकर खेला करती थीं। यह बात घर में किसीको पसन्द नहीं थी। तुम अपने जूठे उन बच्चों को खिलाती थीं और उनके जूठे खुद खाती थीं। अपने को तुमने कभी नहीं पहचाना जानीन ! यही कारण है कि तुम आज इतनी दूर भटक आई हो। अभी भी देर नहीं हुई है, तुम अपने जीवन को विषाक्त होने से रोक लो।'

'अब तो हो चुकी मामा···मेरा जीवन अब मेरा नहीं रहा।'

'तुम हम सभीको ले डुबोगी।'

'मैं डूबूंगी नहीं मां···इतना विश्वास तो मुझे है।'

सामने आमड़ा का निपाती पेड़ था। जानीन को विश्वास था, पेड़ की वह स्थिति स्थायी नहीं थी। उसे विश्वास था, उसमें पत्तों से पहले फूल आएंगे।

२१

'किशोर, मैं जानीन को अपना सर्वस्व मानता हूं। सोचता हूं, अगर वह मेरे जीवन में नहीं आई तो मेरा जीवन न जाने क्या बनकर रह जाएगा।'

'तुम उससे शादी करना चाहते हो?'

'हां किशोर, चाहे इसके लिए कुछ भी करना क्यों न पड़ जाए।'

'शादी इतनी जरूरी होती है क्या?'

अमित उसे देखता रह गया था। उसकी उन उदास आंखों में अमित जो पढ़ पाया, वह जानीन और उसके अपने सम्बन्ध की स्वीकृति नहीं थी···कुछ और था···।

किशोर अमित को पत्र लिखने बैठ गया।

'अमित,

हम एक-दूसरे के कितने पास हैं! पर कभी ऐसा भी लगता है कि हम एक-दूसरे से बहुत अधिक दूर हैं। तुम्हें ऐसा नहीं लगता क्या? आज अचानक एक चित्र बनाते-बनाते ऐसा खयाल आ गया। कई बार ऐसा भी हुआ है कि बिना जताए हम एक-दूसरे की भावना को परख गए हैं और कभी उसे समझने में इतने असमर्थ रहे हैं गोया हम सात समुद्र पार के फासले में रहते हों। वही बात कभी मुझे अपने और अपने चित्रों के बीच भी महसूस होती है। मेरे अपने ही चित्र मेरी अपनी आत्मा से जुड़े होने पर भी मुझे समझ में नहीं आते। क्या हैं ये चीजें?

इसके साथ ही सभी कुछ अर्थहीन हो जाता है। ऐसी ही अर्थहीन अवस्था में मैं आशा के निकट पहुंचा था। मैंने यात्रा का एक-चौथाई भाग तय किया था और आशा तीन-चौथाई पूरा करके मेरे पास आ गई थी। उसे अपनी यात्रा निष्फल लगी फिर भी वह जाती रही, आती रही। हर बार एक नई आशा के साथ।

इस एक बात को तुमसे जरूर छिपाता रहा। पर क्या सचमुच तुम इनसे अनभिज्ञ रहे ? मुझे ऐसा नहीं लगता। लगता है, तुम्हीं कुछ छिपा गए।

आज आशा फिर आई थी। फिर वह चारपाई एक दीवार बन गई। वह दीवार, जिसे आशा तो फांद सकती थी पर मैं नहीं फाद सकता था। वह दीवार के उस पार रही, मैं इस पार।

अमित, तुम सम्भवतः मेरी इस कमजोरी को मेरे इस अधूरेपन, इस अपूर्णता को जानते भी होगे। पर तुमने जताया नहीं, शायद इसलिए कि कहीं उससे मेरी मान-हानि न हो जाए।

तुम्हें याद है, हम दोनों साथ गए थे महात्मा गांधी संस्थान उस अमरीकन कवि की कविताएं सुनने ? बस, उसकी वह कविता, जिसमें उस अंधे का जिक्र है, जो सुना करता था बड़ी लगन से संगीतकार के संगीत को जबकि उसकी पत्नी इस चाह में कि कोई उसे देख सके, खिड़की के पास खड़ी अपने कपड़ों को उतारा करती थी। उन लोगों के लिए जो गलियों से निहार तो सकते थे, पर उसे छू नहीं सकते थे।

आशा मेरे एकदम पास थी, पर मैं दूर था उतनी ही, जितना गली के वे लोग थे, नंगे की पत्नी के स्ट्रीपटीज देखने वाले…'

मैं आशा को छू नहीं पाता। और…।'

किशोर ने लिखना रोककर चिट्ठी पढ़ी। मन में न जाने क्या आया, उसने उसे टुकड़े-टुकड़े फाड़कर हवा के हवाले कर दिया।

• •

जानीन के बहुत कहने पर ही अमित बंगले पर पहुचा था। उसने यह नहीं चाहा था कि जानीन उससे दुबारा कहे कि किसीकी क्या मजाल कि मेरे होते तुम्हें कुछ कह सके। जानीन ने उससे यह कहकर फोन रख दिया था कि वह बंगले पर उसकी प्रतीक्षा करेगी, वह शीघ्र ही पहुचे। कार स्टार्ट करते हुए अमित ने यही सोचा था कि वह वहा पहुचकर जानीन को उस नादानी से रोक ले। जानीन अपने बाप की चेतावनी की अवहेलना कर रही थी और अमित उसे नादानी समझने को बाध्य था।

अपनी गाड़ी से उतरते ही उसने जानीन से कहा था, 'चलो, यहां से लौट चलें।'

और जानीन ने उसी स्वर में पूछा था, 'क्यों ?'

'तुम्हारा वाप यहां पहुंच सकता है और…'

'और क्या ?'

'यहां से कुछ ही दूरी पर एक वहुत ही सुंदर जगह है। वहां हम शान्ति से एकाध घंटे वैठकर वातें कर सकते हैं।'

'और यहां ?'

अमित के चुप रह जाने पर जानीन खुद वोली थी, 'यहां भी शान्ति से वातें कर सकते हैं अमित !'

'कर तो सकते हैं और शायद नहीं भी कर सकते।'

'तुम इतमीनान रखो, यहां कोई भी हमारी शान्ति भंग के लिए नहीं आएगा।'

'अगर उलटा हुआ तो…?'

'मुसीवत उठानी पड़ेगी।'

'मुझे अपनी नहीं, तुम्हारी चिन्ता है।'

'कुछ नहीं होगा अमित !'

वंगले के आगे जंगली वादाम के पेड़ तले दोनों जा वैठे थे। सागर की हिलती-डोलती तरंगों के टुकड़ों पर सूरज की किरणें कांच की तरह चमक रही थीं।

समुद्र का रंग विविधता लिए हुए था। नीलापन कहीं गहरा था, कहीं हलका। कहीं हरापन था कोमल पत्तों का रंग लिए हुए तो कहीं सफेदी और कहीं पीलापन की छाप लिए। मूंगों और चट्टानों की लंवी-सीधी कतार से टकराती हुई वड़ी-वड़ी लहरें थीं। वहुत दूर तीन नावें थीं, सफेद पालों वाली। आकाश विना वादलों का था। लहरों की आवाजें थीं।

'वंगले का रखवारा ?'

'जगलाल हमारे लिए खाने का प्रवंध करने गया है।'

'जानीन, तुम… । कव तक यहां रहने का इरादा है ?'

'यहां से पूर्णमासी का चांद परात की तरह बड़ा दिखता है।'

'देखने का इरादा रखती हो क्या?'

'हमेशा उसे अकेली देखती आई हूं। आज दोनों साथ देखेंगे।'

'वह तो सात-आठ से पहले नहीं दिखेगा।'

'टिके रहेंगे तब तक।'

'जानीन, तुम स्थिति को और भी नाजुक कर रही हो।'

'तुम मुझे अपने घर ले जाने वाले थे। मां से मिलाने वाले थे।'

'तुमने अवसर ही कहां दिया।'

'तुम जानते हो अमित, समुद्र की गहराई किस बात का प्रतीक है?'

'नहीं तो।'

'प्यार की गहराई का प्रतीक होती है समुद्र की गहराई। जिस तरह समुद्र की गहराई अथाह होती है, उसी तरह प्यार भी अथाह होता है।'

'समुद्र जब अथाह था तब था, अब थोड़े ही है?'

'दो डुबकियां लगाकर विज्ञान ने जो पाया है, वह बहुत बड़ी गहराई हो सकती है, पर वह समुद्र की थाह नहीं हो सकती। उसको नहीं पाया जा सकता।'

'और प्यार की थाह?' अमित ने हंसकर पूछा, 'क्या वह भी नहीं पाई जा सकती? तो फिर इसमें गोता लगाने से क्या फायदा?'

'प्यार में फायदे और नुकसान की बात थोड़े ही हुआ करती है।'

'लगता है, तुम मुझे भी सनकी बनाकर रहोगी। तुम जमीन पर उतरो तो मैं एक बात कहूं।'

जानीन ने अमित की आंखों में झांका और मुस्करा दिया।

'जानती हो जानीन, आदमी चाहे कितने ही बड़े असंभव काम को शुरू करे, वह जैसे-जैसे उसके साथ आगे बढ़ता है, उसे यह उम्मीद बंधती जाती है कि वह असंभव धीरे-धीरे संभव में परिवर्तित हो रहा है। हम इतने आगे बढ़ आए हैं फिर भी हमें ऐसा आभास नहीं होता, क्यों?

'मुझे होता है।'

'तुम्हें आभास होता है कि असंभव संभव में परिवर्तित हो रहा है?'

'हां।'

'यह सांत्वना तुम अपने-आपको दे रही हो या मुझे ?'

'विश्वास सांत्वना नहीं हुआ करता।'

'तुम्हें विश्वास है ?'

'हां।'

और जानीन ने अपने दोनों हाथों का हार बनाकर अमित की गर्दन में डाल दिया।

कुछ ही देर बाद दोनों लहरों के बीच थे। जानीन अमित से अच्छी तैराक थी। उथलते सागर में तैरने का अमित आदी नहीं था। जानीन को बहुत भीतर तक जाते देख वह सहम जाता और चिल्लाकर उसे किनारे पहुंच आने को कह जाता। कोई घंटे बाद ही दोनों पानी से बाहर निकले। जंगली बादाम के पेड़ के नीचे से दोनों तौलिये उठाकर जानीन ने एक अमित को थमा दिया और दूसरे में खुद लिपट गई। अमित उस स्वाभाविकता और सादगी को देखता रहा। वह सौंदर्य की पराकाष्ठा को देख रहा था। देखता रहा। उसके शरीर से पानी की बूंदें टप-टप टपकती रहीं। अपने शरीर पोंछने का खयाल भी जाता रहा। सिगरेट सुलगाने को जी चाहा पर तभी याद आया कि उसके पास सिगरेट नहीं थी। उसे इसका दुख नहीं हुआ। जानीन ने उसे कभी सिगरेट पीने से रोका नहीं था, पर अमित जानता था कि जानीन को सिगरेट की गंध नहीं भाती थी।

जगलाल सामान लेकर आ चुका था। रसोई से मसाले की गंध आने लगी थी। मछली पकाने में जगलाल अपना सानी नहीं रखता था। वह अब भी होटल में काम करता होता अगर दक्षिण अफ्रीका के गोरे सैलानी के पैसे चोरी होने का अभियोग उसपर न लादा गया होता तो। जानीन के यहां की नौकरी उसे इसलिए मिल गई थी क्योंकि उसका बाप जानीन के घर कभी रसोईया रह चुका था। वह बंगले का रखवारा भी था और अवसर आ जाने पर रसोइये का काम भी कर जाता था। उसे अपने काम में व्यस्त छोड़ जानीन और अमित बंगले के भीतर पहुंच गए। बड़े कमरे की गोल मेज के फूलदान में जगलाल ने रेनमार्गेरित के फूल सजा रखे थे। सभी खिड़कियां खुली हुई थीं। स्प्रे की गंध के बावजूद

भी कमरे की सीली गंध गई नहीं थी। गलियारे का वह आखिरी कमरा जानीन का अपना कमरा था। वहां की खिड़की सीधे समुद्र पर खुलती थी। उसमें भी जगताल ने फूलों का गुलदस्ता रख दिया था। जानीन कोच पर बैठ गई। उसके पास ही जगह लेते हुए अमित ने कहा, 'मुझे डर लग रहा है।'

'किस बात का डर?'

'अगर कोई आ गया तो।'

'कौन आएगा?'

'तुम तो ऐसे कहती हो, जैसे, सभीको घर पर बांधकर आई हो।'

'अमित, ऐसा तो सोच सकते हो कि हम किसी दूसरे देश को पहुंच गए हैं, जहां वे नहीं पहुंच सकते जिनका हमें डर है।'

जानीन ने उसके भीगे सिर को थामकर उसे अपनी गोद में रख लिया। अपने कंधे के तौलिये से उसके सिर को पोंछती हुई बोली, 'तुम चुप क्यों हो गए?'

अमित ने उसकी गरदन में हाथ पहुंचाकर उसे अपने एकदम पास झुका लिया।। दोनों की सांसें टकराती रहीं और फिर एक-दूसरे में खो गईं।

तीन मिनट बाद जानीन बोल सकी, 'अमित, मैं तुम्हें प्यार करती हूं।'

अमित ने फिर से उसे नीचे झुका लिया। इस बार तीन मिनट के बाद अमित बोला, 'तुम्हें खो बैठने की कल्पनामात्र से मैं दहल जाता हूं।'

'तुम्हारी कल्पना इतनी बेबुनियाद क्यों होती है?'

'जानीन, अगर यह नौबत आ ही गई तो?'

जानीन ने उसके होंठों पर हाथ रख दिया।

अमित की नजर दीवार की पेंटिंग्स पर चिपकी रही।

इधर कई दिनों बाद पिछली रात अमित को फिर से नींद की गोलियों का सहारा लेना पड़ा था। इस समय भी उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि वह नींद की गोलियों की खुमारी लिए हुए है। दीवार के जानीन के चित्र के रंग

की लहरों में भी वह खुमारी थी। वही कांपती हुई खुमारी। उसको इस तरह खोए हुए पाकर जानीन ने पूछा :

'क्या बात है अमित ?'

'कभी-कभार जब यह खयाल आता है कि तुम मेरे लिए नितांत असंभव हो और तुम्हें पाना बड़ा कठिन है तो लगता है कि मेरी सारी शक्ति चली गई, मेरा आंदोलन मर गया। यूनियन के सभी उद्देश्य बोझ बनकर मेरे ऊपर लुढ़कने लगते हैं और मैं उसके नीचे दबता जाता हूं। पर जब कभी क्षण-भर के लिए मेरे भीतर यह विश्वास पैदा हो जाता है कि तुम मेरी हो, हर हालत में मेरी रहोगी तो लड़ने की ताकत दुगनी हो जाती है। उस समय यूनियन को अपने उद्देश्यों के साथ पराकाष्ठा पर पहुंचा पाता हूं।'

'तुम ऐसा कैसे सोच लेते हो कि मैं तुम्हारे लिए असंभव हूं ?'

'मेरे अपने भीतर की लाघव भावना...'

'अमित, मैं तुम्हारी हूं।'

– 'जानता हूं।'

'तुम्हारी रहूंगी।'

'यह भी जानता हूं।'

'तो फिर ?'

'यह विश्वास रह रहकर लड़खड़ा जाता है।'

'विश्वास संदेह से लड़खड़ाता है अमित ?'

सामने की मेज की सीपियों के साथ अमित खेलने लगा। कुछ मिनट बाद उसने जानीन से पूछा, 'तुम मेरी मां से मिलने कब आ रही हो ?'

'जब चाहो ?'

अमित सीपियों से खेलता रहा।

खाने के बाद दोनों फिर से जंगली बादाम के नीचे आ गए। बालू पर उलटी पड़ी नाव से जगलाल कुछ छुड़ा रहा था। अमित ने उससे कहा, 'तुम खाना बहुत अच्छा पकाते हो जगलाल !'

उसने यह बात भोजपुरी में कही थी, इसलिए जानीन ने मुस्कराकर

पूछा, 'क्या कहा तुमने ?'

'कह रहा हूं कि यह खाना बहुत अच्छा पकाता है।'

बादाम की छाया में दोनों बैठ गए। समुद्र का गर्जन तेज हो चला था। दो बच्चों को बालू पर सीपियां बटोरते पाकर जानीन ने अमित से पूछा, 'तुम भाग्य के खेल पर विश्वास करते हो ?'

अमित ने प्रश्न का मतलब नहीं समझा। उसे अपनी ओर देखते पाकर जानीन फिर से बोली, 'भाग्य का खेल···'

'क्या होता है यह ?'

'नहीं जानते ?'

अमित ने सिर हिला दिया।

'यह खेल मैंने मां से सीखा था। जब हम क्रिसमस के लिए किसी नये खिलौने की कामना करते तो मां हमें बालू पर भेजकर चितकबरी कौड़ी ढूंढ लाने को कहती। जिसको कौड़ी मिल जाती, उसके माथे को चूमकर मां कहती कि क्रिसमस में उसे मनचाहा खिलौना मिलकर रहेगा। चलो, हम भी खेलकर देखें।'

अमित हंस पड़ा, 'हम क्या देखें ?'

'देखें कि हमारा प्यार सफल रहेगा या नहीं ?'

'इसका मतलब है कि तुम्हारा विश्वास भी लड़खड़ा गया है ?'

'नहीं अमित, बात यह नहीं।'

'खैर, चलो, खेलकर देख लें।'

दोनों उठ खड़े हुए। जानीन बोली, 'अगर कौड़ी मुझे मिली तो मेरा प्यार सफल रहेगा अगर तुम्हें मिली तो···'

'तो ?'

'तुम्हारा प्यार सफल रहेगा।'

दोनों जोर से हंस पड़े।

चमकती धूप पर आंखें टिकाए रखना दोनों के लिए कठिन था, फिर भी दोनों दो कदमों के फासले पर कौड़ियों की तलाश में लगे रहे। अमित को इस बचपने पर आनंद आ रहा था। उसकी नजर कौड़ियों की तलाश में उतनी नहीं थी, जितनी जानीन की उस विश्वास-भरी

मुद्रा पर। जानीन एक बच्चे के सभी भोलेपन को अपने में समेटकर उस खजाने की खोज में थी। अमित को अपनी पलकें झपकते पाकर उसने अपनी आंखों से काला चश्मा उतारकर अमित को थमा दिया। दोनों खड़े हो गए।

'तुम बड़ी होशियार हो।'

'क्यों?'

'तुमने यह काला चश्मा मुझे इसलिए थमा दिया ताकि कौड़ी मेरी नजर में न आ सके।'

जानीन हंस पड़ी।

धूप में अमित का शरीर पसीने से तर हो गया था और जानीन का अपना पूरा शरीर लाल हो गया था। कोई घंटे बाद अमित ने कहा, 'यह कौड़ी मिलने से रही।'

'तुममें स्तामिना का अभाव है अमित!'

'तुम्हें विश्वास है, वह कौड़ी मिलेगी?'

'मुझे अपने प्यार की सफलता का विश्वास है।'

'ठीक है तो फिर जब तक बेहोशी नहीं आ जाती, तलाश जारी रहे।'

समुद्र किनारे की तपती दोपहरी पराकाष्ठा पर थी। दोनों बंगले से डेढ़ मील दूर आ गए थे। कई सीपियों और कौड़ियां उठा-उठाकर दोनों फेंक चुके थे। वह चितकबरी कौड़ी अभी तक हाथ नहीं आई थी। अमित थक चुका था, हार चुका था। जानीन अभी नहीं थकी थी, न ही हारी थी। एक जगह पर पुराने झावे के दरख्त की छाया पाकर अमित उस टुकड़े पर जा बैठा। जानीन उसके पास पहुंची और उसका हाथ थामकर उसे उठा लिया। दोनों फिर चल पड़े। अमित की आंखें दुखने लगी थीं। उसे जोरों की प्यास लग आई थी।

'जानीन, चलो! लौट चलें।'

'नहीं अमित!'

और दोनों चलते रहे।

## २२

'अमित, मैं तो बस एक ही चीज चाहती हूं। मिट्टी के चिराग की तरह मैं सूरज के तेज प्रकाश में खो जाना चाहती हूं। वह सूरज तुम हो, बस तुम। जब भी तुम हैसियत की बात करते हुए, मुझे सामंती बताने का प्रयत्न करते हो, मैं पीड़ा से अकुला जाती हूं। तुम मुझे सिर्फ उसी रूप में देखा करो, जिसमें मैं तुम्हारे सामने हुआ करती हूं। प्यार के अथाह सागर में एक बूंद की तरह विलीन होकर ही मैं अपने को सुखी पा सकती हूं।'

अमित को ऐसा एहसास हुआ था कि हृदय प्रायः वही मांगता है जिसे देने में जीवन अपने को असमर्थ पाता हो। उसने जानीन से पूछा था, 'तुम्हीं बताओ, हृदय का तकाजा आदमी को भावुक बना जाता है या भावुकता हृदय से तकाजा कराती है?'

जानीन ने कोई उत्तर नहीं दिया था। प्रश्न को अच्छी तरह सुनकर भी वह समझ नहीं पाई थी।

-

अमित की ओर फोन बढ़ाती हुई राधिका बोली :

'घर का फोन है।'

'मां!'

'हां।' चोंगे को हाथ में लेकर मुंह तक पहुंचाते हुए बोला, 'क्या बात है मां?'

उसकी मां ने जवाब देने में विलंब किया। और जब बोलीं तो प्राण-हीन सी, 'किशोर के घर से खबर आई है।'

'कैसी खबर?'

वही विलंब, फिर वही स्वर, 'किशोर ने आत्महत्या कर ली।'

'मां···'

'अभी-अभी खवर मिली है। लखन आया था।'

'नहीं···'

उधर से उसकी मां न जाने क्या-क्या वोलती रही। चोंगे को हाथ में थामे अमित वहरा-गूंगा खड़ा रहा।

सन्नाटा।

यह सन्नाटा आश्चर्य का नहीं था। अमित को आश्चर्य नहीं हुआ था। इस क्षण का पूर्वाभास उसे पहले ही हो चुका था, पर यह आघात अप्रत्याशित था। अमित की सांसें क्लोरोफोर्म से तर थीं। उस वेसुधी से उसे वह स्वर सुनाई पड़ा:

'जीवन मेरे लिए रंग है। जव तक ये रंग हैं, तव तक जीवन है।'

अमित किशोर के घर पहुंचता तव तक किशोर की लाश अस्पताल से लौट आई थी। नींद की वे ही गोलियां जो अमित को नींद देने में असमर्थ रह जाती थीं, किशोर को चिरनिद्रा दे गई थीं।

उस लाश के सामने वह खड़ा रहा और आंसुओं के साथ ही उसके मुंह से निकला, 'किशोर! तुम तो वहुत साहसी थे।'

किशोर अमित को जो चिट्ठी लिख गया था, उसमें उसने अपने सभी चित्र यह कहते हुए अमित के हवाले कर दिये थे कि उसके अपने अणु टुकड़े थे। मैं चाहता हूं कि ये सारे चित्र तुमसे जुड़ जाएं अमित!

दो दिन अमित अपने घर से वाहर नहीं हुआ था। उसके अपने कमरे में वहुत सारे जमे हुए क्षण थे। हर क्षण उससे छूकर उसे मौत की सी ठंड दे जाता। किशोर के साथ के वे क्षण उसकी सांसों से चिपककर उन्हें भारी कर गए थे। वड़ी कठिनाई से वह सांसों को वाहर-भीतर कर रहा था। उसकी मां कह गई थी कि वह किशोर के घर जाकर कुछ समय उसके मां-वाप के वीच विता आए। उससे नहीं हो सका था। मां को ही भेजकर उसने अपने को कमरे में वन्द कर लिया था। राधिका चाय के साथ भीतर आई थी और अमित ने उससे पूछा था, 'किशोर ने ऐसा क्यों किया?'

और जव राधिका ने उसके गालों पर वह आए आंसू की दोनों धाराओं

को पोंछने के लिए उसके हाथों में तौलिया रखना चाहा था तो अमित ने उसके दोनों हाथों को थामकर अपने सिर से दे मारा था। राधिका ने अपने आंसुओं को दोनों कंधों पर टपक जाने दिया था।

'उसने ऐसा क्यों किया राधिका ? उसकी कला को मान्यता नहीं मिली, इसलिए ? मैं किशोर को तो अपने से अधिक पहचानता हूं। इस तरह की कोई बात उसकी मृत्यु का कारण नहीं बन सकती।'

बात करते समय अमित की जबान कांप रही थी। वह दुख और पश्चाताप के कंपन के साथ-साथ भय का भी कंपन था। उसे अपने-आपसे डर लगने लगा था। श्मशान से लौटने के बाद से अमित की वह दशा थी जो किसी भयंकर सपने के देखने के बाद आदमी की होती है। उसके चेहरे का पसीना गरमी की तरलता नहीं था, वह भय की उपज था। भयंकर सपना देखने के बाद जब आदमी की नींद टूटती है तो क्षण-भर की घबराहट के बाद उसे इस बात का संतोष हो जाता है कि वह तो सपना था। पर अमित की स्थिति को वह संतोष असम्भव था। वह सपना नहीं था। सभी कुछ वास्तविक था, उसका भय बना रहा। वह भय बढ़ता जा रहा था।

अकेले में वह सभी शक्ति के साथ किशोर को पुकारने को सोचता। फिर खयाल आता, वह तो बहुत दूर जा चुका है। वह जहां गया है, वहां आवाजें नहीं हुआ करतीं। फिर तो आवाज पहुंचकर भी अनसुनी रह जाती। पर क्या सचमुच किशोर इतनी दूर चला गया था ? अगर ऐसा था तो फिर वह उसकी सांसों में बिंधा हुआ क्यों था ? उसे इतने करीब तो पहले कभी नहीं पाया। अमित को सभी कुछ रहस्य-सा लग रहा था।

अमित ने राधिका से कहा था, 'तुम जानती हो राधिका, मैं इस समय एक बहुत बड़ी लड़ाई में जूझ रहा हूं, पर अब तो लगता है कि लड़ाई हार जाऊंगा। जीत का कोई आधार ही नहीं दिखता।'

राधिका उसे तो समझ रही थी पर उसकी बातों को नहीं।

उसमें काम करने का हौसला बाकी था न लोगों से मिलने का। जानीन का फोन आया था। उससे भी उसने बातें नहीं कीं। बड़े साहस के साथ उसने चाहा कि किशोर के घर एक बार तो हो आए। शाम के धुंधलके

में वह घर से निकला, अपने-आपमें सिमटा हुआ आगे बढ़ा। रास्ता के मिलने वाले किसी भी व्यक्ति से आंखें मिलाने की उसकी हिम्मत नहीं थी। उसे ऐसा लग रहा था कि लोग उसे भीतर ही भीतर घूर रहे थे। कोस रहे थे। पर क्यों ? गली के लोगों से कतराकर वह क्यों निकल जाना चाहता था ? कौन-सा गुनहगार छिपा हुआ था उसके भीतर ? अपने से प्रश्न पर प्रश्न करता हुआ अमित अधिक आगे नहीं जा सका था। वह उलटे पांव घर लौट आया था। अमित जानता था कि किशोर की मौत का कारण उसकी बेकारी भी नहीं थी। उसकी दयनीयता नहीं थी। उसका अभाव नहीं था। वह एक रहस्य था। किशोर उस रहस्य को सुलझाने में लग गया था। वह था कि उलझाता ही चला जा रहा था। किशोर भयहीन कलाकार था। वह इतनी सस्ती मौत नहीं मर सकता, पर अगर वह मौत सचमुच ही सस्ती होती तो फिर इतने सारे कलाकारों ने उसे क्यों अंगीकार किया ?

'राधिका ! किशोर अपने साथ एक अनकही बात लिए मर गया।'

किशोर की मृत्यु का आज सातवां दिन था। किशोर का उदास घर।

उसकी मां से बातें कर चुकने के बाद अमित उसके उन सभी चित्रों के बीच जा खड़ा हुआ। अस्त-व्यस्त रखे हुए सौ के लगभग थे वे चित्र। चुभन को आंखें मूंद कर अमित ने सह लिया फिर आंखें खोलीं। चित्रों के रंगों ने हिलने-डोलने की कोशिश की, चिल्लाने का प्रयत्न किया। वे सभी किशोर की कृतियां थीं। कृतियां उसके जीवनकाल में मौन रहीं पर अब चिल्ला रही थी। चिल्ला-चिल्लाकर किशोर के अस्तित्व का बोध करा रही थीं। एक-एक चित्र की रेखाएं कृतज्ञता लिए हुई थीं। अपने श्रेष्ठों के प्रति कृतज्ञता। एक बीत चुकी अवधि के साक्षी के रूप में वे तस्वीरें अपनी गवाही देना चाह रही थीं। उन चित्रों में किशोर था। उन चित्रों में सच्चाई थी। वह सच्चाई, जिसे कलाकार के जीवनकाल में बड़ी कठिनाई से सच्चाई माना जाता है।

अमित एक पुराने चित्र के सामने ठिठक गया। एक मरे हुए प्यार का चित्र था वह। पहली बार अमित ने मृत्यु में भी स्पन्दन पाया। एक बार किशोर ने उससे कहा था कि मृत्यु जैसे विजेता को प्राणहीन क्यों

माना जाता है। वही तो एक वस्तु है जो जीवन में भी जीवन्त होती है। किशोर की उस बात की गवाही दे रही थी सामने की वह तस्वीर :

'अमित, मैं चाहता हूं कि मेरी कला आदमी की द्विविधा में झांक उसके पास समय-असमय चिपकी रहती है, मुक्त कर सके। यह अविश्राम और द्विविधा के बीच एक विश्राम पैदा कर सके। विश्वास तो साधारण शब्द हुआ, मैं तो चाहता हूं कि आदमी को आस्था दे सके। मेरी कला के सत्य को तुम एक सीमित सत्य कह जाओ, पर मैं इतना कह दूं कि एक न एक दिन इस सत्य को तुम एक स्थायी और विस्तृत सत्य मानने को विवश हो जाओगे। कला केवल कलाकार की आकृति नहीं हुआ करती, वह निरखने वाले की भी आकृति होती है।'

अमित एक दूसरी पेंटिंग के आगे जा खड़ा हुआ। इसे रंगते हुए किशोर ने कभी कहा था, 'इसका शीर्षक 'सपना' रखूंगा।'

अमित को शीर्षक पसन्द नहीं आया था और उसने झट कहा था, 'मुझे 'सपना' पसन्द नहीं।'

'तुम शायद उस सपने की बात कर रहे हो जो आदमी अपने निज मात्र अपने लिए देखता है। यह चित्र तो उस सपने को उजागर करता है जो कलाकार सभीके लिए देखता है।'

उस चित्र की सिसकियां सुनाई पड़ी अमित को। नहीं, वे सिसकियां नहीं थीं, अट्टहास था। सभी चित्रों ने एकसाथ ठहाका लगाया। कोने में कोरे कैनवस थे। उन कोरे श्वेत कैनवसों ने सिसकियां भरीं। सिसकियां और अट्टहास का कोलाहल अमित के कानों में बजता रहा

'अमित…अमित…अमित…'

सिसकियां आती रहीं।

'किशोर…किशोर…किशो…'

अमित कुछ नहीं वोला। लम्वी चुप्पी के वाद किशोर की मां ने आगे कहा, 'तुम इन चीजों को उठा ही ले जाओगे तो अच्छा रहेगा। काटने को दौड़ती हैं।'

किशोर के घर की सभी उदासी को अपने में लिए अमित घर लौट आया। अपने वन्द कमरे में वैठा रहा। घण्टे वाद राधिका ऊपर आई।

'मौसी कह रही हैं, तुम नीचे उसके साथ खाना खाओ।'

'मां से कह दो, मुझे भूख नहीं।'

'दिन में भी तुमने कुछ नहीं खाया।'

'मैं वाहर से खाकर आया हूं।'

जानीन की चिट्ठी को अमित के हाथ में रखती हुई राधिका वोली, 'दो वार उसका फोन आया था।'

अमित ने चिट्ठी खोली। गुलावी कागज पर जानीन के छोटे-छोटे अक्षरों की कोई दस-वारह पंक्तियां थीं :

'मों आमूर,

ये सात दिन मुझे सात वर्ष से भी लम्वे प्रतीत हुए। यहां की पावन्दी और निगरानी के वावजूद भी तुमसे मिल सकती थी, पर इसलिए ऐसा नहीं किया क्योंकि मैं जानती थी कि तुम अपने आयोजनों में व्यस्त हो। तुम्हारी उद्विग्नता और व्यग्रता के पक्ष में न होते हुए भी मैं यह नहीं चाहती कि उसमें किसी तरह का हस्तक्षेप हो। तुम्हारी सफलता की कामना करती हूं। तुम फोन पर भी नहीं मिल रहे हो। मैं अधीर हो चली हूं। पत्र मिलते ही मुझे फोन करना, मैं हर वक्त उसकी प्रतीक्षा में रहूंगी—वात तुम्हें वता दूं। वस, और तीन दिन हैं। शनिवार को मैं उस उम्र की हो जाऊंगी जिससे मुझे अपने निर्णय का पूरा अधिकार मिल जाएगा। तीन दिन अमित, और···फिर तो तुम्हारे साथ चाहे वह जीवन हो या मौत, दोनों सहर्ष स्वीकार लूंगी। कुछ वातें हैं अमित, जिससे मैं तुम्हें हड़ताल के लिए नहीं रोक सकती, पर अपने लिए तुमसे मांग करती हूं। अपना खयाल रखना।

तुम्हारी आवाज सुनने की वेसव्री लिए हूं। फोन जरूर करना।

—तुम्हारी जानीन'

पत्र पढ़कर अमित ने राधिका की ओर देखा, 'पापा कहां हैं ?'

'अपने कमरे में।'

'तुम मां से कह दो, वह खाना खा लें। मैं बाहर से खाकर आया हूं।'

राधिका के चले जाने के कुछ मिनट बाद तक वह चुपचाप बैठा सोचता रहा। फिर उठा और सीढ़ियां उतरकर सीधे फोन के पास पहुंच गया। जानीन का नम्बर मिलाया। उधर फोन की घंटी बजती रही। बजती रही। कई मिनट बीत गए। कोई नहीं उठा रहा था। यह सोचकर कि कहीं उसने गलत नम्बर नहीं मिला लिया था, उसने लाइन काटकर फिर डायल किया। उधर फिर घंटी बजनी शुरू हुई। वह सुनता रहा। वह बजती रही। फिर कई मिनट बीत गए। उसने फोन रख दिया। तीसरी बार नम्बर मिलाया। कोई उत्तर नहीं मिला।

चोंगे को उसकी जगह पर रखकर वह ऊपर पहुंचा। अपने कमरे का दरवाजा बंद करके वह चारपाई पर बैठ गया। कमरे में अकुलाहट थी। सभी कुछ अस्थिर था। अमित लेट गया। कई घंटे के बाद वह अपनी जगह से उठा। मेज की दराज खोलकर उसमें कुछ ढूंढता रहा। कठिनाई से उसे वेलियम की दो गोलियां मिलीं। गिलास से पानी लेकर उसने दोनों गोलियों को गले के नीचे उतार लिया। बत्ती बुझाकर पलंग पर जा लेटा।

और घंटों तक उसी तरह लेटा रहा।

सिंडिकेट की मीटिंग हुई। हड़ताल का प्रस्ताव पास हो गया। सात दिन की बात करके यूनियन ने तीन महीने की प्रतीक्षा की थी। उत्तर हर बार यही रहा कि विचार किया जा रहा है। शक्कर उद्योग संघ को मीटिंग का विवरण और हड़ताल की सूचना देकर अमित अपने सभी साथियों के साथ आयोजन में जुट गया। सात दिन का समय उस बृहत आयोजन के लिए बहुत कम था पर अमित को अपने से अधिक मजदूरों पर विश्वास था। उसे विश्वास था कि हड़ताल की सफलता पचास प्रतिशत से ऊपर रहेगी। छत्तीस गांव इस अभियान में शामिल थे पर पिछली खबरों के अनुसार छः गांव हड़ताल में भाग लेने को तैयार नहीं थे। उस

दिन पहाड़ी इलाके की उस कोठी का वह दुबला-पतला मजदूर सामने आ खड़ा हुआ था। चेहरे से वह साठ से ऊपर का लग रहा था पर अमित जानता था कि वह साठ का नहीं था। ईख के खेत के कठिन काम ने उसे कुछ वर्ष ज्यादा ही दे दिए थे। उसने अमित से कहा था :

'जब काम ना होवे ला त सब कोई छछनल फिरेला और जब काम रहेला त देह चुरावल जाला।'

अमित ने भोजपुरी ही में कहा था, 'नहीं चाचा, यह देह चुराने की बात नहीं।'

'ए बाबू' हड़ताल हम लोगन से ना होई। कुछ होवे हम लोग त काम करब स।'

'अपने हक को इस तरह जाने दोगे ?'

'दू पैसा से का होवेला ?'

'नहीं चाचा यह दो पैसे का सवाल नहीं है।'

कोठी में डेढ़ सौ मजदूर थे पर उनमें सिर्फ तीस ही यूनियन के सदस्य थे। मुखिया बार-बार यही बोलता रह गया था कि हड़ताल अच्छी चीज नहीं हुआ करती। कहीं एक पैसे के लोभ में नौकरी से ही हाथ धोना न पड़ जाए।

उससे बहस न करते हुए भी अमित ने उसी स्वर में कहा था :

'यह ठीक है चाचा, कि हड़ताल अच्छी चीज नहीं हुआ करती, उससे मजदूर-मालिक दोनों को हानि होती है, पर मजदूर के पास कोई दूसरा हथियार भी तो नहीं। घी जब सीधी अंगुली नहीं निकलता तो टेढ़ी अंगुली से निकाला जाता है। और फिर एक बात है चाचा, कल अगर हड़ताल के बाद काम की शर्तें सुधर जाएं, उनके साथ एक-दो पैसे अधिक मिलने लगें तो क्या हड़ताल में भाग न लेने वाला आदमी उसे ठुकरा जाएगा ? क्या वह उस लाभ का हिस्सेदार नहीं बनेगा ?'

अमित ने उत्तर की प्रतीक्षा की थी। उस आदमी ने कोई उत्तर नहीं दिया था। उसकी चुप्पी अमित को यह विश्वास दिला गई थी कि इस कोठी में भी हड़ताल होगी।

रविवार की शाम को सभी गांवों के प्रतिनिधियों का एक जुटाव हुआ

था । आधे से अधिक प्रतिनिधि कोठी के मालिकों की [illegible] थे । उन्हें यह कहकर धमकाया गया था कि हड़ताल [illegible] इसलिए हड़ताल में भाग लेने वालों को नौकरी से हटा दिया [illegible] । इस समस्या के लिए अमित पहले ही से तैयार था । [illegible] यूनियन के वकील ने लोगों को आश्वासन दिया और बताया कि यह हड़ताल किसी भी हालत में गैरकानूनी नहीं हो सकती, इसके बाद अमित के दो साथियों ने हड़ताल के अनुशासन पर बातें की थीं । तीन अन्य यूनियन के अध्यक्ष भी उपस्थित थे । उन्होंने भी हड़ताल को जायज बताया था और यह आश्वासन दिया था कि तीन दिन की हड़ताल के बाद अगर कोई परिणाम सामने नहीं आया तो उनके यूनियन भी हमदर्दी के रूप में हड़ताल में भाग लेंगे । इसपर सभी उपस्थित प्रतिनिधियों ने खुशी जाहिर की थी ।

हड़ताल के तीन दिन बाकी रह गए थे ।

राबिया को जल्दी-जल्दी कुछ पत्र डिक्टेट कराके [illegible] निकलने ही वाला था कि फोन की घंटी बज उठी थी ।

सुरेन ने फ़ोन उठाया और जानना चाहा कि [illegible] जो अमित से बातें करना चाह रहा था ? [illegible] नाम नहीं बताना चाह रहा था । चोंगे पर हाथ [illegible] की ओर देखा । कुछ बोलता कि इससे पहले [illegible] हाथ से फोन ले लिया ।

'हेलो, मैं अमित बोल रहा हूं ।'

उधर से बनावटी आवाज आई, '[illegible] रही है ।'

'चेतावनी किस बात के लिए ?'

'हर बार यही सवाल [illegible] ?'

'तुम कौन होते हो…'

'आखिरी बार सुन लो [illegible] दिए जाओगे ।'

'यह हड़ताल होगी ।'

और इतना कहकर अमित ने झटके के साथ फोन रख दिया।

राबिया और सुरेन उसे देखते रहे।

यह कोई पांचवां फोन था। हर बार भिन्न आवाज होती थी। इस-पर बहुत सोचने के बाद अमित इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि फोन करने वाले व्यक्ति को आपत्ति हड़ताल से नहीं थी। हड़ताल को एक बहाना जरूर बनाया जा रहा था। अब तक उसे मिली वे तीनों चिट्ठियां इस बात की सबूत थीं।

सुरेन ने पूछा, 'फिर वही ?'

अमित ने सिर हिलाकर हामी भरी।

राबिया बोली, 'पुलिस को इत्तिला क्यों नहीं करते ?'

मेज से इग्निशन को उठाकर अमित दफ्तर से बाहर हो गया।

दो मीटिंगों से होकर अमित को उस गांव में पहुंचना था, जहां हड़ताल के दोनों आयोजकों पर वार किया गया था। एक को हलकी चोट आई थी, पर दूसरा अस्पताल में था। पिछली रात बहुत दिनों के बाद अमित का बाप अमित के कमरे में पहुंचकर सोफे पर बैठ गया था। जब तक अमित ने अपने सामने की फाइलों को बन्द नहीं किया, वह उसी तरह चुपचाप बैठा रह गया था। सिगार के कश लेता रह गया था। अमित के फाइल बन्द करते ही उसने कहा था :

'तुम स्ट्राइक करवाने जा रहे हो ?'

'कोई दूसरा चारा नहीं।'

'स्ट्राइक इल्लीगल है।'

'स्ट्राइक इल्लीगल नहीं हो सकती।'

'जानते हो, किन लोगों से दुश्मनी मोल ले रहे हो ?'

'जानता हूं।'

'जानते हो फिर भी बेवकूफी कर रहे हो ?'

'साहस कर रहा हूं।'

'मैं उसे बेवक़ूफी कहता हूं।'

'और मजदूरों के अधिकार को हड़पकर जब्त किए रहने को तुम क्या कहोगे पापा ?'

'तुम्हारे बाप-दादे का [illegible]'

अमित मुस्कराकर [illegible]।

उसका बाप घण्टे तक बैठा [illegible]।

'हड़ताल से देश की हानि होती है। [illegible] हड़ताल देश के लिए लाखों रुपये की होती है।'

'हड़ताल से देश की हानि होती है और [illegible] क्या इसमें देश को कोई हानि नहीं होती [illegible] देश आदमियों का नहीं, पत्थरों का होता।'

'तुम मुझे भी कहीं का नहीं छोड़ोगे।

उसकी मां ऊपर आ गई थी। [illegible] अमित से यही कहा था कि इस तरह के [illegible]।

कार चलाते हुए अमित [illegible] अवसर था, उसकी मां ने अपने पति के [illegible] था। पहला अवसर था, वह अपने पति [illegible] रह गई थी।

सुबह दफ्तर आने से पहले [illegible] आकर धीरे से बोला था :

'खतरे में भी आनन्द [illegible]'

वह घर से बाहर हो गया था [illegible] ई थी। वह मुरेश था, जिसने [illegible]:

'मौसी मुझे डाक्टी रह गई थी। [illegible] हवा कर लौटे थे, इस बार क्या होगा?'

पिछली रात की मूसलाधार [illegible] लाए हुए था। सवालों में खोए हुए [illegible] जाता जब स्टीयरिंग-व्हील उसके हाथों में [illegible] ल्दी में एक्सीलरेटर से पांव ऊपर कर लेता।

सम्बद्ध गांव तीन मील के फासले पर था।

तीन दिन बाकी थे हड़ताल के।

२३

'हेलो अमित, मैं सत्येन बोल रहा हूं। देखो मैं कल चीन जा रहा हूं मिशन पर। पर जाने से पहले तुम्हें आगाह किए जा रहा हूं कि कल कैबिनेट मीटिंग में तुम्हारी काफी चर्चा हुई है। तुम जो कुछ कर रहे हो, उससे कोई भी खुश नहीं था।'

'कोई भी खुश नहीं था से क्या मतलब ? पूरा मॉरिशस ?'

'यह क्यों भूल रहे हो कि वह बैठक अखिल मॉरिशस के प्रतिनिधियों की बैठक थी ? मैं तुमसे मिलने तुम्हारे घर पहुंचने वाला था, पर समय नहीं मिला। मैं कल सुबह की फ्लाइट से जा रहा हूं। तुम अच्छी तरह समझ लो कि तुम्हारी हड़ताल गैरकानूनी है। मीटिंग में पुलिस कमिश्नर की भी उपस्थिति थी। अगर तुम हड़ताल का खयाल नहीं छोड़ते हो तो गिरफ्तार कर लिए जाओगे।'

'लगता है कि तुम व्यवस्था की ओर से बोल रहे हो।'

'नहीं। मैं दोस्त की हैसियत से बोल रहा हूं।'

'फिर तो यह धमकी नहीं हुई।'

'मैं तुम्हें आगाह कर रहा हूं।'

'यानी कि सावधान कर रहे हो ?'

'क्यों, कहने के ढंग से तुम्हें इन दो शब्दों में कोई फर्क नजर नहीं आता क्या ?'

'कहने के ढंग से तो नहीं आ रहा।'

'देखो अमित, मैं तुमसे बहुत ही गम्भीर बात कर रहा हूं।'

'मेरे गिरफ्तार कर लिए जाने की ?'

'क्यों, तुम इसे मजाक समझते हो क्या ?'

'मजाक तो नहीं समझता, पर...'

'चुप क्यों हो गए ?'

'तुम्हारी बातों से सौदे की बू आती है।'

'क्या कहना चाहते हो ?'

'वही जो तुम कहना चाहते हो।'

'मैं तुम्हें अनर्थ से रोक रहा हूं।'

'तुम मुझे हड़ताल से रोकना चाह रहे हो इसके बदले में तुम्हारी सरकार मुझे मुक्त रहने का अवसर दे रही है। दाम अच्छा है।'

'ओ के इट्स अप टू यू ?'

आवाज अमित के कान में चुभ गई। क्षण-भर को चोंगे को कान के पास उसी तरह रखे रहने के बाद उसने उसे उसकी जगह पर रख दिया। मुड़कर अपने कमरे को जाने को हुआ कि उसकी नजर अपने बाप पर पड़ गई।

'तुम सत्येन से बातें कर रहे थे ?'

अमित ने सिर हिलाकर हामी भर दी।

'तुम जा कहां रहे हो ?'

'दफ्तर।'

'साढ़े छः बजे ?'

'जरूरी काम है, इसीलिए सवेरे जा रहा हूं।'

'क्या है वह जरूरी काम ?'

अमित ने कोई जवाब नहीं दिया।

'मैं पूछ रहा हूं, क्या है वह जरूरी काम ? अमित, तुम काफी बचपना कर चुके। अब इस बेवकूफी से बाज आओ। कल मुझे सत्येन मिला था। तुम्हारी गिरफ्तारी की पूरी तैयारी हो चुकी है। इस बार मामला संगीन है, अमित ! तुमने अपने हठ से अपनी मा को गूंगी बना दिया है। रात-भर वह रोती रही है।'

अमित सिर झुकाए आगे बढ़ गया।

'अमित मैं तुमसे बातें कर रहा हूं।'

'मुझे देर हो रही है।'

'अमित…' उसने पीछे से अपनी मां का स्वर सुना। ठिठक गया।

'तुम अपने बाप की बातें तो सुनते जाओ।'

'मां, मुझे पन्द्रह मिनट पहले दफ्तर पहुंच जाना चाहिए था। पहले ही से देर हो चुकी है।'

'जाने दो इसे।' यह आवाज अमित के बाप की थी।

## २४

कल सुबह के लिए हड़ताल तय थी।

प्रतिनिधियों का एक आखिरी जुटाव दफ्तर ही में हुआ। पैंतालीस प्रतिनिधि उपस्थित थे। हर तीसरे आदमी के लिए एक पुलिस सिपाही था। गली की बस्तियों के जल जाने तक बातें होती रहीं। केवल तीन मिनट बोलने के बाद अमित ने चाहा कि हर प्रतिनिधि अपनी-अपनी बात कहे। धोती पहने, सिर पर रूमाल बांधे उस अधेड़ व्यक्ति को सबसे पहले बोलने का अवसर दिया गया। उसने पहले अपने इलाके का विवरण दिया, फिर बोला :

'हमारे यहां कोई चिन्ता नहीं। सभी लोग संकल्प के साथ तैयार हैं। जहां सभी इस तरह संकल्प के साथ तैयार हैं, वहां कोई भटियारा किसीको बहकाने की हिम्मत ही नहीं कर सकता। उन स्थानों पर लोगों के डराने-धमकाने की कोशिश की जा रही है जहां लोग अब भी द्विविधा में हैं।'

इसपर दूसरे प्रतिनिधि ने कहा :

'यह सही है। हमें उन इलाकों में अधिक ध्यान देना होगा जहां लोग भिझक रहे हैं।' धोती वाले आदमी ने आगे कहा, 'आज रात-भर पूंजी-पतियों के चमचे लोगों को भड़काने में लगे रहेंगे। मुझे इस बात का डर है कि कहीं लोग प्रभावित होकर और डरकर खेतों में न पहुंच जाएं।'

इस आशंका को सभी ने महसूस किया। अमित की बगल में बैठे प्रतिनिधि ने कहा, 'अगर ऐसा हो गया तो देखा-देखी सभी लोग डरते-झिझकते काम पर पहुंच ही जाएंगे···ऐसा हुआ तो हड़ताल असफल हो

जाएगी।'

तभी ऊंचे स्वर में अमिन ने कहा :

'नहीं, हड़ताल असफल नहीं हो सकती। हमें भी यहां से छूटकर रात भर काम करना होगा। ईख के खेतों के मजदूर भोले-भाले होते हैं। उन्हें फुसलाया जा सकता है, ठगा जा सकता है, डराया जा सकता है पर हमें ऐसा नहीं होने देना है। हमें एक बार फिर इन द्विविधा में पड़े लोगों को समझाना है। उन्हें विश्वास दिलाना है कि यह लड़ाई केवल उनके लिए नहीं लड़ी जा रही। अगर यह हड़ताल सफल नहीं हुई तो कल उनकी औलादों का हक मारा जाएगा। यह लड़ाई मजदूरों के बच्चों की लड़ाई है। यह अपनी उस शक्ति को बताने की लड़ाई है जिससे हम अपनी सन्तानों के अधिकारों की रक्षा कर सकें। इस देश के डेढ़ सौ साल के इतिहास में यह रक्षा बहुत कम हुई है। हक दिया नहीं जाता, छीना जाता है। अधिकार लिया जाता है। इस देश में अन्य विभागों में लोगों ने डटकर अपना हक अपनाया है। खेतों के मजदूर आज भी वहीं हैं, जहां से कल वे चले थे। गन्ना इस देश का धन है और इसी गन्ने को पैदा करने वाला आज भी हक का मुहताज है। उन्हें आज भी तीसरे दर्जे का नागरिक माना जाता है। उनके साथ इस तरह पेश आया जाता है जैसेकि वे आदमी न होकर कुछ और हों'''यहां मशीन की देख-भाल होती है। बैलों के साथ अच्छा व्यवहार किया जाता है, पर मजदूर की कोई परवाह नहीं करता। यह हड़ताल सिर्फ दो पैसे के लिए नहीं है बल्कि यह एक इन्सानियत के तकाजे की लड़ाई है। सभी कुछ आप ही लोगों पर निर्भर है। यह हड़ताल मजदूरों की प्रतिष्ठा की है।'

उसके चुप होने के कुछ देर बाद तक खामोशी छाई रही।

धोती वाले प्रतिनिधि ने उस खामोशी को तोड़ा :

'एक उपाय है।'

सभी लोगों ने उस अधेड़ व्यक्ति को देखा जिसके चेहरे पर समय से पहले झुर्रियां आ गई थीं।

'हम सभी लोग हमेशा की तरह सुबह छः बजे खेतों में पहुंच जाएं।'

'तब तो हो गई हड़ताल ?' किसीने कहा।

'हां, हड़ताल को सफल बनाने का एक ही उपाय है।' अधेड़ व्यक्ति ने पूरे आत्मविश्वास के साथ कहा :

'खेतों में पहुंचना।'

'हां, हम सभी अपने-अपने गांवों में हमेशा की तरह एकसाथ एक निर्धारित समय पर अपने-अपने गड़ांसे के साथ खेत पहुंचे। रोज हर आदमी तीन टन ईख काटता है। कल हर आदमी तीन ईख काटे सिर्फ तीन और एक जगह पर जुटकर बैठ जाएं।'

अमित उछल पड़ा। उसकी आंखों में रोशनी तैर गई। उन्मादित स्वर में उसने कहा, 'आप सही कह रहे हैं। ऐसा ही करना होगा।'

हड़ताल के सभी पहलुओं पर विचार चुकने के बाद अमित ने अपने उन चार साथियों से बातें कीं जिनके जिम्मे दूर के प्रतिनिधियों को उनके घर पहुंचाने का काम था। इसके बाद उसने अपनी कार में भी उत्तर प्रांत के पांच व्यक्तियों को लिया। गाड़ी में उसने लोगों से फिर से कहा, 'हर कोशिश की जाएगी। हमें उत्तेजित करने के लिए। उत्तेजित होकर हमने अगर कुछ इधर-उधर का किया तो इसका असर सीधे हड़ताल पर पड़ेगा, इसलिए कुछ भी हो जाए, हमें अपने को संयमित रखना है।'

अमित को जानीन की सलाह याद आ गई थी, 'जे ते देमांद दे गार्दे तों काल्म।'

उसीके शब्दों में उसने भी सभीको कहा कि वे अपने धैर्य को बनाए रखें।

जानीन ने अमित से यह बात दो बार कही थी। एक बार जब वह अमित के न चाहने पर भी उसे अपने साथ लिए जीमखाना क्लब चली गई थी। वहां जब एक अंग्रेज अमित से टकराकर बिन माफी मांगे आगे को निकल गया था और अमित ने उसे रोककर उसे क्षमा याचना के लिए विवश कर दिया था। उस दिन पहली बार जानीन ने अमित की आंखों में क्रोध को याद करके उसने अजीजी के साथ कहा था, 'तुम आपे से बाहर मत होना अमित!'

शुरू में तो जानीन ने चाहा था कि कहीं अमित यह न समझ बैठे कि उसके लिए खून और रंग का नाता प्यार से अधिक घनिष्ठ तो नहीं

था, उसने चुप्पी साध ली थी और अन्त में बस इतना ही वह कही थी, 'अपना खयाल रखना।'

गाड़ी चलाते हुए अमित के सामने जानीन का वह चेहरा झिलमिला उठा जो आज सुबह उसने देखा था। जानीन सिर पर रेशमी रूमाल बांधे हुई आई थी। अमित को वह अच्छा नहीं लगा था। उसने रूमाल को उसके सिर से खींच लिया था, 'यह क्या ? तुम्हारे बाल···?'

'शुक्र है कि काटे नहीं गए।'

अमित की समझ में बात नहीं आई थी।

'बाल कटवाने का यह कौन-सा तरीका रहा ?'

'खुशी से थोड़े ही कटवाए हैं !'

'तो फिर ?'

'मेरे बाप ने मेरे बालों को मुट्ठी में लेकर जड़ से काट लेने की कोशिश की थी।'

'पर क्यों ?'

'मां और दादी उस समय नहीं आती तो···'

'पर क्यों ?'

'ताकि मैं तुमसे मिलने के लिए घर से निकलना बन्द कर दूं।'

'तुम्हारा बाप ऐसा कर सकता है ?'

जानीन चुप रही। कठिनाई के साथ उसने मुस्कराना चाहा।

'अभी तुम्हें और क्या-क्या सहना पड़ेगा जानीन ?···'

जानीन से छूटकर अमित बन्दरगाह के बगल वाले बाग में अकेला जा बैठा था।

जानीन को लेकर पहली बार उसने अपने-आपसे उतने प्रश्न किए थे : मैं जानीन के जीवन में जहर तो नहीं घोल रहा ? सम्भव है, हम दोनों का सम्बन्ध ? कब ? कैसे ?···इस बीच···? पर कब तक ?··· और परिणाम ? परिणाम के बाद का परिणाम ?···

फोन पर जिस आदमी ने अमित से बातें की थीं, उसने अपने को जानीन का रिश्तेदार बताया था पर अमित जानता था कि वह आवाज जानीन के बाप की थी।

'यह तो अजीब प्यार हुआ कि जिस लड़की को आदमी चाहे, उसे अपनी खुदगर्जी के लिए सभीकी आंखों से गिरा दे। जानीन का तुमसे पहले एक परिवार था। एक अतीत था। एक दुनिया थी। आज वह इन चीजों से दुत्कारी जा चुकी है। यह तो और भी अजीब बात हुई कि तुम आज भी अपने परिवार, अपने अतीत और अपनी दुनिया से जुड़े हुए हो और जानीन···? प्यार का हक एक-पक्षीय कैसे हो सकता है? यह कैसे हो सकता है कि एक उसे संजोए रखे और दूसरा गंवा बैठे? तुम तो पढ़े-लिखे आदमी हो। तुम्हीं इन प्रश्नों का कोई उत्तर ढूंढ निकालना।'

अमित थक चुका था।

वह थक चुका था अपने सामने के मंडराते बेशुमार प्रश्नों के उत्तर तलाशते हुए। उत्तर उसे अवश्य मिल जाते पर उनमें कोई भी ऐसा नहीं होता जो दमदार होता और जो टिक पाता। उसके मस्तिष्क की गरमी से उत्तर पिघलकर बह जाते।

फिर वह गौर करने लग जाता अपनी मां की बातों पर :

'मैं मानती हूं अमित, कि वह हमें इस घर में अजनबी की तरह नहीं प्रतीत होगी। वह पच जाएगी हमारे बीच में इन सभी बातों को मानती हूं, तुम्हारे बाप को भी मना लूंगी। मैं तो उसकी सास के रूप में उसकी बगल में चलते हुए गर्व अनुभव करूंगी। सचमुच ही वह बहुत प्यारी, बहुत अच्छी लड़की है पर जो प्रश्न है, वह तो प्रश्न ही बना रह जाता है। वह कोई अनाथ लड़की तो नहीं जिसे उठा लाओ और यहीं शादी कर लो। उसका तो एक ऐसा परिवार है जो जमीन-आसमान एक कर देगा।'

'कोई जमीन-आसमान एक करके भी मुझसे अलग नहीं कर सकता।'

'पर अभी वह तुम्हारी हुई ही कहां है?'

'क्या सिर्फ शादी के बाद कोई किसीका हुआ करता है?'

'मैं कानूनी बात कर रही हूं।'

सामने की अंधेरी रात को कार की रोशनी चीरती हुई चली जा रही थी। अमित को ऐसा नहीं लग रहा था कि वह गाड़ी चला रहा था। बस, गाड़ी चल रही थी। उसके भीतर के पांचों आदमियों का आभास भी

उसे कम था। वे बातें किए जा रहे थे, अमित उनको सुन नहीं पा रहा था। उसका खयाल दो सीमाओं की दीवारों में टकराकर इधर से उधर हो रहा था। हड़ताल और जातीन···जातीन और हड़ताल !

सुरेन खबर ले आया कि मौसमी कोठी के मजदूरों को धमकी दी गई है कि अगर उनमें से किसी ने हड़ताल में भाग लेने की चेष्टा की तो उनके घर के सारे सामान को बाहर फेंक दिया जाएगा। अमित उसी क्षण वहां पहुंचा। कोठी के मालिक से मिलने की कोशिश की। मालिकों ने खबर भिजवाई कि उनके पास समय नहीं, वह नहीं मिल सकता। अमित को खेत के उस भाग में जाने से भी रोक दिया गया जहां मजदूर काम कर रहे थे। उसने मजदूरों के पास संदेश भिजवा दिया कि वह शाम को पांच बजे चीनी दुकान के सामने वाले [illegible] से मिलना चाहेगा। इसपर भी प्रतिरोध [illegible]। अमित ने पुलिस इंस्पेक्टर को बताया कि कोठी के मजदूर [illegible] हैं, उनसे मिलने का उसे पूरा अधिकार है। [illegible] नहीं मिली। अमित ने अपनी [illegible] ! [illegible] में उसने इंस्पेक्टर से कहा, 'मैं मजदूरों से मिलना [illegible]।'

'आप कानून के खिलाफ [illegible]?'

'कोई नहीं रोक सकता मुझे।'

'हम आपको [illegible] :'

'ठीक है, पर ऐसा करने से [illegible] ऐसा करना आपके लिए [illegible]।'

'आप सोचते हैं कि मुझे [illegible]।'

'सुनते तो नहीं, [illegible] लगा लीजिए।'

पुलिस इंस्पेक्टर को [illegible]

ठीक पांच बजे [illegible] का [illegible]। [illegible] खड़ा रहा। [illegible] दिखाई [illegible]। [illegible]

कोई दो सौ मजदूर सामने आ खड़े हुए।

और पांच मिनट अमित चुप रहा। इसके वाद मजदूरों को सम्वोधित करते हुए वोला :

'किसी वड़े आदमी की मृत्यु पर उसकी आत्मा की शान्ति के लिए एक मिनट का मौन धारण किया जाता है। मैं चाहता हूं कि इससे पहले कि मैं आप लोगों से कुछ कहूं, हम सभी एक मिनट के लिए मौन खड़े रहें। क्योंकि इस कोठी में इन्साफ की मौत हो गई है। इन्साफ वड़ी चीज होती है। उसकी मौत पर हमारे लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम इस परिपाटी को निभा लें।'

और सचमुच लोगों ने एक मिनट का मौन धारण किया।

इसके वाद अमित ने कहना शुरू किया तो उस वक्त तक कहता रह गया जव तक कि अंधेरा गहन न हो गया। शहर छोड़ते वक्त से ही अमित को ऐसा लगा था कि कोई कार लगातार उसकी अपनी कार का पीछा करती आ रही थी। मजदूरों के अधिकार के लिए तो अमित हड़ताल करने जा रहा था। वह आखिरी हथियार था इस लड़ाई का। उसे विश्वास था कि इस हथियार का वार खाली नहीं जा सकता पर उसका अपना यह विश्वास एक अनुत्तरित प्रश्न वनकर रह गया था। हड़ताल को उसका पूरा जीवन मिल पाए तव तो वह सफल होगी और अगर ऐसा नहीं हुआ तो··· ? यह एक लम्वी खामोशी होती, विना स्पन्दन की। इसके साथ अमित की अपनी सांसें भी ठिठक जातीं। और प्रश्न के उत्तर में प्रश्न का ही गूंजन होता :

'कहीं हड़ताल की सम्पूर्णता के पहले मेरी गिरफ्तारी हो गई और···' फिर वही स्पन्दनहीन खामोशी।

आशा भोली थी। उसने कहा था, 'नहीं अमित वह तो तुम्हारी गिरफ्तारी के वाद भी चलेगी। मुझे तो ऐसा भी नहीं लगता कि सरकार तुम्हें गिरफ्तार कर जाने का कच्चा साहस कर पाएगी।' आशा ने यह भी कहा था, 'मजदूरों की लड़ाई को तो तुम हड़ताल करके लड़ रहे हो। अपनी निजी लड़ाई को कैसे लड़ोगे ?'

'निजी लड़ाई ? क्या यह मेरी अपनी लड़ाई नहीं ?'

'मैं उस लड़ाई की बात कर रही हूं जो जितनी तुम्हारी है, उतनी ही जानीन की भी, क्या उसके लिए भी कोई हड़ताल करके पार पा सकोगे ?'

'जाना, आदमी का तो पूरा जीवन ही लड़ाई है। हर ठौर पर एक मोर्चा लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि सभी लड़ाइयों को आदमी एक ही बार लड़े। इतमीनान रखो वह हड़ताल भी होगी, आज न सही, कल।'

आशा के प्रश्न ने उसे विचलित कर दिया था पर चूंकि एक बात को वह प्राथमिकता दे चुका था इसलिए तब तक के लिए उसने उस दूसरी बात को बिसार देना ही ठीक समझा।

उसके पीछे की गाड़ी अब भी उसका पीछा किए आ रही थी। व्यू-मिरर में वह उस रोशनी को देखते आ रहा था। अमित जब आखिरी व्यक्ति को छोड़ने काटेज गांव में प्रविष्ट हुआ तो पीछे की गाड़ी गांव की सीमा पर ही रुक गई। काटेज के मजदूरों के उस नेता से विदाई लेते हुए अमित ने कहा, 'कल सबसे पहले मैं यहीं आऊंगा देवराज ! जानते हो, क्यों ? क्योंकि यह गांव बलिदान का गांव है। यहां मजदूरों पर गोलियां चली हैं। इतिहास इस इतिहास को भूल सकता है, लेकिन आंदोलन इस इतिहास को नहीं भूल सकता। तुम्हें इस बात के लिए गर्व होना चाहिए कि तुम ऐसे स्थल में जन्मे हो, जहां गर्भवती स्त्री ने भी मजदूरों के हक के लिए जान दी है। इस ऐतिहासिक गांव में अगर एक मजदूर भी महल-कर काम के लिए तैयार हो जाता है तो मानसिक स्तर पर हड़ताल को असफल समझो।'

'ऐसा नहीं होगा अमित भैया, हड़ताल सफल होगी।'

गांव के कुत्तों का भौंकना शुरू हो गया था।

अमित ने अपने उस स्वर को सुना जो उसके भीतर [illegible] था, 'जानीन, मैं तुम्हें दुनिया की हर चीज से अधिक प्यार करता हूं मेरे लिए तुमसे अधिक मूल्यवान कोई खजाना है ही नहीं।'

यह अमित का वह स्वर था जो कई बार बाहर आने के लिए [illegible] पर जानीन के सामने होते ही वह दब जाता। एकांत में [illegible] उसे अकेला सुनता रहता।

जानीन की ओर से तर्क के रूप में उसने फिर अपने ही स्वर को

सुना, 'लेकिन तुम तो इस लड़ाई के सामने उस लड़ाई को कोई महत्व ही नहीं दे रहे हो।'

'इस लड़ाई की जीत ही मेरी उस लड़ाई की शक्ति होगी।'

रात ओझल थी एक काले अंधेरे में। देवराज उस वक्त तक रास्ते पर खड़ा रहा जब तक अमित ने कार को घुमा नहीं लिया। कल सुबह के लिए उसे समस्त शुभकामनाएं देते हुए अमित ने एक्सीलरेटर को दबा दिया। गाड़ी ने अभी आधे मील का ही फासला तय किया था कि अमित ने अपने सामने बिन लाइट वाली एक गाड़ी को स्टार्ट होते देखा। वह कार रास्ते के एकदम बीच में चल रही थी। कुछ दूर और जाने के बाद ही उसकी रोशनी जली। कार के नम्बर प्लेट के ऊपर हथेली की चौड़ाई काले कागज का टुकड़ा चिपका हुआ था। वह एक पुरानी डेटसन थी। उसकी चाल इतनी धीमी थी कि अमित को हॉर्न देना पड़ा। कार उसी तरह रफ्तार में बीच रास्ते चलती रही। अमित ने दूसरी बार हॉर्न दिया। कुछ देर और कार उसी तरह से चली और फिर एकाएक बीच रास्ते में रुक गई। दोनों तरफ के बचे हुए रास्ते इतने तंग थे कि उनसे निकल जाना नितान्त असम्भव था।

कार के छिपे नम्बर देखते ही स्थिति अमित की समझ में आ गई थी फिर भी भयहीन वह अपनी सीट पर बैठा रहा।

कार की तरफ से दो-दो आकृतियां सामने आईं। अमित के भीतर जो पहली धारणा बनी थी, गलत निकली। पुलिस नहीं थी। उन आकृतियों की एक धुंधली याद अमित के मस्तिष्क में अब भी थी। चारों आदमी उसकी ओर बढ़ने लगे। अमित ने पूरी स्फूर्ति के साथ कार की गीयर बदलकर पीछे ले जाने की कोशिश की पर इससे पहले···उसकी अपनी कार के आगे का शीशा चकनाचूर हो चुका था। लाइट जलती रही पर अमित के लिए वह रोशनी काली हो चुकी थी। एक जानी-पहचानी काली रोशनी जो उसके लिए उजली रोशनी से भी अधिक जानी-पहचानी थी। नींद की गोलियां लेने के बाद के से वे असर···

एक काला बवण्डर···

कई काली तरंगें···

काले वातावरण में लिपटे एक काले सामीप्य से एक श्वेत खामोशी उसने सुनी :

'अमित···'

'जानीन ?'

'हां, अमित···'

| | | |
|---|---|---|
| कैदी | | |
| लाजो | शांताकुमार | १२.०० |
| षड्यंत्र | " | १६.०० |
| क्षितिज | गुरुदत्त | १६.०० |
| भैरवी चक्र | " | १३.०० |
| धूप-छांह | " | १२.०० |
| महाकाल | " | ११.०० |
| गिरते महल | " | १०.०० |
| प्रतिशोध | " | १०.०० |
| सागर और सरोवर | " | ८.०० |
| जागृति | " | ८.०० |
| प्रवंचना | " | ८.०० |
| पड़ोसी | " | १०.०० |
| प्रारब्ध और पुरुषार्थ | " | ८.०० |
| परिमल | " | ८.०० |
| ऊंचे मकान | " | १०.०० |
| अपने पराये | " | १०.०० |
| प्रगति के पथ पर | " | ८.०० |
| नदी तीरे | " | १०.०० |
| कुमारसंभव | " | १६.०० |
| सागर-तरंग | " | ११.०० |
| कोई एक | " | १२.०० |
| अनुपमा | शुभा वर्मा | १०.०० |
| आहों की वैसाखियां | बलराज मधोक | ९.०० |
| लहू पुकारता है | दिनेश नंदिनी डालमिया | १६.०० |
| | कश्मीरीलाल ज़ाकिर | १४.०० |

## विविध

| | | |
|---|---|---|
| सैलानी की डायरी (यात्रा वृतान्त) | राजेन्द्र अवस्थी | १०.०० |
| सफरनामा (संस्मरण) | अमृता प्रीतम | १०.०० |
| अपने-अपने चार बरस | " | १२.०० |
| वेद पुष्पांजलि | सत्यकाम विद्यालंकार | १०.०० |